

स्वर्गीय ला० बलदेवसिहजी, जैन



ला० रघुवीरसिह जैन

॥ श्री सिद्धचक्रमहिमा ॥

सिद्धचक्र महिमा अगम को करि सकै वखान ।
कोढ़ मिटा श्रीपाल का पाया पद निर्वान ॥

सवैया इकतीसा

सिद्धचक्र सेती भवचक्र चूर चूर होय, सिद्धचक्र सेती मिट जाय भय काल का ।
सिद्धचक्र सेती दुख दारिद न आवै पास, सिद्धचक्र से न रहै टोटा धन माल का ।
सिद्धचक्र सेती भूत व्यंतरी सतावै नाहि, सिद्धचक्र सेती विष व्यापै नहिं व्याल का ।
सिद्धचक्र सेती पुत्र पौत्र परिवार बढ़ै, सिद्धचक्र से समुद्र रूप धरै ताल का ।
सिद्धचक्र सेती मरी मृगी प्लेग रोग भगें, सिद्धचक्र सेती मिटि जाय दर्द भाल का ।
सिद्धचक्र सेती इन्द्र चंद्र धरणेन्द्र होय, कहा लों वखानूं यह पाठ है कमाल का ।
कातिक फागुन साढ़ अंत आठ दिन माहि, करै भव्य जीव काटै फंद कर्म जाल का ।
मन वच काय सेती कियो मैना सुन्दरि ने, मेटि दियो कुष्ट रोग पति शिरीपाल का ।

मक्खनलाल जैन, देहली ।



भूमिका

गृहस्थाश्रम में अनेक प्रणालियों से अशुभ आस्रव होता रहता है। उस अशुभ आस्रव को रोकने के लिये गृहस्थ के लिये दान और पूजा ये दो कार्य मुख्य वतलाये हैं। पूजन करने में शुभ राग होता है उस शुभरागके कारण शुभ आस्रव होता है, इतना ही नहीं किन्तु अनेक कवियोंने अपनी कवितामें ऐसा वीतरागभाव भी वहुत सुन्दरता से रख दिया है जिसको पढ़ते हुए तथा उसके भाव पर मनोभाव लगाते हुए परिणामों में वीतराग परिणति की धारा वहने लगती है। जो कि परम्परा से पुजारी को पूज्य वनाने में सहायक होती है।

पूजन चार प्रकार की है- १-नित्यमह, २-चतुर्मुख, ३-आष्टान्हिक, ४-कल्पवृत्त। इनमें से हमारे लिये इस समय आष्टान्हिक पूजन विशेष महत्व रखती है। यह पूजन आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुण मासके अंतिम आठ दिनों में की जाती है इसी कारण इस पूजनका नाम 'आष्टान्हिक' (अष्ट [आठ]+आन्हिक [दिनोंकी] यानी आठ दिन वाली) है। इन दिनों में इन्द्र अपने देवपरिकर समेत नन्दीश्वरद्वीप के ५२ अकृत्रिम जिनालयों में वड़े मनोमोहक उत्सवके साथ पूजन करता है। उसी के अनुरूप हम लोग भी नन्दीश्वर द्वीप के ५२ जिन मन्दिरों की परोक्ष पूजन करते रहते हैं।

इसके सिवाय इन ही आष्टान्हिक पर्वों में सिद्धचक्र विधान भी अपनी शक्ति उत्साह के अनुरूप कहां-कहां पर किया जाता है। सर्व कर्मविनिर्मुक्त, निरंजन, अमल एक सिद्ध भगवान का पूजन ही वहुत भारी फल-दाता हैं फिर समस्त सिद्धोंका पूजन विधान (सिद्ध+चक्र [समूह]+विधान=समस्त सिद्धों का पूजन) तो अचिंत्य शुभ फल को देता है। इसी सिद्धचक्र विधान से मैनासुन्दरी ने अपने पति श्रीपालका तथा उसके साथी वीरों का कुष्ठरोग दूर किया था। अतः सिद्धचक्र विधान अचिन्त्य महत्वशाली है।

गत वर्ष (वीर सं० २४७४) श्री अतिशयक्षेत्र महावीर जी पर फागुन की अष्टान्हिकामें सिद्धचक्रविधान कराने के लिये श्रीमान ला० पीतमचन्द्र जी देहली वाले मुझको महावीर जी लिवा ले गये थे। उस समय सूरत

की छपी हुई सिद्धचक्र विधान की दो प्रतियां तथा एक लिखित प्रति हमारे सामने थी वे तीनों प्रतियां अनेक स्थलों पर एक दूसरी से मेल न खाती थीं तथा उनमें अनेक मोटी मोटी अशुद्धियां थीं।

उस समय जैना वाच कम्पनी देहली के मालिक श्रीमान ला० रघुवीरसिंह जी का यह विचार हुआ कि सिद्धचक्रविधान का ठीक संशोधन कराकर प्रकाशन किया जावे और प्रत्येक मंदिर को एक एक प्रति विनामूल्य भेंट की जावे। तदनुसार सिद्धचक्रविधान के संशोधन के लिये उन्होंने मुझको प्रेरित किया। आवश्यकता का अनुभव करके मुझे भी संशोधन करने का उत्साह हुआ।

तदनुसार हमने सिद्धचक्रविधान की ८ प्रतियां एकत्र कीं। दो प्रतियां सूरत की छपी हुई थीं प्रथम वार और द्वितीयवार की। एक इन्दौर की छपी हुई प्रति थी जिसमें केवल समर्पण मंत्र (ॐ ह्रीं...) हैं। एक संस्कृत श्लोकवद्ध लिखित प्रति थी तथा चार प्रतियां कविवर सन्तलाल जी के भाषाछन्दो-वद्ध थीं।

सूरत की प्रथमवार की छपी हुई प्रति में वहुत अशुद्धियां थीं। दूसरी वार की छपी हुई प्रतिमें अपेक्षाकृत कम अशुद्धियां थीं किन्तु फिर भी अनेक खटकने योग्य अशुद्धियां रह गई थीं।

जैसे कि—

पूजा	पृष्ठ	छंद	द्वितीय वार सूरत की छपी
३	२३	११	'ॐ ह्रीं' नहीं छपी
४	४१		महार्घ का दोहा और 'ॐ ह्रीं' नहीं है
६	८४	५८	'ॐ ह्रीं' नहीं है
.६	८६	६६	'ॐ ह्रीं' नहीं है
७	१५८	२२१	'ॐ ह्रीं' नहीं है

पूजा ७ पृष्ठ १७७ पर छंद ३२५ यों है,
'हम सोवत हैं निरमोही' देखे देखत तुम को ही'
यहा हमने छंद बदला है

हम सोवत हैं नितमोही, निरमोही लखें तुमको ही ।

पूजा आठवीं छंद ६७० यों है

द्वादश प्रकृति अशेष हैं, तौलों मोक्ष न होय,

यह वाक्य बिलकुल सिद्धांत विरुद्ध है हमने इसे इस प्रकार बदला है

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, तौलौं मोक्ष न होय । इत्यादि अनेक त्रुटियों का सुधार किया है ।

इस ग्रंथ के संस्कृत मंत्रों के संशोधन में अकलंक प्रेस के मालिक पं० अजितकुमार जी शास्त्री ने भी पर्याप्त सहयोग दिया है ।

इस प्रकार इस ग्रन्थके प्रकाशनमें अपनी ओर से सावधानी रखी है, जहां पर जो त्रुटि ज्ञात हुई उसका सब प्रतियों से मिलान करके यथासंभव सुधारण किया है । फिर भी यदि कोई अशुद्धि रह गई हो तो विद्वान पाठक सूचना देकर अनुगृहीत करें ।

जैना वाच कम्पनी के मालिक श्रीमान ला० रघुवीरसिंह जी देहली जैनसमाज के एक गणनीय व्यक्ति हैं धार्मिक सामाजिक कामों में वे तत्पर रहते हैं । उन्होंने यह ग्रन्थ बहुत उत्साह से छपवाया है । ग्रन्थ अधिक से अधिक सुन्दर, स्थायी और उपयोगी बने इस विचार से उन्होंने इस ग्रन्थ के प्रकाशनमें न केवल अपना द्रव्य ही दिया है किन्तु पर्याप्त समय भी दिया है । तथा गत फाल्गुण मासकी अष्टान्हिका में स्थानीय लालमंदिर में सिद्धचक्रविधान बहुत अच्छे समारोह से कराया । इस ग्रन्थ के प्रकाशन और सिद्धचक्रविधान कराने में आपने अच्छा द्रव्य व्यय किया है । विधान के समय के चित्र इसी ग्रंथ में अन्यत्र हैं ।

निवेदक—

मक्खनलाल जैन

देहली

❀ सिद्धचक्रविधान करने की विधि ❀

अनेक भाई सिद्धचक्रविधान विधि सहित करना चाहते हैं किन्तु विधि से अनभिज्ञ होने के कारण तथा विधिके जानकार योग्य विद्वान का सुभीता न पाकर अपनी इच्छा पूर्ण नहीं कर पाते उन भाइयों की सुविधा के लिये हम यहां पर सिद्धचक्रविधानकी विधि लिखे देते हैं।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म-वाचकं परमेष्ठिनः। सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्। सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥

सिद्धचक्रविधान एक बड़ा और महान विधान है यह विधान प्रतिष्ठाविधान से कुछ कम नहीं है, इसका फलभी महान है। यह विधान बड़े बड़े कष्टों को दूर करता है, इसके करने से महान पुण्य का बंध होता है और परम्परासे अंतिम मोक्षसुखका देने वाला है। यह वही विधान है जो मैनासुन्दरी ने किया था जिसके प्रभाव से श्रीपाल तथा उनके सात सौ साथियों का कुष्ठ रोग दूर हुआ और अनेक प्रकार के सांसारिक सुख भोगते हुये मोक्ष को प्राप्त हुए। इसलिये यह विधान मन वचन कायकी शुद्धतापूर्वक भक्तिभाव से करना चाहिये। गृहस्थियों के लिये पूजा चार प्रकारकी होती है ऐसा प्रतिष्ठापाठों में कहा है—चतुर्मुख, नित्यार्चन, कल्पवृक्ष और आष्टान्हिक

आष्टान्हिक पूजा में अनेक पूजाएँ हैं। जैसे कि

ऐन्द्रध्वजं शान्तिकसिद्धचक्रत्रैलोक्यकोटीगुणकादिकार्चा।
मूर्च्छां धनेषु प्रतिहत्य भक्त्या कृतेति साष्टान्हिकनामभाज्या ॥

इन्द्रध्वज, महाशान्तिक, सिद्धचक्र, त्रैलोक्य–विधान तथा कोटिगुण आदिपूजा हैं। इनको धनवैभव से ममत्व दूर करके भक्तिभाव से करे सो आष्टान्हिक पूजा है।

इस श्लोक से यह सिद्ध होता है कि इस सिद्धचक्रविधान को आष्टान्हिक पूजाओं में महान विधान माना गया है। इसलिये इस विधान का करने वाला यजमान और यजमान के साथी संयोजक पात्र तथा विधान कराने वाला आचार्य (पण्डित) ये तीनों अच्छे योग्य होने चाहियें। अब प्रथम यजमान का स्वरूप कहते हैं कि विधान करने वाला कैसा हो—

विनीतो बुद्धिमान् प्रीतो न्यायोपात्तधनो महान् । शीलादिगुणसम्पन्नो यष्टा सोऽत्र प्रशस्यते ॥

अर्थात्-विनयवान, बुद्धिमान, प्रीतियुक्त, न्यायसे धन उपार्जन करनेवाला, शीलादिगुणों से संयुक्त यजमान (विधान करने वाला) प्रशंसनीय है। तथा—

न्यायोपजीवी गुरुभक्तिधारी, कुत्सादिहीनो विनयप्रपन्नः ।
विप्रस्तथा क्षत्रियवैश्यवर्गो व्रतक्रियावन्दनशीलपात्रः ॥
श्रद्धालुदातृत्वमहेच्छुभावो ज्ञाता श्रुतार्थस्य कषायहीनः ।
कलंकपंकोन्मदतापवाद–कुकर्मदूरोऽर्हदुदार–बुद्धिः ॥

अर्थात्—न्यायमार्गसे आजीविका वाला, गुरुका भक्त, निन्दादिक अपवादों से रहित, विनय-सम्पन्न, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यवर्गों में से यानी द्विज, क्रिया वन्दना आदिमें सावधान, शीलका पात्र, श्रद्धालु उदार दाता, महान कार्यका इच्छुक, शास्त्रका ज्ञाता, कषाय रहित, कलंक पंकसे रहित, मद उन्माद से रहित, कुकर्म से रहित और अर्हद्धर्म का श्रद्धालु उदार बुद्धि ऐसा यजमान होना चाहिये।

आचार्य (विधान कराने वाला विद्वान) का लक्षण—

दर्शनज्ञानचारित्र–संयुतो ममतातिगः । प्राज्ञः प्रश्नसहश्चात्र गुरुः स्यात् शान्तिनिष्ठितः ॥

अर्थात्—सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रसे संयुक्त, ममतासे रहित, विद्वान, प्रश्नको सहन करनेवाला और क्रोधरहित शान्तचित्त आचार्य हो। तथा—

स्याद्वादधुर्योऽक्षरदोषवेत्ता, निरालसो रोगविहीनदेहः ।
प्रायः प्रकर्त्ता दमदानशीलो, जितेन्द्रियो देवगुरुप्रमाणः ॥

अर्थात्—स्याद्वाद विद्या में प्रवीण, अक्षर के उदात्त अनुदात्त आदि दोषों का जानने वाला, आलस्यरहित

नीरोग, क्रियाकुशल, दमी, ज्ञानी, शीलवान, इन्द्रिय विजेता, देवशास्त्र गुरु को प्रमाण मानने वाला आचार्य होना चाहिये। तथा—

बाल नहीं होय, नहीं वृद्ध, नहीं हीन अंग, क्रोधी क्रियाहीन नहिं मूरख गनीजिये।
दुष्ट नहिं होय, नहीं व्यसन विषै सुरत, पूजा पाठ बांचने में बुद्धि सार लीजिये॥
दया करि भीगि रह्यो हृदय कमल जास, सुन्दर सरूप पाय दान सदा दीजिये।
मीठे हैं वचन मुखअक्षर सपष्ट कहै, गहै विनै गुरुकी सो पंडित कहीजिये॥

विधान कराने वाला पंडित ऐसा होना चाहिये।

विधान का स्थान

मंदिर जी में किसी बड़े स्थान में जहां बहुत स्त्री पुरुष बैठ सकें ऐसे साफ स्वच्छ दीर्घ स्थान में बड़ा मंडल माड़ा जाय और उसे खूब सजाया जाय जैसे कि कहा है—

मंडप लक्षण

निर्मलं पृथुलं घंटातारिकातोरणान्विता—। प्रलंबपुष्पमालाढ्यं चतुर्धाकुम्भसंयुतम्।
भेरीपटहकंसालतालमार्दननिस्वनैः। श्रीकुलीनस्त्रीगीताढ्यं मंडपं कारयेद् बुधः॥

अर्थात्—मंडप साफ निर्मल, स्वच्छ तथा पर्याप्त बड़ा हो, घंटा पताका तोरणों से युक्त हो, वन्दनवार लगी हुई हो, पुष्पमालायें लटकती हों, जिसके चारों कोनों में चार कलश रक्खे हुये हों, जहां भेरी मृदंग, झांझ मजीरा आदि बाजों के साथ कुलीन स्त्रियां मंगलगीत गाती हों।

मंडप पूरने की विधि

मंडल पूरने के लिये चार चौकी कम से कम ९ फुट लंबी चौड़ी हों यानी मांडला तीन गजका हो।

चौकियोंपर एक मोटी साफ धुली हुई चादर बिछा कर सब तरफ से कस देनी चाहिये जिससे झोल सरवट न रहे। उस चादर पर ९ गोल चक्र एक दूसरे को घेरे हुए हों बीच का चक्र इतना बड़ा हो कि जिसपर एक चौकी आजाय बाकी आठ खानों में पंच रंगके रंगे हुये क्रम से ८–१६–३२–६४–१२८–२५६–५१२–१०२४ पुंज रक्खे।

मांडला पंचवर्णके चांवलों से नीचे रोली बिछा कर साफ पूरना चाहिये इसपर चांदीके फूल तथा भोडल का चूरा बखेर कर अच्छा चमकदार कर देना चाहिये। मांडले पर ८वें (१०२४ वाले) चक्रके बाद आठों दिशाओं में क्रम से वर्णमालाके अक्षर लिखने चाहिये। पूर्वमें अ, आ आदि १६ स्वर, आग्नेय में क ख ग घ ङ, दक्षिणमें च छ ज झ ञ, नैऋत्यमें ट ठ ड ढ ण, पश्चिममें त थ द ध न, वायव्य में प फ ब भ म, उत्तरमें य र ल व, ईशान में श ष स ह इस प्रकार ४९ अक्षर लिखने चाहिये। मांडले के चारों कोनों में रोली बिछा कर अच्छे बेलबूटे बनाने चाहिये और इनपर चार लोटे जिनमे पांच पांच हल्दीकी गांठ, पांच २ सुपारी, एक छोटीसी चांदीकी डली, पंच रत्न या नवरत्नकी एक एक पुड़िया, थोड़ा थोड़ा मेवा, थोड़ी सी दूब डालकर एक एक नारियल से ढककर ऊपर से लाल कपडा लपेटकर कलावे से बांध देना चाहिये चारों लोटों को चारों कोने में रखकर फिर कलावे से एक लोटे को दूसरे लोटे तक और दूसरे से तीसरे चौथे तक तीन बार लपेट देना चाहिये। यानी फेर लगाकर बांध देवें।

सबसे पहला जो बीचका चक्र है उसमें ॐ बनाकर उसपर एक चौकी रक्खे उसपर एक सिंहासन रखकर सिद्ध यंत्र विराजमान करे चौकीके आगे एक स्थापना का ठोना रक्खे तथा चौकी के बराबर एक लोटा रक्खे मांडले के ऊपर एक सुन्दर चंदोवा बांधे जो चारो तरफ छड़ों से खूब तना हुआ हो उसमें चमर छत्र तथा कागज के फूलों की मालायें लटका कर अच्छा सजा दे। सिद्धयंत्रके ऊपर तीन या एक छत्र लगावे। इस प्रकार मांडला बनावे फिर वेदी मांडले के दक्षिण या पश्चिम में लगावे जिसमें भगवान को विराजमान करे जिससे भगवान का मुख पूर्व या उत्तर को रहे। वेदी के पास एक अखंड दीपक जलावे जिसकी अखंड ज्योति पाठकी समाप्ति तक रहे उसमें प्रति दिन घी देता रहे। अखंड दीपक जलाते समय यह मंत्र पढ़े "ॐ ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं संस्थापयामि" वेदी पर शास्त्र जी तथा अष्टमंगल द्रव्य रक्खे।

जपकी विधि

जप के लिये भी एक बड़े स्वच्छ स्थान की आवश्यकता है जो वेदी मंडपके समीप ही हो जिसमें जप करने वाले निराकुलता से बैठ सकें। जप कमसे कम ८००० हों लेकिन जिनका उत्साह अधिक हो और जप करने वाले भी पर्याप्त हों उन्हें सवा लाख जप करने चाहिये सवालाख जपके लिये पांच या सात व्यक्ति होने चाहिये जोकि जप और विधान में सम्मिलित हों उन्हें ९ दिन तक ब्रह्मचर्य से रहना चाहिये, शुद्ध मर्यादित भोजन करना चाहिये तख्त या पृथ्वी पर सोना चाहिये, अधिक इधर उधर न घूमना चाहिये। जप प्रातः शाम दोनों समय होंगे। जपकरने वाले जपके समय नये केसरिया धोती दुपट्टे तथा बनियान पहनें जो प्रतिदिन धुले हुये हों। जपके लिये जितने व्यक्ति हों उतने बैठने के लिये डाभ के आसन हों, जप करने वालोंके आगे एक एक नया पाटा हो जिस पर एक एक घृत का दीपक जलता रहे और एक एक धूपदान रहे जिस में धूप रखी जाये एक एक सूत की माला हाथ में हो जिस के द्वारा मंत्र जपा जाय। पाटेपर प्रत्येक व्यक्ति लौंगें गिन गिन कर धर ले जब एक माला हो जाय तब एक लौंग अग्नि में डालदे और कुछ धूप खे दे। जब जप करके उठे तो जिन जिन व्यक्तियोंने जितनी जितनी माला जपी हो सब एक कापी में लिखदें जिससे मंत्र जप संख्या में भूल न हो और आसानी से गणना हो जाय। विधान प्रारंभ करते समय आचार्य शुद्धि विधान करावे। वह इस प्रकार है—

प्रथम केसरिया वस्त्र पहन कर कुलाङ्गनायें पांच या सात सुहागनी स्त्रियां जल भर कर लावें वह जल ऐसा हो—

गंगादितीर्थोद्भववारिशीतं मुहूर्तमात्रे परिगालितं वा।
सत्प्रासुकं वस्त्रवितानगूढं पात्रेभृतं शुद्धतरे विशुद्धम्॥

अर्थात्—जल ऐसा हो जो गंगादि तीर्थों से उत्पन्न, शीतल एक मुहूर्त मात्र का छाना हुआ तथा प्रासुक किया हुआ, स्वच्छ वस्त्र से ढका हुआ शुद्धपात्रमें भरा हुआ हो, ऐसे जलके कलशों को एक संदली पर रक्खे और एक थाल में अच्छी सामग्री बना कर रक्खे।

प्रथम जलको मंत्रों से शुद्ध करे तब हाथ में चन्दन लेकर कलशों पर छिड़के और आचार्य यह मंत्र पढ़े।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते पद्ममहापद्मतिगिंछकेसरिपुण्डरीकमहापुण्डरीक—गंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूला—रक्तारक्तोदापयोधिशुद्धजलसुवर्णघटप्रक्षालितनवरत्नगंधाक्षतपुष्पार्चितमामोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झ्रौं झ्रौं वं वं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा ॥

इस प्रकार जल शुद्ध करने के बाद अंगशुद्धि वस्त्रशुद्धि, सकलीकरण दिग्बंधनादि कार्य करावे।

प्रथम अंगशुद्धि के लिये निम्न श्लोक और मंत्र को पढ़ कर सबके अंग पर सुगंधित जल छिड़के।

अंग शुद्धि

सौगंध्यसंगतमधुव्रतझंकृतेन संवर्ण्यमानमिव गंधमनिन्द्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यं पादारविंदमभिवंद्य जिनोत्तमानाम् ॥

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा ॐ ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः असिआउसा अस्य सर्वाङ्गशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ॥ गन्धं आरोपयामि ॥ (सब अपने शरीर पर हाथ फेरें)

वस्त्र शुद्धि

निम्नलिखित श्लोक पढ़कर धोतीको शुद्ध करें (हाथ लगावें)

धौतान्तरीयं विधुकान्तिसूत्रैः सद्ग्रन्थितं धौतनवीनशुद्धम्।
नग्नत्वलब्धिर्न भवेच्च यावत् संधार्यते भूषणमूरुभूम्याः ॥

निम्नलिखित श्लोक पढ़कर दुपट्टा शुद्ध करें (हाथ लगावें)

मंव्यानमंचद्दशया विभान्तमखंडधौताभिनवं मृदुत्वम् ।
संधार्यते पीतसितांशुवर्णमंशोपरिष्टाद् धृतभूषणांकम् ॥

तिलक

फिर ९ तिलक लगावें जैसा कि कहा है—

पात्रेऽर्पितं चंदनमौषधीशं शुभ्रं सुगंधाहृतचंचरीकं ।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्यं न केवलं देहविकारहेतोः ॥

नव तिलक कहां लगावे सो लिखते हैं—

शिखा शीस की जान ललाट गनोजिये, कंठ हृदय अरु कान भुजा शुभ लीजिये ।
कूखि हाथ अरु नाभि सरस शुभ कीजिये, तव जिनवर को जजै तिलक नव दीजिये ॥

इस प्रकार नव तिलक लगाते समय यह मंत्र पढ़ें

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा मम सर्वाङ्गशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।

रक्षा बन्धन

फिर पंच वर्ण के कलावे की डोरी बांधे जिसे रक्षाबंधन कहते हैं । तब निम्न लिखित श्लोक और मंत्र पढ़े

सम्यक् पिनद्धनवनिर्मलरत्नपंक्तिरोचिर्बृहद्वलयजातबहुप्रकारं ।
कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेशपूजाविधानललिते स्वकरे करोमि ॥

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं रक्ष रक्ष स्वाहा इति कंकणं अवधारयामि

यज्ञोपवीत धारण

फिर यज्ञोपवीत धारण करे तब निम्न लिखित श्लोक और मंत्र पढ़े ।

पूर्वं पवित्रतरसूत्रविनिर्मितं यत् प्रीतः प्रजापतिरकल्पयदंगसंगि ।
सद्भूषणं जिनमहे निजकंठधार्यं यज्ञोपवीतमहमेष तदाऽऽतनोमि ॥

ॐ नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायार्हं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा ।

मुद्रिका धारण

कनिष्ठा उंगली में मुद्रिका पहने या चन्दनका निशान लगावे तब यह श्लोक पढ़े

प्रोत्फुल्लनीलकुलिशोत्पलपद्मरागनिर्जत्करप्रकरबन्धसुरेन्द्रचाप ।
जैनाभिषेकसमयेऽगुलिपर्वमूले रत्नांगुलीयकमहं विनिवेशयामि ॥

ॐ ह्रीं रत्नमुद्रिकां अवधारयामि स्वाहा ।

मुकुट धारण

फिर शिरपर मुकुट बांधे या चन्दन का निशान लगावे तब यह मंत्र पढ़े ।

पुन्नागचंपकपयोरुहकिंकरातजातिप्रसूननवकेशरकुन्दमाद्यम् ।
देव ! त्वदीयपदपंकजसत्प्रसादात् मूर्ध्नि प्रणामवति शेखरकं दधेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मुकुटं अवधारयामि स्वाहा

कुंडल धारणं

अब कानों में कुंडल पहने या चन्दन का निशान लगावे तब यह श्लोक पढ़े

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या ।
रूपं परावृत्य च कुण्डलस्य मिषादवाप्ते इव कुण्डले द्व ॥

ॐ ह्रीं कुंडलं अवधारयामि स्वाहा

हार धारण

फिर हार पहने या चन्दन का निशान लगावे तब यह श्लोक पढ़े

मुक्तावलीगोस्तनचन्द्रमाला–विभूषणान्युत्तमनाकभाजां ।
यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मीसमालिंगनकृद्दधेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं हारं अवधारयामि स्वाहा

इस प्रकार सर्वांग शुद्धिके साथ यजमान की इन्द्र संज्ञा होती है ।

भूमि शुद्धि विधान

यजमान तथा अन्य पात्र डाभ के पूले से हवन, पाठ तथा जपकी भूमि को झाड़ें तब यह मंत्र पढ़ें

ॐ ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्नविनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा

इसके बाद डाभ पूले को जल में भगोकर भूमिपर छिड़के तब यह श्लोक और मंत्र पढ़े

ये सति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदर्पयुता विबोधाः ।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य (जपनस्य) भूमिम् ॥

ॐ क्ष्रां क्ष्रीं क्ष्रूं क्ष्रौं क्ष्रः ॐ ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं तं पं स्वं झं झं यं क्षः फट् स्वाहा

इसके बाद मंडप रक्षार्थ चार प्रकार के देव तथा दिक्पालों को बुलावे और पुष्पक्षेपण करे

चतुर्णिकायामरसंघ एष आगत्य यज्ञे विधिना नियोगम् ।
स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हदेशे सुस्था भवंत्वान्हिककल्पनायाम् ॥

हे जिनभक्त चतुर्णिकाय देवो! तुम हमारे इस यज्ञमें पधार कर यथायोग्य विधिपूर्वक अपने नियोग को अंगीकार कर तिष्ठो और अपनी जिन भक्ति रूप सेवा में सावधान होहु । (यह पढ़कर पुष्पक्षेपण करे)

फिर पवनकुमार जाति के देवों को कहे और पुष्पक्षेपण करे

आयात मारुतसुराः पवनोद्भटाशाः, संघट्टसंलसितनिर्मलतांतरोत्ताः ।
वात्यादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां, प्रत्यूहकर्मनिखिलं परिमार्जयन्तु ॥

हे पवनकुमार देवो! तुम अपनी उद्भट पवन के द्वारा दशों दिशा और आकाश तथा भूमि को निर्मल करने वाले हो। हमारे इस यज्ञ में आओ और वायुसंबंधी समस्त दोषों को दूर करो। हमारे यज्ञ–संबंधी विघ्न नाश करो। फिर वास्तुकुमार जाति के देवों को कहे और पुष्पक्षेपण करे।

आयात वास्तुविधिभूद्भटसन्निवेशा योग्यांशभागपरिपुष्टवपुःप्रदेशाः ।
अस्मिन्मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥

हे वास्तुकुमार जाति के देवो! तुम अपना योग्य अंश विभाग करि पुष्ट देह संयुक्त इस हमारे यज्ञ विधान मे सुन्दर भूषणों से सज्जित होकर जिनेन्द्र की भक्ति पूर्वक पधारो, तिष्ठो, योग्य स्थान में सन्निवेश करो—

फिर मेघकुमार जाति के देवों को कहे और पुष्पक्षेपण करे

आयात निर्मलनभःकृतसन्निवेशा मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन्मखे विकृतविक्रियया नितांते सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥

हे मेघकुमार जाति के देवो ! तुम निर्मल आकाश के धरणहारे हमारे इस यज्ञ विधान में आओ और अपनी विक्रिया तथा आनन्द युक्त जिनेन्द्र की भक्ति में सावधान हो तिष्ठो और मेघ संबंधी विघ्न दूर करो।

फिर अग्निकुमार देवों को कहे और पुष्प क्षेपे

आयात पावकसुराः सुरराजपूज्य—संस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः ।
स्थाने यथोचितकृते परिवद्धकक्षाः संतु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥

हे अग्निकुमार जाति के देवो ! यह इन्द्रों कर पूज्य जिनेन्द्र का यज्ञ विधान है इसमें तुम आओ तुम अपनी संस्कार रूप क्रिया के योग्य हो अपने योग्य स्थान में कटिबद्ध होहु और इस पुण्य समाज की शोभा बढाओ तथा अग्नि संबंधी विघ्न दूर करो। फिर नागकुमार देवों को कहे और पुष्पक्षेपण करे।

नागाःसमाविशत भूतलसंनिवेशाः स्वां भक्तिमुल्लसितगात्रतया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः स्वस्था भवंतु निजयोग्यमहासनेषु ॥

हे नागकुमार देवो ! तुम यहां समावेश करो तुम पृथ्वी तल में रहने वाले हो तुम अपनी भक्तियुक्त विक्रिया को प्रकाशित करते हुये आशीविष (सर्प) कृत उपद्रवों को दूर करो और अपने योग्य स्थान पर तिष्ठो।

फिर दशों दिक्पालों के लिये पुष्प क्षेपण करे। तब यह श्लोक पढ़े और दशोंदिशाओं में पुष्प क्षेपे।

इन्द्राग्निदंडधरनैऋतपाशपाणि—वायूत्तरेण शशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिन्हाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥

ॐ इन्द्रायस्वाहा, ॐ अग्नये स्वाहा, ॐ यमाय स्वाहा, ॐ नैऋत्याय स्वाहा, ॐ वरुणाय स्वाहा, ॐ पवनाय स्वाहा, ॐ धनदाय स्वाहा, ॐ ईशानाय स्वाहा, ॐ धरणेन्द्राय स्वाहा, ॐ सोमाय स्वाहा।

इसके बाद इस मंडल की वेदी में जिनभगवान की प्रतिमा विराजमान करनी हो उन्हें पुरानी वेदी से लाकर एक संदली पर विराजमान करे और उपर्युक्त प्रासुक जल से प्रभु का न्हवन करै तब यह श्लोक पढे और

भगवान के शीस पर जल धारा दे

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटी–संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै भंक्त्या जलैर्जिनपतिं वहुधाभिषिंचे ॥

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपालुसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकर–परमदेवाभिषेकसमये आद्यानां आद्य जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे······देशे······नाम्नि नगरे······श्रीशुभसम्वत्सरे······सम्वत्सरे······मासानामुत्तमे मासे······मासे······पक्षे······पर्वणि······शुभदिने मुनिआर्यिकाश्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः । यह पढ़ता हुआ भगवान के शिर पर जल धारा दे—अगर कल्याणक बोलने हों तो उन्हें पढ़ले अगर विशेष शान्तिधारा देनी हो तो अन्यत्र है वहां से पढ़े । फिर भगवान को वेदी में विराजमान करे । इसके बाद सिद्धयन्त्रका प्रक्षाल करे तब यह मन्त्र पढ़े ।

(ॐ भूर्भुवः स्वरिह एतद्विघ्नौघवारकं यन्त्रमहं परिषिंचयामि) इस प्रकार न्हवन करके यन्त्र को मांडले के सिहासन पर विराजमान करदे इसके बाद जपस्थानमें जाकर आचार्यके दियेहुये निम्न लिखित मन्त्रोंमेंसे किसी एक मन्त्र की एक एक या दो दो मालायें फेरे ।

'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा' अथवा 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' फिर भगवानके सामने नित्य पूजायें तथा पाठका आरम्भ करै तब यह श्लोक पढकर भगवानसे प्रार्थना करे

श्रीमन्मंदरमस्तके शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षते, पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं त्वत्पादपुष्पस्रजं ।
इन्द्रोहं निजभूषणार्थममलं यज्ञोपवीतं दधे, मुद्राकंकणशेखरानपि तथाजैनाभिषेकोत्सवे ॥

हे भगवन् ! मैं शुद्ध जल से प्रक्षालन किये हुये और दर्भ अक्षत आदि से सुशोभित तथा मेरुपर्वत के समान पवित्र सिंहासन पर भगवान अर्हंतदेव को स्थापन करता हूं । तथा आपके चरण कमलों की पवित्र माला को धारण कर अपने में इन्द्र की कल्पना करता हूं तथा आपका अभिषेक करने के समय इन्द्र के समान अपने शरीर

को सुशोभित करने के लिये मुकुट कंकण कुंडल यज्ञोपवीत तिलक आदि सब आभूषण धारण करना है।

यह कहकर नित्यनियम, पंचमेरु, नन्दीश्वर आदि तथा वेदीमें विराजमान तीर्थंकरको पूजन करके यंत्र की पूजा करे। इस प्रकार आठ दिन तक विधान करे तथा सुबह शाम जप करे और भगवान की आरती तथा गाना बजाना आदि उत्सव करे। पूर्णमासी को पाठ पूरा हो जाने पर प्रतिपदा को यज्ञ करे।

यन्त्र-पूजा

परमेष्ठिन् जगत्त्राणकरणे मङ्गलोत्तम। शरणा इह तिष्ठतु मे सन्निहितोऽस्तु पावनाः ॥

ॐ ह्रीं अर्हन् असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताअत्रवतरतारावतरत संवौषट् आह्वानम्। ॐ ह्रीं अर्हन् असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्॥ ह्रीं अर्हन् असिआउसा मङ्गलोत्तमशरणभूताः अत्र मम सन्निहिता भवत २ व वट् सन्निधानम्॥

पंकेरुहायातपरागपुञ्जसौगन्ध्यमद्भिः सलिलैः पवित्रैः। अर्हत्पदाभाषितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पचपरमेष्ठिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरकर्पूरकृतद्रवेण, संसारतापापहृतौ युतेन। अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यः सुगन्धं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्यक्षतैरक्षतमूर्तिमद्भिरब्जादिवासेन सुगन्धिमद्भिः। अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्य. पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कदम्बजात्यादिभवैः सुरद्रुमैर्जातैर्मनोजातविपाश दक्षैः। अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्य. पचपरमेष्ठिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पीयूषपिण्डैश्च शशांककांतिस्पर्द्धिभिरिष्टैर्नयनप्रियैश्च। अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्य पंचपरमेष्ठिभ्यो नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥

ध्वस्तांधकारप्रसरैः सुदीपैर्घृतोद्भवै रत्नविनिर्मितैर्वा। अर्हत्पदाभाषितमङ्गलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पंचपरमेष्ठिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

स्वकीय धूमेन नभोवकाश–व्यापद्भिरुद्यैश्च सुगंधधूपैः । अर्हत्पदाभाषितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्य पंचपरमेष्ठिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नारंगपूगादिफलैरनर्घ्यैर्हृन्मानसादिप्रियतर्पकैश्च । अर्हत्पदाभाषितमंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्य. पंचपरमेष्ठिभ्य फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अंभश्चंदननंदनाक्षततरूद्भूतैर्निवेद्यैर्वरैः । दीपैर्धूपफलोत्तमैः समुदितैरेभिः सुवर्णस्थितैः ॥

अर्हत्सिद्धसुसूरिपाठकमुनीन्, लोकोत्तमान्मंगलान् । प्रत्यूहौघनिवृत्तये शुभकृतः, सेव्ये शरण्यानहम् ॥

ॐ ह्रीं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्य पंचपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ प्रत्येक पूजनम् ।

कल्याणपञ्चककृतोदयमाप्तमीश–मर्हंतमच्युतचतुष्टयभासुरांगम्,

स्याद्वादवागमृतसिन्धुशशांककोटि–मर्चे जलादिभिरनंतगुणालयं तम् ॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयसमवशरणादिलक्ष्मीबिभ्रते अर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कर्माष्टकेध्मचयमुत्पथमाशु हुत्वा सद्ध्यानवह्निविसरे स्वयमात्मवन्तम् ।

निश्रेयसामृतसरस्यथ संनिनाय, तं सिद्धमुच्चपददं परिपूजयामि ॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मकाष्ठगणभस्मीकृते सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

स्वाचारपंचकमपि स्वयमाचरंति, ह्याचारयंति भविकान् निजशुद्धिभाजः ।

तानर्चयामि विविधैः सललादिभिश्च प्रत्यूहनाशनविधौ निपुणान् पवित्रैः ॥

ॐ ह्रीं पंचाचारपरायणाय आचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अंगांगबाह्यपरिपाठनलालसाना—मष्टांगज्ञानपरिशीलनभावितानाम् ।
पादारविन्दयुगलं खलु पाठकानां शुद्धैर्जलादिवसुभिः परिपूजयामि ॥
ॐ ह्रीं द्वादशांगपठनपाठनोद्यताय उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आराधनासुखविलासमहेश्वराणां सद्धर्मलक्षणमयात्मविकस्वराणां ।
स्तोतुं गुणान् गिरिवनादिनिवासिनां वै एषोऽद्य तच्चरणपीठभुवं नमामि ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशप्रकारचारित्राराधकसाधुपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्हन्मंगलमर्चामि जगन्मंगलदायकम् । आरब्धकर्मविघ्नौघप्रलयाय पयोमुखम् ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चिदानन्दलसद्वीचिमालिनं गुणशालिनम् । सिद्धमंगलमर्चेहं सलिलादिभिरुज्ज्वलैः ॥
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

बुद्धिक्रियारसतपोविक्रियौषधिमुख्यकाः । ऋद्धयो यं न मोहन्ति साधुमंगलमर्चये ॥
ॐ ह्रीं साधुमंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

लोकालोकस्वरूपं च प्रज्ञप्तं धर्ममंगलम् । अर्चे वादित्रनिर्घोषगीतनृत्यैः वनादिभिः ॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

लोकोत्तमोऽर्हन् जगतां भवबाधाविनाशकः । अर्च्यतेऽर्घेण स मया कुकर्मगणहानये ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकोत्तमायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

विश्वाग्रशिखरस्थायी सिद्धलोकोत्तमो मया । मह्यते महसामंदचिदानन्दसुमेदुरः ॥
ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रागद्वेषपरित्यागी साम्यभावावबोधकः । साधुलोकोत्तोर्घेण पूज्यते सलिलाद्यैः ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

उत्तमक्षमया भास्वान् सद्धर्मो विष्टपोत्तमः । अनंतसुखसंस्थाने यज्यतेऽम्भोऽक्षतादिभिः ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सदार्हन् शरणं मन्ये नान्यथा शरणं मम । इति भावविशुद्ध्यर्थमर्हयामि जलादिभिः ॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

व्रजामि सिद्धशरणं परावर्तनपंचकं । भित्वा स्वसुखसंदोहसंपन्नमिति पूजये ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आश्रये साधुशरणं सिद्धान्तप्रतिपादनैः । न्यक्कृताज्ञानतिमिरमिति शुद्ध्या यजामि तम् ॥

ॐ ह्रीं साधुशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

धर्म एव सदा बन्धुः स एव शरणं मम । इह वान्यत्र संसारे इति तं पूजयेऽधुना ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

संसारदुःखहनने निपुणं जनानां, नाद्यन्तचक्रमिति सप्तदशप्रमाणम् ।

संपूजये विविधभक्तिभरावनम्रः, शांतिप्रदं भुवनमुख्यपदार्थसार्थैः ॥

ॐ ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला ।

विघ्नप्रणाशनविधौ सुरमर्त्यनाथा, अग्रेसरं जिन वदंति भवंतमिष्टम् ।

नाद्यन्तचक्रयुगवर्तिनमत्र कार्ये, गार्हस्थ्यधर्मविहितेऽहमपि स्मरामि ॥

गणानां मुनीनामधीशत्वतस्ते, गणेशाख्यया ये भवन्तं स्तुवंति ।

सदा विघ्नसंदोहशांतिर्जनानां, करे संलुठत्यायतश्रेयसानाम् ॥

कलेः प्रभावात्कलुषाशयस्य, जनेषु मिथ्यामदवासितेषु । प्रवर्तितोन्यो गणराजनाम्ना, लंबोदरो दंतिमुखो गणेशः ॥
रुद्रेण कामज्वलितेन गौर्यां, विनोदभारान्मलमुत्क्षिपित्वा । कृत्वा पुराणेष्विति वाचयित्वा सन्मंगलं तं कथमुद्गिरन्ति ॥
यतस्त्वमेवासि विनायको मे दृष्टेष्टयोगानवरुद्धभावः । त्वन्नाममात्रेण पराभवंति विघ्नारयस्तर्हि किमत्र चित्रम् ॥

जय जय जिनराज त्वद्गुणान्को व्यनक्ति, यदि सुरगुरुरिन्द्रः कोटिवर्षप्रमाणम् ॥
वदितुमभिलषेद्वा पारमाप्नोति नो चेत्, कतिथ इह मनुष्यः स्वल्पबुद्ध्या समेतः ॥

ॐ ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमंत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रियं बुद्धिमनाकुल्यं धर्मप्रीतिविवर्धनं । गृहिधर्मे स्थितिर्भूयात् श्रेयसे मे दिशत्वरम् ॥

इत्याशीर्वादः ।

हवन—सामग्री

विधान की समाप्ति पर हवनके लिये निम्न लिखित वस्तुओं को अच्छी तरह शोधकर कूट लेना चाहिये ।

बादामपिस्ताखर्जूरा मज्जा वै नालिकेरजा । दुग्धं प्रचुरसर्पिश्च शर्कराद्राक्षयान्विता ॥

लवङ्गकर्पूरसुमिश्रितानां, चूर्णं सुतैलादिसुगन्धजातैः ।

युक्तं जिनेन्द्रस्य मते प्रशस्तं, होमार्हणे द्रव्यकदंबकं वै ॥

अर्थात्—बादाम, पिस्ता, छुवारा, नारियल का खोपरा, दाख, लौंग, कपूर, सफेद चंदन, लाल चंदन तथा चिरोंजी, सुगन्धवाला, देवदारु, अगर, तगर, बालछड़, पानड़ी, कपूरकचरी, नागरमोथा, छार छबीला, इत्यादि सुगन्धित द्रव्यों का चूर्ण तथा धान, तिल, मूंग, उडद, गेहू, जौं, चना इन्हें भी खरल में कूटकर मिला लेना चाहिये ।

इसी मे घी तथा बूरा मिलाकर सामग्री ठीक कर लेना चाहिये तथा आहुति के लिये जुदे वर्तन मे घी रखना चाहिए । घी की आहुति के लिये काठ के चमचे भी होने चाहिये ।

मंत्र जितने जपे हों उनके दशांश आहुतियां उसी मंत्र की होती हैं उनके सिवाय पीठिका आदि मंत्रो की आहुतियां होती हैं । इन सब आहुतियों के अनुसार हवन सामग्री तयार करनी चाहिये । तथा आक, ढाक, आम, पीपल, बड, सफेद चंदन तथा लाल चंदन की सूखी छोटी पतली लकड़ियां भी रखनी चाहिये ।



॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

श्री सिद्धचक्र विधान

मङ्गलाचरण ।

दोहा ।

जिनाधीश शिवईश नमि, सहस गुणित विस्तार । सिद्धचक्र पूजा रचौं, शुद्ध त्रियोग संभार ॥ १ ॥
नीत्याश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुण खान । जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान ॥ २ ॥
देशकाल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार । मधुर वैन नयना सुघर, सो याजक निरधार ॥ ३ ॥
रत्नत्रय मंडित महा, विषय कषाय न लेश । संशय हरण सुहित करन, करत सुगुरु उपदेश ॥ ४ ॥

छप्पय छन्द

निर्मल मंडप भूमि दरव, मंगल करि सोहत । सुरभि सरस शुभ पुष्प जाल-मंडित मन मोहत ॥
यथा-योग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा । दीरघ मोल सुडोल, वसन झखझोल सरूपा ॥
हो वित्तसार प्रासुक दर्व, सर्व अङ्ग मनको हरै । सो महाभाग आनंद सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै ॥५॥

यन्त्र-स्थापना

दोहा ।

सुर मुनि मन आनन्द करि, ज्ञान सुधारस धार । सिद्धचक्र सो थापहूं, विधिदव-जल उनहार ॥६॥

अडिल्ल।

अर्हं शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध मात्रिक महा। अकारादि स्वर मंडित अति शोभा लहा॥
अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके, पूर्व दिशि पूजों अष्टांग नमायके॥ ७॥

ॐ ह्रीं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्घं निवपामीति स्वाहा।

सोरठा।

वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्व विधि अर्घ ले। भक्ति भाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिश॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये आग्नेयदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके। मिलि है वसुविधि ऋद्धि, दच्छिण दिश पूजा करों॥ ९॥

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दच्छिणदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जल फलादि शुभ अर्घ ले। पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैऋत दिशि अर्चा करों॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैऋत्यदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि। मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा॥ ११॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ ले। मन विधि आरति त्याग, वायव दिशि पूजा करों॥ १२॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व अर्घ वसु द्रव्य करि। भाव अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करों॥ १३॥

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइके। नशे कर्म वसु अंत, पूजों हो ईशान दिशि॥ १४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ, बिंदु हंकार विराजे। अकारादि स्वर लिप्त, कर्णिका अन्त सु छाजे॥
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधि धर। अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, पद ध्यावत अरि नागको। ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥१५॥

दोहा।

सूक्ष्मादिक गुण सहित है कर्म रहित निःरोग। सिद्धचक्र सो थाप हूं मिटै उपद्रव योग॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन अत्रावतरतावतरत संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं।

(इति परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

अथाष्टकं।

चाल—नंदीश्वर द्वीपकी।

शीतल शुभ सुरभि सुनीर, कंचन कुंभ भरों। पाऊं भवसागर तीर, आनन्द भेंट धरों॥
अंतरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्त णाण दंसण वीर्यं सुहम अवगहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुणसंयुक्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

चन्दन तुम वंदन हेत, उत्तम मान्य गिना। नातर सब काष्ट समेत, ईंधन था ही बना॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥२॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्त णाण दंसण वीर्यं सुहम अवगहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुणसंयुक्तेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

दीरघ शशि किरण समान अक्षत ल्यावत हूं। शशिमंडल सम बहुमान पूज रचावत हूं॥
अन्तरगत अष्टस्वरूप गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप अचल विराजत हैं॥३॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्त णाण दंसण वीर्यं सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुणसंयुक्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

तुम चरणचन्द्रके पास, पुष्प धरे सोहैं। मानूं नक्षत्रकी रास, सोहत मन मोहैं॥
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥४॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्त णाण दंसण वीर्यं सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुणसंयुक्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा

उत्तम नेवज बहु भाय, सरस सुधासाने। अहमिन्द्रन मन ललचाय, भच्चण उमगाने॥
अंतरगत अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥५॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्त णाण दंसण वीर्य सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुण संयुक्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

फैली दीपनकी जोति, अति परकाश करै। जिम स्याद्वाद उद्योत, संशय तिमिर हरै॥
अंतरगत अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥६॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्त णाण दंसण वीर्य सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुणसंयुक्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

धरि अग्नि धूपके ढेर, गंध उडावत हूं। कर्मोंका धूम बखेर, ठोंक जरावत हूं॥
अंतरगत अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥७॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्त णाण दंसण वीर्य सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुण संयुक्तेभ्यः अष्टकर्मविध्वंसनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

जिम धर्मवृक्षकी डाल, शिवफल सोहत हैं। इम धरि फल कंचन थाल, भविमन मोहत हैं॥
अंतरगत अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥८॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्री सम्मत्त णाण दंसण वीर्य सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुण संयुक्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

करि दर्व अर्घ वसुजात, याते ध्यावत हूं। अष्टांग सुगुण विख्यात, तुमढिंग पावत हूं॥
अंतरगत अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं। नमूं सिद्धचक्र शिवभूप, अचल विराजत हैं॥९॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्त णाण दंसण वीर्य सुहम अवग्गहण अगुरुलघु अव्वावाह अष्टगुण संयुक्तेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

गीता छन्द।

निर्मलसलिल, शुभवास चन्दन, धवलअच्चतयुत अनी। शुभपुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुरस्वाद सुविधि घनी॥
करि दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले। करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले॥१॥

ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है। दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिवकमलापती। मुनि ध्येय सेय अभेय चहुंगुण, गेह द्यो हम शुभमती ॥२॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्त णाण दंसण वीर्यं सुहम अवगहण अगुरुलघु अव्वाबाह अष्टगुणसंयुक्तेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

अथ अष्टगुण अर्घ

चौपाई।

मिथ्यात्रय, चउ आदि कषाया, मोहनाश क्षायकगुण पाया।
निजअनुभव प्रत्यक्षसरूपा, नमूं सिद्ध समकित-गुणभूपा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धसम्यक्त्वाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सकलत्रिधा षटद्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं सब भंता।
निर-आवरण विशद स्वाधीना, ज्ञानानन्द परम रस लीना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

चक्षु अचक्षु अवधि त्रिधि नाशी, केवल दर्श जोति परकाशी।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूं सिद्धोंका ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीव शक्ति घाते निरधारा।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

रूपातीत, मन इन्द्रिय ताही, मनपर्यय हूं जानत नाहीं।
अलख अनूप अमित अविकारी, नमूं सिद्ध सूक्षम गुणधारी ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्माय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

एक क्षेत्र अवगाह स्वरूपा, भिन्न भिन्न राजै चिद्रूपा।
निजपरघात विभाव विडारा, नमूं सुहित अवगाह अपारा ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं परमअवगाहनाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

परकृत ऊंच नीच पद नाहीं, रमत निरंतर निजपद माहीं।
उत्तम अगुरुलघु गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावै नित योगी ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघवे नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

नित्य निरामय भवभय-भंजन, अचल निरंतर शुद्ध निरंजन।
अव्याबाध सोई गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन मानो ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

"ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः" इस मंत्र का १०८ बार जाप करना चाहिये।

अथ जयमाला

दोहा।

जग आरति भारत महा, गारत करि जय पाय। विजय आरती तिन कहूं, पुरुषारथ गुण गाय ॥ १ ॥

पद्धरी छन्द।

जयकृपाण कृपाण सु प्रथमवार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार।
दृढ़ कोट विपर्यय मति उलंघ, पायो समकित थल थिर अभङ्ग ॥ १ ॥
स्व पर विवेक अन्तर पुनीत, स्व रुचि वरतायो राजनीत।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह ॥ २ ॥
तिन नाशन लीनो दृढ संभार, शुद्धोपयोग चित चरण सार।
निर्ग्रन्थ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारन सुलभ रूप ॥ ३ ॥
द्वयवीस परीषह सहन वीर, बहिरंतर संयम धरण धीर।
द्वादश भावन दश भेद धर्म, विधि नाशन बारह तप सु पर्म ॥ ४ ॥

शुभ दयाहेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रय गुप्ति धार। ४।
एकाकी निर्भय निर सहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय ॥ ५ ॥
लखि मोहशत्रु परचण्ड जोर, तिस हनन शुकल दल ध्यान जोर।
आनन्द वीररस हिये छाय, चायक श्रेणी आरम्भ थाय ॥ ६ ॥
वारम गुण थानक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश।
नव केवललब्धि विराजमान, देदीप्यमान सोहे सुभान ॥ ७ ॥
तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकांत, थी कुमति स्वरूप अनेक भांति।
जिनवाणी करि ताको विहंड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचंड ॥ ८ ॥
वरतायो जगमें सुमति रूप, भविजन पायो आनन्द अनूप।
थे मोह नृपति उपकरण शेष, चारों अघातियां विधि विशेष ॥ ९ ॥
है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखे नाम तेह।
यों तिन नाशन उद्यम सु ठानि, आरंभ्यो परम शुकल सु ध्यान ॥
तिस बलकरि तिनकी थिति विनाश, पायो निर्भय सुखनिधि निवास
यह अचय जोति लई अबाधि, पुनि अंश न व्यापो शत्रु व्याध ॥
शास्वत स्वाश्रित सुखश्रेय स्वामि, है शांति संत तुमकर प्रणाम।
अंतिम पुरुषारथ फल विशाल, तुम विलसौ सुखसौं अमित काल ॥ १२ ॥

घत्ता।

परममय विदूरित पूरित स्वसुख समय सारं चेतनरूपा। नानाप्रकार परका विकार सब टार लसैं सब गुण भूपा ॥
ते निरावर्ण निर्दह निरूपम सिद्धचक्र परसिद्ध जजूं। सुर मुनि नित ध्यावें आनन्द पावें मैं पूजत भवभार तजूं ॥

ॐ ह्रीं सम्मत्तणाणादिअट्ठगुणसंजुत्तसिद्धेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १२ ॥

॥ इति प्रथम पूजा सम्पूर्णम् ॥

अथ द्वितीय पूजा

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सुरेफ बिंदु हंकार बिराजे, अकारादि स्वर्लिप्त कर्णिका अन्त सुछाजे ।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिधर, अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम सुर ध्यावत अरिनागको । है केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग । सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटे उपद्रव जोग ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन: षोडशगुणसंयुक्ता अत्रावतरतावतरत सम्वौषट् आह्वानम् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ: स्थापनं । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं

हरिगीताछन्द ।

हिमशैल धवल महा कठिन पाषाण तुम जसरासतें, शरमाय अरु सकुचाय द्रव है वही गंगा तासतें ।
संबंध योग चितार चित भेटार्थ झारीमें भरूँ, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

काश्मीर चंदन आदि अन्तर बाह्य बहुविधि तप हरै, वह कार्य कारण लखि निमित मम भाव बहु उद्यम करै ।
मैं हूं दुखी भवतापसे घसि मलय चरनन ढिंग धरूं, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सौरभ चमक जिस सह न सक अंबुज बसै सरतालमें,
शशि गगन वस नित होत कृश अहिनिश भ्रमे इस ख्यालमें ।

सो अक्षतौघ अखंड अनुपम पुञ्जकरि सन्मुख धरूं, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निवपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा, तुम शील कटक सु घट निकट शर चाप पटक सुभट भगा ।
इमि पुष्प राशि सुवास तुम ढिग कर सुयश बहु उच्चरूं, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

जीवन सतावत नहिं अघावत क्षुधा डाइनसी बनी, सो तुम हनी तुम ढिग न आवत जान यह विधि हम ठनी ।
नैवेद्यके संकेत करि निज क्षुधा नाशन विधि वरूं, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

मैं मोह अंध अशक्य अरु यह विकट भववन है महा, ऐसे रुलेको ज्ञानदुति बिन पार निवरण हो कहा ।
सो ज्ञान चक्षु उघार स्वामी दीप ले पाइन परूं, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

प्रासुक सुगंधित दिव्य सुन्दर द्रव्य घ्राण सुहावनो, धरि अग्नि दश दिश वास पूरित कर्म धूम्र उड़ावनो ।
तुम भक्तिभाव उमङ्ग करत सुगन्ध धूप सु विस्तरूं, षोडष गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

चित हरण अचित सुरङ्ग रस पूरित विविध फल सोहने रसना लुभावन कल्पतरुके सुर असुर मन मोहने ।
भरि थाल कञ्चन भेट धार संसार फल तृष्णा हरूं, षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

शुभनीर वर काश्मीर चन्दन धवल अन्नत युत अनी। वर पुष्पमाल विशाल चरु सु रसाल दीपक दुति मनी ॥
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूं। षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनन्तदर्शनानन्तज्ञानादिषोडशगुणसंयुक्तेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अन्नत युत अनी, शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।
करि दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले, करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप है, दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप है।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य अछेद शिव कमलापती, मुनि ध्येय सेय अभेय चहुंगुण गेह द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये षोडशगुणसंयुक्ताय महार्घं।

अथ सोलह गुण सहित अर्घ

त्रोटक छन्द।

द्रग आवरणी परकर्ति हनी, स्थिति अवलोक सुभावतनी। इक साथ समान लखो सब ही, नमुं सिद्ध अनन्त द्रगन अबही ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यम्।

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निज ज्ञान स्वभाव विकास लियो।
समयांतर सर्व विशेष जनो, नमुं ज्ञान अनन्त सुसिद्ध तनो ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यम्।

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो। असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥३॥

ॐ ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यम्।

विपरीति सभीति पराश्रितता, अतिरिक्त धरे न करे थिरता। परकी अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनंद वेवत हैं ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यम्।

निज आत्म-विकासक बोध लह्या, भ्रमको परवेश न लेश कह्या। निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यम् ॥ ५ ॥

निजभाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो।

निजथान निरूपम नित्य वसे, नमुं सिद्ध अनाचल रूप लसे ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यम् ॥ ६ ॥

चौपई।

गुणपर्यय परणतिके भेद, अति सूक्ष्म असमान अछेद। ज्ञान गहे न कहै जड वैन, नमो सिद्ध सूक्ष्म गुण ऐन ॥७॥

ॐ ह्रीं अनन्तसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं ॥ ७ ॥

जन्म मरण युत धरें न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय। नित्य निरंजन विगत विकार, अव्याबाध नमो सुखकार ॥८॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घ्यं।

एक पुरुष अवगाह प्रजंत, राजत सिद्ध समूह अनन्त। एकमेक बाधा नहिं लहैं, भिन्न भिन्न निजगुणमें रहैं ॥९॥

ॐ ह्रीं अवगाहनाय नमः अर्घ्यं ॥ ९ ॥

काययोग पर्यापति प्रान, अनवधि छिन छिन होवे हान। जरा कष्ट जग प्रानी लहै, नमों सिद्ध यह दोष न सहै ॥१०॥

ॐ ह्रीं अजराय नमः अर्घ्यं ॥ १० ॥

काल अकाल प्राणको नाश, पावे जीव मरणकी त्रास। तासौं रहित अमर अविकार, सिद्ध समूह नमूं सुखकार ॥११॥

ॐ ह्रीं अमराय नमः अर्घ्यं ॥ ११ ॥

गुण गुण प्रति है भेद अनन्त, यो अथाह गुण युत भगवन्त। है परिमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण वंदूं एह ॥१२॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घ्यं।

भुजगप्रयात छन्द।

अनुक्रमते फर्स वर्णादि जानो, किसी एक वीशेषको किं प्रमानो।

पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी, नमूं सिद्ध अत्येन्द्रिय ज्ञान भागी ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं अतीन्द्रियोत्सवाय नमः अर्घ्यं ॥ १३ ॥

त्रिधा वेद भावित महा कष्ट कारे, रमण भावसो आकुलित जीव सारे।

निजानन्द रमणीय शिवनार स्वामी, नमो पुरुष आकृत सबै सिद्धनामी ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अवेदाय नमः अर्घ्यं ॥ १४ ॥

..षं सकल चेतनाधार माहीं, भये लय भली विधि रहौ भेद नाहीं।

तथा हीन अधिकायको भाव टारी, नमो सिद्ध पूर्ण कला ज्ञान धारी ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अभेदाय नमः अर्घ्यं ॥ १५ ॥

निजानन्दरस स्वादमें लीन अंता, मगन हो रहैं राग वर्जित निरंता ।
कहांलों कहूं आपको पार नाहीं, धरों आपको आप ही आपमाहीं ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं अविलीनाय नमः अर्घं ॥ १६ ॥

'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिये ।

अथ जयमाला

दोहा ।

पंच परम परमातमा रहित करम के फंद । जगत अंपच रहित सदा नमों सिद्ध सुख कंद ॥

त्रोटक छन्द ।

दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो । भवितारन पूरण कारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥१॥
समयामृत पूरित देवमही, पर आकृत मूरति लेश नहीं । विपरीति विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमो सुखकारन हो ॥२॥
अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा । यमजाम जरा दुख जारन हो, सब सिद्ध नमो सुख···
निर आश्रित स्वाश्रित वासित हो, परकाशित खेद विनाशित हो । विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमो सुख···
अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुवुधा सुसिधं । विधि पारन जारन हारन हो, सब सिद्ध नमो सुख···
शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं जरनं मरनं हरनं । तरनं भव वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुख···
भववास परास विनाशन हो, दुखरास विनाश हुताशन हो, निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुख···
तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद ज्य लहै । शरणागत संत उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुख···

दोहा ।

सिद्धवर्ग गुण अगम है, शेष न पावें पार । हम किह विधि वरणन करें, भक्ति भाव उर धार ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादिषोडशगुणयुक्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं ॥ ६ ॥

इति द्वितीय पूजा सम्पूर्णम् ।

अथ तृतीय पूजा बत्तीस गुणसहित।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ बिंदु हंकार विराजे, अकारादि स्वर-लिप्त कर्णिका अंत सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिवर, अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अंत ह्रीं वेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागको। है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन: बत्तीसगुणसहिता अत्रावतरतावतरत संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं।

दोहा।

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग। सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टक

('प्रभू पूजोरे भाई' इस चाल में।)

तुम पूजोरे भाई, सिद्धचक्र बतीसगुण, तुम पूजोरे भाई। भवत्रासित आकुलित रहै भवि, कठिन मिटन दुखताई ॥
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई। तुम पूजोरे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, तुम० ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने बत्तीसगुण संयुक्तायजन्मजरारोगविनाशनाय जलं नि०॥ १ ॥

जगवंदन परसत पद चन्दन, महाभाग उपजाई। हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम पुजो रे भाई।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने बत्तीसगुणसंयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि० ॥ २ ॥

शिवनायक पूजन लायक तुम, यह महिमा अधिकाई। अक्षयपद दायक अक्षत यह, सांचो नाम धराई ॥
तुम पूजारे भाई ॥ श्रीसिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम०।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने बत्तीसगुणसंयुक्ताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ॥ ३ ॥

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उरसे न टराई। ताहि निवारण पुष्प भेंट धरि, मांगूं वर शिवराई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने वत्तीसगुणसंयुक्ताय कामवाणविनाशनाय पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहीं मेटे, पूर परौ इनताई। भेंट करत तुम इनहूं न मेटूं, रहूं चिरकाल अघाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने वत्तीसगुणसंयुक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

दिव्य रत्न इस देश कालमें, कहै कौन है नाई। तुम पद भेंट दीप प्रगटा यह, चिंतामणि पद पाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने वत्तीस गुणसंयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

धूप हुताशन आसनमें धर, दस दिश वास वसाई। तुम पद पूजत या विधि, वसुविधि ईन्धन जर हो छाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने वत्तीसगुणसंयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥ ७ ॥

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूं हूं तुम पाई। जासौं जजैं मुक्तिपद पइयै, सर्वोत्तम फलदाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने वत्तीसगुणसंयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥

वसुविधि देउ अर्घ तुम मम द्यो, वसुविधि गुण सुखदाई। जासु पाय वसु त्रास न पाऊं, सन्त कहे हर्षाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम० ॥

ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने वत्तीसगुणसंयुक्ताय सर्वसुखप्राप्तये अर्घं नि० ॥ ९ ॥

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षतयुत अनी, शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुरस्वाद सु विधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले, करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥

ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है, दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप है।
कर्माष्ट त्रिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती, मुनि ध्येय सेय अभेय चहुं, गुण गेह द्यो हम शुभ मती ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये अनर्घपदप्राप्तये महार्घं।

अथ बत्तीस गुण सहित अर्घ

पद्धरी छन्द।

चेतन विभाव पुदगल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिस निमित टार। दृगबोध सरूप सुभाव एह, नमूं शुद्ध चेतना सिद्ध देह ॥१॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धचेतनाय नमः अर्घं ॥ १ ॥
मति आदि भेद व्यवछेद कीन, ज्ञायक विशुद्ध निजभाव लीन। निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमूं शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घं ॥ २ ॥
सर्वांग चेतना व्यक्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप। परलेश न निज परदेश मांहि, नमूं शुद्ध सिद्ध चिद्रूप ताहि
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घं ॥ ३ ॥
अन्तरविधि उदय विपाक टार, तुम जातिभेद वाहिज विडार। निज परिणतिमें नहिं लेश शेष, नमू शुद्धरूप गुणगण विशेष
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४ ॥
रागादिक परिणतिको विध्वंस, आकुलित भाव राखो न अंश। पायो निज शुद्ध सरूप भाव, नमू सिद्धवर्ग धर हिये चाव
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धस्वरूपभावाय नमः अर्घं ॥ ५ ॥ दोहा।
तिहुं कालमें ना डिगें, रहैं निजानन्द थान। नमूं शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धदृढाय नमः अर्घं ॥ ६ ॥ दोहा।
निज आवर्तकमें वसे, नित ज्यों जलधि कलोल। नमूं शुद्ध आवर्तकी, करि निज हिये अडोल ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धआवर्तकाय नमः अर्घं ॥ ७ ॥ दोहा।
परकृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निजभाव। नमो सिद्ध निज अमलपद, पायौ सहज सुभाव ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धस्वयभवे नमः अर्घं ॥ ८ ॥ पद्धड़ी छन्द।
स्वैसिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय, स्वैशुद्ध चेतना पुंजकाय। स्वैशुद्ध सबै पायो संयोग, तुम सिद्धराज स्वैशुद्ध जोग ॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धयोगाय नमः अर्घं ॥ ९ ॥

एकेन्द्रिय आदिक जातिभेद, हीनाधिक नामा प्रकृति छेद। संपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूजैं हैं पद जोड़ हाथ ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धजाताय नमः अर्घं ॥ १० ॥

दोहा।

महातेज आनन्दघन, महातेज परताप। नमो सिद्ध निजगुण सहित दिपै अनूपम आप ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धतपसे नमः अर्घं ॥ ११ ॥

पद्धड़ी छन्द।

वर्णादिकको अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं। अति तेजपिंड चेतन अखण्ड, नमूं शुद्ध मूर्तिक कर्म खण्ड

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमूर्तये नमः अर्घं ॥ १२ ॥

बाहिज पदार्थको इष्ट मान, नहिं रमत ममत तासों जु ठान। निज अनुभवरसमें सदा लीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धसुखाय नम अर्घं ॥ १३ ॥

दोहा।

धर्म अर्थ अरु काम विन, अन्तिम पौरुष साध। भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूं सिद्ध निरबाध ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घं ॥ १४ ॥

पद्धड़ी छन्द।

पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त। पुरुषांकित चेतनपद प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूं हमेश।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घं।

दोहा।

पूरण केवलज्ञान गम, तुम स्वरूप निर्बाध। और ज्ञान जानै नहीं, नमो सिद्ध तन आध ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रमेयाय नमः अर्घं ॥ १६

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग। पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धोपयोगाय नमः अर्घं ॥ १७ ॥

पद्धड़ी छन्द।

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग। निजरस साधन है भोग सार, सो भोगो तुम हम नमस्कार

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धभोगाय नमः अर्घं ॥ १८ ॥

दोहा।

निर्ममत्व युगपद लखो, तुम सब लोकालोक। शुद्ध ज्ञान तुमको लखो, नमों शुद्ध अवलोक ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धावलोकाय नमः ॥ १९ ॥

पद्धड़ी छन्द।

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान। निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नमः अर्घं ॥ २० ॥

दोहा।

आदि अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्यकी जात। स्वयं सिद्ध परमात्मा, प्रणामूं सिद्ध निपात ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धनिपाताय नमः अर्घं ॥ २१ ॥

लोकालोक अनन्तवें, भाग वसो तुम आन । ये तुमसों अति भिन्न है, शुद्ध गर्भ यह जान ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धगर्भाय नमः अर्घं ॥ २२ ॥

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास । शुद्ध वास परमातमा, नमों सुगुणकी रास ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धवासाय नमः अर्घं ॥ २३ ॥

अति विशुद्ध निज धर्ममें, वसत नशत सब खेद । परम वास नमि सिद्धको, वासी वास अभेद ॥ २४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घं ॥ २४ ॥

अहिरंता द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय । निरविकार परमातमा, नमूं नमूं सुखदाय ॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घं ॥ २५ ॥

हीन अधिक इक देशको, विकल विभाव उछेद । शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूं सिद्ध निरभेद ॥ २६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धअनन्ताय नमः अर्घं ॥ २६ ॥

त्रोटक छन्द ।

तुम रागविरोध विनाश कियो, निजज्ञान सुधारस स्वाद लियो । तुमपूरण शांति विशुद्ध धरो, हमको इकदेश विशुद्ध करो

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धशांताय नमः अर्घं ॥ २७ ॥

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है ।
निज ज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अंश न जानन मांहि रहो ॥ २८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धविदंताय नमः अर्घं ॥ २८ ॥

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो ।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति लही ॥ २९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धज्योतिर्जिनाय नमः अर्घं ॥ २९ ॥

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो ।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन शासनमें परसिद्ध कहो ॥ ३० ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घं ॥ ३० ॥

करि अन्त न गर्भ लियो फिरकें, जनमें शिववास जनम धरके ।

जिनको फिर गर्भ नहीं कबहूं, शिवराज कहाय नमूं अबहूं ॥ ३१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धसंदर्भगर्भाय नमः अर्घं ॥ ३१ ॥

जगजीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो ।

तुम मंगल मूरति शांति सही, सब पाप नशें तुम पूजत ही ॥ ३२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धशांताय नमः अर्घं ॥ ३२ ॥

दोहा ।

पंच परम पद ईश हैं, पंचमगति जग शीश । जगत प्रपंच रहित वसे, नमूं सिद्ध जग ईश ॥ ३३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा ॥ ३३ ॥

" ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः " इस मंत्र की १०८ वार जाप देना चाहिये ।

अथ जयमाला

दोहा ।

परम ब्रह्म परमातमा, परम ज्योति शिवथान । परमातम पद पाइयो, नमो सिद्ध भगवान ॥ १ ॥

छन्द कामिन मोहन मात्र । २० ।

जय मरण कष्टको टार अमरा भये, जय जन्म व्याधि परिहार अजरा भये ।

जय द्विविध करममल जार अमला भये, जय दुविधि टार संसार अचला भये ॥ १ ॥

जय जगत वास तज जगत स्वामी भये, जय विना नाम थित परम नामी भये ।

जय कुबुधि रूप तजि सुविधि रूपा भये, जय निषध दोष तज सुगुण भूपा भये ॥ २ ॥

कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइए, लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइये ।

इन्द्र नागेन्द्र धरणीन्द्र तुम पद जजें, महा वैराग रस पाग मुनिगण भजें ॥ ३ ॥

विघन वन दहन दो अघन घन पौन हो, सघन गुण रासके, वासके भौन हो ।

शिव तिया वसकरन मोहनी मंत्र हो, कर्म छयकार वैतालके यंत्र हो ॥ ४ ॥

कोटि थित क्लेशकी पोट धर शिव रहो, उपलकी नकल हो अचल इक थल रहो ।

स्वप्नमें हूं न निज अर्थको पावही, जे महाखल न तुम ध्यान धरि ध्यावही ॥ ५ ॥
आपके जाप बिन पाप सब मेंटही, पापकी तापको पाप कब मेंटही ।
संत निज दासकी आस पूरी करो, जगतसे काढ निज चरणमें ले धरो ॥ ६ ॥

घत्तानंद छन्द ।

जय अमल अनूपम शुद्ध स्वरूपं, निखिल निरूपं धर्म धरा ।
जय विघन नशायक मंगलदायक, तिहुं जगनायक परमपरा ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः द्वात्रिंशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं निर्वपामि स्वाहा ।

इति तृतीय पूजा संपूर्णम् ।

अथ चतुर्थ पूजा चौसठ गुणसहित ।

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सुरेफ बिंदु हंकार विराजे, अकारादि स्वर-लिप्त कर्णिका अंत सु छाजे ।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिवर, अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अंत ह्रीं वेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागको । है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन: चौसठगुणसहिता अत्रावतरतावतरत संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं ।

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग । सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

चाल लावनी ।

सिद्धगण पूजो हरषाई, चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजोरे भाई ॥ आंचली ॥
त्रिभुवन उपमा वास लखै, तुम पद अम्बुजके माई । निर्मल जलकी धार देहुं, अवशेष करणताई, सिद्धगुण पूजोरे भाई ॥

चौसठ गुणमाला विधिनामा, सुमरो सुखदाई। सिद्धगण पूजोरे भाई ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं नि० ॥ १ ॥

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दनमन भाई, निजसों गुणाधिक्य संगतिको लहिय न हर्षाई । सिद्धगण पूजोरे भाई ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई । सिद्धगण पूजोरे भाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० ॥ २ ॥

धीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई । अंगुलसे तंदुलसे पूजत, अक्षय पद पाई ॥ सि० ॥
चौसठ गुण नामा विधिमाला सुमरों सुखदाई ॥ सिद्धगण पूजोरे भाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ॥ ६ ॥

धूलि सार छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई । काम शूल निर्मूल करणकों, पूजहु तुम पाई ॥ सिद्ध० ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

भूख व्याधि अक्षीण लगी है, पूरति है नांई । चरूमात्र तुम पद पूजत हों, पूरन शिवराई ॥ सिद्धगण पूजोरे भाई ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध०

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

दीप निमित तुम पद पूजत शिव मारग दरशाई । घोर अंध संसार हरणकी, भली सूझ पाई ॥ सिद्ध०
चौसठ गुणनामा विधि माला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

कृष्णागरु कपूर पूर घट, अगनिसे प्रजलाई । उडै धूम यह किधों उडै, जर करमनकी छाई ॥ सिद्ध०
चौसठ गुणनामा विधि माला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

मधुर मनोग सुप्रासुक फलसों, पूजों शिवराई । यथायोग विधि फलको दे गुण, फलकी अधिकाई ॥ सिद्ध०
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई । सिद्धगण पूजोरे भाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहिताय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥

निरख उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई। भेंट धरत तुम पद पाऊं पद, निर आकुलताई ॥ सिद्ध० ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणमालासहिताय सर्वसुखप्राप्तये अर्घ नि० ॥ ६ ॥

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षतयुत अनी, शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरु प्रचुर स्वाद सु विधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले, करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है, दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्ष्म स्वरूप अनूप है।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अद्भुज शिव कमलापती, मुनि ध्येय सेय अभेय चहुंगुण, गेह द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये महार्घं।

अथ चौसठ गुण सहित अर्घ

चाल छन्द।

चउघाती कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो। द्वै धर्म कहो सुखकारा, नमूं सिद्ध भए अविकारा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अर्हंतजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १ ॥

संक्लेश भाव परिहारी, भए अमलअवधि बलधारी। सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २ ॥

निर्मल चारित्र सम्भारा, परमावधि पटल उधारा केवल पायो तिस कारण, नमूं सिद्ध भये जग तारण ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३ ॥

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधिके हो स्वामी। अन्तम वसुकर्म नसाया, नमूं सिद्ध भये सुखदाया ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४ ॥

जिस अन्त अवधिको नाहीं, तुम उपजाबो पद ताहीं। निर्मल अवधी गुण धारी, सब सिद्ध नमूं सुखकारी ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५ ॥

तप बल महिमा अधिकाई, बुद्धि कोष्ठ ऋद्धि उपजाई। श्रुत ज्ञान कोष्ठ भंडारी, नमूं सिद्ध भये अविकारी ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं। ६ ॥

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी । यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमूं शिव ईशा ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिजिनसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः अर्घं ॥ ७ ॥

पदमात्र समस्त चितारें यह ऋद्धि पाद अनुसारे । यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूं शिवथानी ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं पादानुसारणीऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ८ ॥

जो भिन्न भिन्न इक लारैं, शब्दन सुन अर्थ विचारैं । यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमूं सिद्ध भये जगत्राता ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं संभिन्नश्रोतृऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ९ ॥

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, विन गुरुके सहज सरूपा । भये स्वयंबुद्धि निज ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥१०॥

ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१० ॥

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा । प्रत्येक बुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमूं हितकारी ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११ ॥

गणधरसे समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी । ज्ञानी सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं बोधबुद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२ ॥

मन योग सरलता धारैं, तिस अन्तर भेद उधारैं । यों होय ऋजुमती ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १३ ॥

बांके मनकी सब बाता, जाने सो विपुल कहाता । तुम पाय भये शिवधामी, नमूं सिद्धराज अभिरामी ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं विपुलमतिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १४ ॥

सुर विद्याको नहिं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं । दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं दशपूर्वऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १५ ॥

चौदस पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमानी । प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं, भये सिद्ध हरो अघ म्हारूं ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं चौदहपूर्वऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १६ ॥

सुन्दरी छन्द ।

ज्योतिषादिक लक्षण जानकै, शुभ अशुभ फल कहत बखानिकै ।
निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूं तथा ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगनिमित्तऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १७ ॥

बहुत विधि अणिमादिकऋद्धि जू, तपप्रभाव भई तिन सिद्धजू । निष्प्रयोजन निजपद लीन हैं, नमूं सिद्ध भये स्वाधीन हैं

ॐ ह्रीं विवर्णऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १८ ॥

भूमि जल तंतुन जियना हरैं, नमूं ते मुनि शिव कामिन वरैं । नैक नहिं बाधा परिहार हो, नमूं सिद्ध सभी सुखकार हो

ॐ ह्रीं विज्जाहरणऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १९ ॥

जंघपर दोहाथ लगावहीं, अन्तरीक्ष पवनवत जावहीं । पाय ऋद्धि महामुनि चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी ॥२०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २० ॥

खग समान चलैं आकाशमें, लीन चित निजधर्म प्रकाशमें । शुद्ध चारित करि निज सिद्धता, पाय पहुपन गमन करें यथा

ॐ ह्रीं आकाशगामिनीऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१ ॥

वाद विद्या फुरत प्रमाणमें, वज्रसम परमत गिरहानमें । सब कुपक्षी दोष प्रगट करें, स्यादवाद महादुतिको धरैं ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं परामर्शऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२ ॥

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहि तिस शक्ती हरैं। ते महा मुनि जग सुखदाय जू, हम नमें तिनशिवपद पाय जू

ॐ ह्रीं आशीविषऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २३ ॥

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो । सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूं उर धारकैं

ॐ ह्रीं दृष्टिविषऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २४ ॥

अनशनादिक नितप्रति साधना, मरणकाल तई न विराधना । उग्रतप करि वसुविधि नासतैं, हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २५ ॥

बढ़ति नित प्रति सहज प्रभावना, उग्रतप करि क्लेश न पावना । दीप्त तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूं सिर नायकैं

ॐ ह्रीं दीप्ततपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २६ ॥

अन्तराय घटे उत्सव बढ़ै, बाल चन्द्र समान कला चढ़ै । वृद्ध तपकी ऋद्धि लहै यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती

ॐ ह्रीं तप्ततपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २७ ॥

सिंह क्रीड़ित आदि विधानतैं, नित बढ़ावत तप विधि मानतैं । महामुनीश्वर तप परकासतैं, नमूं मुक्ति भए जगवासतैं

ॐ ह्रीं महातपऋद्धिजिनसिद्धभ्यो नमः अर्घं ॥ २८ ॥

शिखर गिरि ग्रीषम हिम सरतटै, तरुनिकट पावस निजपद रटैं । घोर परिषह करि नाहीं हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं

ॐ ह्रीं घोरतपऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ २९ ॥

महाभयंकर निमित मिलै जहां, निरविकार यती तिष्टैं तहां । महापराक्रम गुणकी खान है, नमो सिद्ध जगत सुखदान है

ॐ ह्रीं पराक्रमऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३० ॥

सघन गुणकी राशि महायती, रत्नराशि समान दिपै अती । शेष जिन वर्णन करि थकि रहे, नमूं सिद्ध महापदको लहे

ॐ ह्रीं घोरगुणऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३१ ॥

अतुल वीर्यधनी हनि कामको, चलत मन नहिं लखत सु वामको । बालब्रह्मचारी योगीश्वरा, नमूं सिद्ध भए वसुविधि हरा

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३२ ॥

सकल रोग मिटै संस्पर्शतें, महायतीश्वरके आमर्शतें । औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना ॥३३॥

ॐ ह्रीं आमर्षऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३३ ॥

मूत्रमें अमृत अतिशय वसे, जा परसते सब व्याधी नसे । औषधी यह ऋद्धि प्रभावाना, भये सिद्ध नमत सुख पावना

ॐ ह्रीं आमौषधऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३४ ॥

तन पसीजत जलकण लगत ही, रोग व्याधि सर्वजनभगत ही । औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना

ॐ ह्रीं जलौषधऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३५ ॥

हस्त पादादिक नखकेशमें, सर्व औषधि है सब देशमें में । औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना

ॐ ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३६ ॥

अडिल्ल ।

मन सम्बंधी वीर्य बढ़ै अतिशय महा, एक मुहूरत अन्तर श्रुत चिंतन लहा ।
मनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ३७ ॥

ॐ ह्रीं मनोबलऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३७ ॥

भिन्न भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरै, एक मुहूरत अन्तर श्रुत वर्णन करै ।
वचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय.जजूं तिन पांय जू ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं वचनबलऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३८ ॥

खड्गासन इक अंग मास छै मास लों, अचल रूप थिर रहैं छिनक खेदित न हों ।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजों तिन पांय जू ॥ ३९ ॥

ॐ ह्रीं कायबलऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३९ ॥

अति अरूच चरू क्षीर होय कर धरत ही, वचन खिरत परश्रवण तुष्टता करत ही।
क्षीरस्रवी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४० ॥

ॐ ह्रीं क्षीरस्राविऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४० ॥

रूखे भोजनसे करमें घृत रस स्रवै, वचन सुनत परको घृत सम स्वादित ह्वै।
घृतस्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४१ ॥

ॐ ह्रीं घृतस्राविऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४१ ॥

हस्तकमलमें अन्न मधुर रस देत है, मधुकर सम जिय वचन गंधको लेत है।
मधुस्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४२ ॥

ॐ ह्रीं मधुस्राविऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४२ ॥

अमृतसम आहार होय कर आयके, वचनामृत दे सुक्ख श्रवणमें जायके।
आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जूं ॥ ४३ ॥

ॐ ह्रीं अमृतरसऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४३ ॥

जिस वासन जिस थान आहार करें यती, चक्री सेना खाय अखे होवे अती।
यह अक्षीण रस ऋद्धि भई सुखदाय जू, भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४४ ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणरसऋद्धिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४४ ॥ सोरठा।

सिद्धराशि सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे। नमूं ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है ॥ ४५ ॥

ॐ ह्रीं वर्द्धमानसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४५ ॥

रागादिक परिणाम, अन्तरके अरि नाशकै। लहि अरहंत सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया ॥ ४६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४६ ॥

दो अन्तिम गुणथान, भाव सिद्ध इस लोकमें। तथा द्रव्य शिव थान, सर्व सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ४७ ॥

ॐ ह्रीं लोके सर्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४७ ॥

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी। नमूं सिद्ध जिननाह, संतनिके भवभय हरैं ॥ ४८ ॥

ॐ ह्रीं भयविध्वंसकमहावीरवर्धमानाय नमः अर्घं ॥ ४८ ॥

चायकश्रेणि अरूढ़, निजभावी योगी यथा । निश्चय दर्श अमूढ़, सिद्धयोग सब ही जजों ॥ ४९ ॥

ॐ ह्रीं योगसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४९ ॥

वीतराग परधान, ध्यान करें तिनको सदा । सोई ध्येय महान, नमों सिद्ध हम अघ हरो ॥ ५० ॥

ॐ ह्रीं ध्येयसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५० ॥

लोक शिखर शिव थान, अचल विराजित सिद्ध जिन । लोकवास सर्वान, भए सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ५१ ॥

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५१ ॥

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय । सोई सिद्ध महान, मंगलहेतु नमूं सदा ॥ ५२ ॥

ॐ ह्रीं स्वस्तिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५२ ॥

तीन लोकके पूज, सर्वोतम सुखदाय हैं । जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भाव युत ॥ ५३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५३ ॥

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा । तातैं सिद्ध महान, सर्व पूज्यके पूज्य हो ॥ ५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५४ ॥

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो । सोई धर्म अबाध, पूजत पद हम दीजिये ॥ ५५ ॥

ॐ ह्रीं परमात्मसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५५ ॥

सर्व सिद्धि नव निद्धि, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो । निजपद साधन सिद्ध, होत सही तिनको नमों ॥ ५६ ॥

ॐ ह्रीं परमसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५६ ॥

परम.गमकी शाख, परम अगम गुणगण सहित । सोई मनमें राख, श्रद्धायुत पूजा करों ॥ ५७ ॥

ॐ ह्रीं परमागमसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५७ ॥

गुण अनंत परकाश, महाविभवमय लसत हैं । आवर्णित पद नाश, ते पूजूं प्रणमूं सदा ॥ ५८ ॥

ॐ ह्रीं प्रकाशमानसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५८ ॥

स्वय सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाशमय । लसत नमूं मन आन, मम उर चिंता दुख हरो॥ ५९ ॥

ॐ ह्रीं स्वयभूसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५९ ॥

मन इन्द्रियसों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर । सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सिद्ध भए नमूं ॥ ६० ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ६० ॥

द्रव्य अनन्त गुणात्म, परणामी परसिद्धके, सोई पद निज आतम, साधत सिद्ध अनंत गुण ॥ ६१ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ६१ ॥

सर्व तत्वमें पर्म, गुण अनन्त परमातमा । सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमूं ॥ ६२ ॥

ॐ ह्रीं परमअनंतसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ६२ ॥

लोक शिखरके वास, पायो अविचल थान निज । सर्व लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमों ॥ ६३ ॥

ॐ ह्रीं लोकवाससिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ६३ ॥

काल त्रिभाग अनादि, शास्वत रूप विराजते । यातें नहिं सो आदि, नमि अनादि सिद्धानको ॥ ६४ ॥

ॐ ह्रीं अनादिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ६४ ॥

दोहा ।

सिद्धनके जु अनंत गुण कहिन सकैं गणराय । तिनसिद्धन को मैंजजूं पूरण अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं आनन्तगुणात्मक सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घं ।

यहां पर "ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः" इस मत्रं की १०८ वार जाप देनी चाहिए ।

अथ जयमाला

दोहा ।

तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जा पद करत प्रणाम । हम किह मुख वर्णन करैं, तिन महिमा अभिराम ॥ १ ॥

चौपाई ।

जय भविकुमुदनिमोदन चंदा, जयदिनन्द त्रिभुवन अरविंदा । भवतपहरण शरण रस कूपा, मद ज्वर वन्हि हरन घन रूपा
अकथित महिमा अमित अथाई, निर उपमेय सरसता नाई । भावलिंग विन कर्म खिपाई, द्रव्यलिंग विन शिवपद पाई
नय विभाग विन वस्तु प्रमाणा, दया भाव विन नहीं कल्याणा । पंगु सुमेरु चूलिका परसै, गूंग गान आरंभे स्वरसै
यों अयोग कारज नहिं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई । सर्व जैन शासन जिनमाहीं, भाग अनन्त धरै तुम नाहीं
गोखुरमें नहिं सिंधु समावै, वायस लोक अन्त नहिं पावे । तातें केवल भक्ति भाव तुम, पावन करो अपावन उर हम
जे तुम यश निज मुख उच्चारैं, ते तिहुं लोकसुजस विस्तारैं । तुम गुणगान मात्र कर प्रानी, पावै सुगुण महासुखदानी
जिन चित ध्यानसलिल तुम धारा, ते मुनि तीरथ हैं निरधारा तुम गुणहंस तुम्हीं सरवासी, वचन जालमें ले तन फासी

जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि। अक्षय शिव स्वरूप श्रिय स्वामी, पूर्ण निजानन्द विश्रामी
शरणागत सर्वस्वसुहितकर, जन्म मरण दुख आधि व्याधि हर। संतभक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजरअमर पद भागी

घत्तानंद छन्द।

सुखसागर शुभ सुजस उजागर, गुण आगर भव तारण हो। संत उधारण विपति विडारन, सुख कारण विस्तारन हो
तुम गुण गान परम फलदान, सो मत्र प्रमान विधान करूं। जहरी कर्मनि वैरी कहरी, असहैरी भव की व्याधि हरूं

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठीदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा ॥ १० ॥

॥ चतुर्थ पूजा सम्पूर्णम् ॥

अथ पंचमी पूजा।

छप्पै छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ सु विंदु हंकार विराजे, अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिवर, अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको। केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करों ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं नमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिनः १२८ गुणसहितविराजमाना अत्रावतरतावतरत संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट्।

दोहा।

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निरोग। सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥

इति यंत्र स्थापनं।

अथाष्टकं

चाल बारामासा छन्द।

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकान्तमणि, मणितें श्रवे सुधारा हो। कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूं पद अनुसारा हो ॥

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचरण उर धारा हो, चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन सुमिरतही भव पारा हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसौअट्ठाईसगुणसंयुक्ताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामि स्वाहा ॥ १ ॥

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं। सो चन्दन नन्दनवन भूषण, तुम पद कमल चढ़ावत हैं ॥

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचरण उर धारा हो चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन सुमिरतही भव पारा हो ॥२॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसौअट्ठाईसगुणसयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥ २ ॥

चंपक ही के भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए, शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुञ्जधार पद कंज नये।

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्ध चरण उर धारा हो, चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमिरत ही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति ॥ ३ ॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे। पुष्पमाल वासित विशाल सो, भेंट धरत उर काम दहे ॥

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचरण उर धारा हो, चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमिरत ही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसयुक्ताय कामवाणविनाशनाय पुष्पं निवपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

चितवत मन वरणत रसना रस, स्वाद लेत ही तृप्त थये। जन्मांतरहू क्षुधा निवारै, सो नेवज तुम भेट दये ॥

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो। चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमरतही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहिताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

रत्नमणि प्रभाअनूपम सुर निज, शीश धरणकी रास करे। या विन तुच्छविभव निज जानें, सो दीपक तुम भेट धरे ॥

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्ध चरण उर धारा हो, चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमिरत ही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

नीलंजसा सुरी नभमें ज्यों, ऋषभ भक्तिकर नृत्य कियो। सो तुम सन्मुखधूम उड़ावत, तिसछविको नहिं भाव लियो

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो। चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमरतही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

सेव रंगीले अनार रसीले, केलाकी लै डाल फली। डाली हू, नृपमाली हू, नातर प्रासुककी रीति भली ॥

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो। चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमरतही भवपारा हो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

एकसे एक अधिकसोहत वसु, जाति अर्घकरि चरण नमूं हूं। आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमतिवमूं हूं
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो। चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुमिरन, सुमरतही भवपारा हो॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं॥ ६॥

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अच्छत युत अनी, शुभ पुष्प मधुकर नित रमें चरू प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।
वरदीपमाल उजाल, धूपायन रसायन फल भले, करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है, दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमल.पती, मुनि ध्येय सेय अभेय चहूं गुण, गेह द्यो हम शुभमती॥ १०॥
ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिअधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं॥ १०॥

अथ एकसौअठाईस गुण सहित अर्घ

त्रोटक छन्द।

निरबाध सु तत्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो। अति शुद्धसुभाविक छायक है, नमूं दर्श महासुखदायक है
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घं॥ १॥
निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो। निरसंस चराचर जानत है, हम सिद्ध सु ज्ञान प्रमानत है
ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घं॥ २॥
सब राग विरोध निवारन है, निजभाव थकी निज धारन है। परमें न कभू निज भाव वहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय नमः अर्घं॥ ३॥
उतपाद विनाशन बाध धरै, परनाम सुभाव नहीं निसरै। तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहां
ॐ ह्रीं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घं॥ ४॥
निज भावनते व्यतिरिक्त न हो, प्रणमों गुणरूप गुणातम हो। यह वस्तु सुभाव सदा विलसो, हम पूजत हैं सब पाप नसो
ॐ ह्रीं वस्तुत्वधर्माय नमः अर्घं॥ ५॥
परिमाण न जानत है तिनको, छिन रोग न आवत है जिनको। अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं
ॐ ह्रीं अप्रमेयधर्माय नमः अर्घं॥ ६॥

गुण पर्य प्रमाण दशा नित ही, निजरूप न छांड़त हैं कित ही। जिन वैन प्रमाण सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ ७ ॥

जितने वस्तु हैं परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं। सुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं चेतनत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ ८ ॥

जिन अंग उपंग शरीर नहीं, जिन रंग प्रसंग सु तीर नहीं। नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं अमूर्तत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ ९ ॥

परको न कदाचित धर्म गहैं, निज धर्म सरूप न छांडत हैं। अति उत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वधर्माय नमः अर्घं ॥ १० ॥

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसैं। सुख ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्माय नमः अर्घं ॥ ११ ॥

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता विन भेद कही। निज जीव सुभाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं जीवत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ १२ ॥

मनको नहिं वेग लखावत हैं, जिस वैन नहीं बतलावत हैं। अति सूक्ष्म भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ १३ ॥

परघात न आप न घात करैं, इक खेत समूह अनन्त वरैं। अवगाह सरूप सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अवगाहनत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ १४ ॥

अविनाश सुभाव बिराजत हैं, विन व्याधि सरूप सु छाजत हैं। यह धर्म महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ १५ ॥

निजसों निजकी अनुभूति करैं, अपनो परसिद्ध सुभाव वरैं। निज ज्ञान प्रतीति सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं स्वसंवेदनज्ञानाय नमः अर्घं ॥ १६ ॥

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदेश रहै नित ही। यह ताप स्वरूप उधारत हैं, हम पूजत पाप बिडारत हैं ॥

ॐ ह्रीं स्वरूपतापतपसे सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७ ॥

निज नंत चतुष्टय राजत हैं, द्दग ज्ञान बलासुख छाजत हैं। यह आप महागुण सारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयात्मकाय नमः अर्घं ॥ १८ ॥

सुख समकित आदि महागुण हो, तुम साधित सिद्ध भए अब हो। यह उत्तमभाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वादिगुणात्मकसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १९ ॥ दोहा।

निश्चय पंचाचार सब, भेद रहित तुप साध। चेतनकी अति शक्तिमें, सब सूने निरबाध ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं पचाचाराचार्येभ्यो नमः अर्घं ॥ २० ॥ चौपाई।

सब विकलप तजि भेद सरूपी, निज अनुभूति मग्न चिद्रूपी। निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजू भेद भाव हम नासो

ॐ ह्रीं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ २१ ॥

करण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज भाव संवारी। करता भेद आप परिणामी, भेदाभेद रूप प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं स्वरूपसाधकसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ॥ २२ ॥

मनोयोग कृत जिय संसारी, क्रोधारम्भ करत दुखकारी। तासों रहित सिद्ध भगवाना, अन्तर शुद्ध करूं तिन ध्याना ॥

ॐ ह्रीं अकृतमन·क्रोधसरम्भमनोगुप्तये नमः अर्घं ॥ २३ ॥

परके मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा। सिद्धराज प्रणमूं तिस त्यागी, निर्विकल्प निजगुणके भागी ॥

ॐ ह्रीं अकारितमन·क्रोधसरम्भनिर्विकल्पधर्माय नमः अर्घं ॥ २४ ॥ भुजंगप्रयात छन्द।

मनोयोगरभाप्रशंसीक क्रोधा, निजानंदकोमानठानेअबोधा। महानिंदनीभावको त्यागदीना, निजानंदको स्वादहीआप लीना।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमन क्रोधसंरम्भसानदधर्माय नमः अर्घं ॥ २५ ॥

मनोयोग क्रोधीसमारंभ धारी, सदाजीवभोगे महाखेदभारी। महानंद आख्यातको भाव पायो, नमो सिद्धसोदोष नाहीं उपायो

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसमारभपरमानंदाय नमः अर्घं ॥ २६ ॥ दोहा।

समारम्भ क्रोधित सुमन, परकारित दुख नाहिं। परमातम पद पाइयो, नमूं सिद्ध गुण ताहि ॥ २७ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घं ॥ २७ ॥ भुजंगप्रयात छन्द।

समारम्भ क्रोधी मनोयोग माही, धरेमोदना भावको जीवताही। भयेआपसंतुष्ट ये त्याग भावा, नमूं सिद्धसो दोसनाहीं उपावा

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसमारंभपरमानंदसतुष्टाय नमः अर्घं ॥ २८ ॥ पद्धड़ी छन्द।

निज क्रोधित मन आरम्भठान, जग जिय दुखमें सुख रहे मान। सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूं धर हिये चाव

ॐ ह्रीं अकृतमनः क्रोधारम्भस्वसंस्थानाय नमः अर्घं ॥ २९ ॥

क्रोधित मनसो आरम्भ हेत, पर प्रेरित निज अपराध लेत। जग जीवन को विपरीत रीत, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत

ॐ ह्रीं अकारितमन:क्रोधारम्भबन्धसंस्थानाय नमः अर्घं ॥ ३० ॥

क्रोधित मनसों आरंभ देख, जिस मानत है आनंद विशेख। तुम सत्य सुखी इह भाव धार, भये सिद्ध नमूं उर हर्ष धार

ॐ ह्रीं नानुमोदितमन क्रोधारंभस्थापनाय नम: अर्घं ॥ ३१ ॥ दोहा।

मान योग मन रंभमें, वरतत है जगजीव। भये सिद्ध संक्लेश तजि, तिन पद नमूं सदीव ॥ ३२ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसरम्भसाधर्माय नम अर्घं ॥ ३२ ॥

मान उदय मन योगतें, परको रम्भ करान। त्याग भये परमातमा, नमूं सरन पर हान ॥ ३३ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसरम्भअनन्यशरणाय नमः अर्घं ॥ ३३ ॥

मान सहित मन रभमें, जगजिय राखे चाव। नमों सिद्ध परमातमा, जिन त्यागो इह भाव ॥ ३४ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसंरम्भसुगुणभावाय नमः अर्घं ॥ ३४ ॥ अडिल्ल छन्द।

समारम्भ परिवर्तमान युत मन धरे, विकलपमई उपकरण विविध इकठे करे।

महा कष्टको हेत भाव यह ना गहो, प्रणमूं सिद्ध अनन्त सुखातम गुण लहो ॥ ३५ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भसुखातमगुणाय नमः अर्घं ॥ ३५ ॥

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करे, समारम्भ पर कृत्य करावन विधि वरे।

तहां कष्टको हेत भाव यह ना गहो, प्रणमूं सिद्ध अनन्तगुणातम पद लहो ॥ ३६ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भअनन्यगताय नम अर्घं ॥ ३६ ॥

जोडे चित न समाज विविध जिस काजमें, समारम्भ तिस नाम सोमति जिनराजमें।

माने मानी मन आनन्द सु निमितसे, नमूं सिद्ध है अतुल वीर्य त्यागत तिसे ॥ ३७ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारंभअनन्तवीर्याय नमः अर्घं ॥ ३७ ॥

अशुभ काज परिवर्त नाम आरम्भको, मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो।

जगवासी जिय नित प्रति पाप उपाय है, नमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय है ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घं ॥ ३८ ॥ दोहा।

मनो मान आरम्भके, भये अकारित आप। अतुल ज्ञान धारी भए, नमत नसै सब पाप ॥ ३९ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानारम्भअनन्तज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ३९ ॥

मनो मान आरम्भमें, नानुमोदि भगवंत । गुण अनन्त युत सिद्धपद, पूजत हैं नित संत ॥ ४० ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानआरम्भअनंतगुणाय नमः अर्घं ॥ ४० ॥

गीताछन्द ।

जो अशुभ काज विकल्प हो, संरम्भ मनयुत कुटिलता । कर कर अनादित रंकजिय, बहु भांति पाप उपावता ॥
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्ध ब्रह्मस्वरूप हो । हम पूजि हैं नित भक्ति युत, तुम भक्ति वत्सलरूप हो ॥ ४१ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासंरम्भब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४१ ॥

दोहा ।

मायावी मनतें नहीं, व.बहु आरम्भ कराय । सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूं सदा मन लाय ॥ ४२ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासंरम्भचैतन्यभावाय नमः अर्घं ॥ ४२ ॥

मायावी मनतें कभी, रंमानन्द न होय । सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूं सदा मद खोय ॥ ४३ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासंरम्भअनन्यस्वभावाय नमः अर्घं ॥ ४३ ॥

पद्धडी छन्द ।

मायावी मनतें समारंभ, नहिं करत सदा हो अचल खंभ । तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित नमन करों धरि मन उमंग

ॐ ह्रीं अकृतमनो मायासमारंभस्वानुभूतिरताय नमः अर्घं ॥ ४४ ॥

मन वक्र द्वार उपकरण ठान, विधि समारंभको नहिं करान । निज साम्य धर्ममें रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमो पद धार चित्त

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासमारंभसाम्यधर्माय नमः अर्घं ॥ ४५ ॥

दोहा ।

मायावी मनमें नहीं, समारंभ आनन्द । नमो सिद्धपद परम गुरु पाऊं पद सुख वृन्द ॥ ४६ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासमारंभगुरवे नमः अर्घं ॥ ४६ ॥

पद्धड़ी छन्द ।

बहु विधि करि जोड़ें अशुभ काज, आरम्भ नाम हिंसा समाज । मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूं यह विधि हरेय

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायारम्भपरमशांताय नमः अर्घं ॥ ४७ ॥

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप । सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायारंभनिराकुलाय नमः अर्घं ॥ ४८ ॥

दोहा ।

मायावी आरम्भ करि, मनमें आनंद मान । सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान ॥ ४९ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायारंभअनन्तसुखाय नमः अर्घं ॥ ४९ ॥

लोभी मनद्वारे नहीं, करै सदा समरंभ । हम अनन्तदृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ ॥ ५० ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भअनंतदृगात्मने नमः अर्घं ॥ ५० ॥

लोभी मन समरंभको, परसों नहीं कराय। दृगानन्द भावातमा, सिद्ध नमूं मन लाय ॥ ५१ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसंरंभदृगानंदभावाय नमः अर्घं ॥ ५१ ॥

लोभी मन समरंभको, भावे नहिं आनन्द। नमूं नमूं परमातमा, भये सिद्ध जगवंद ॥ ५२ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसंरंभसिद्धभावाय नमः अर्घं ॥ ५२ ॥

समारम्भ नहिं करत हैं, लोभी मनके द्वार। चिदानन्द चिद्देव तुम, नमूं लहूं पद सार ॥ ५३ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भचिद्देवाय नमः अर्घं ॥ ५३ ॥

परसों भी पूर्वोक्त विधि, कबहूं नहीं कराय। निराकार परमात्मा, नमूं सिद्ध हर्षाय ॥ ५४ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसमारंभनिराकाराय नमः अर्घं ॥ ५४ ॥

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं। चित्सरूप साकारपद, धारत हूं उरमहिं ॥ ५५ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसमारंभसाकाराय नमः अर्घं ॥ ५५ ॥

रचना हिंसा काजकी, लोभी मनके द्वार। नहीं करै हैं ते नमूं, चिदानंद पद सार ॥ ५६ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभारंभचिदानंदाय नमः अर्घं ॥ ५६ ॥

लोभी मन प्रेरित नहीं, परको आरंभ हेत। चिन्मय रूपी पद धरै, नमूं लहूं निज खेत ॥ ५७ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभारंभचिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५७ ॥

मन लोभी आरंभमें, आनंद लहे न लेश। निजपदमें नित रमत है, ध्याऊं भक्ति विशेष ॥ ५८ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारंभस्वरूपाय नमः अर्घं ५८ ॥

अडिल्ल छन्द।

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोगको, रचना विधि संकल्प नाम समरंभ सो।
तामें करैं प्रवृत्ति पाप उपजावते, नमूं सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते ॥ ५९ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरंभवाग्गुप्ताय नमः अर्घं। ५९ ॥

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावही, वचन योग करि विधि संरंभ करावही।
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो, नमूं उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो ॥ ६० ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरंभस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ६० ॥

सोरठा।

क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरंभमें। सो तुम भाव विडार, नमूं स्वानुभव लब्धियुत ॥ ६१ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसंरंभस्वानुभवलब्धये नमः अर्घं ॥ ६१ ॥

दोहा।

क्रोध सहित वाणी नहीं, समारंभ परव्रत्त। स्वानुभूति रमणी रमण, नमूं सिद्ध कृतकृत्य ॥ ६२ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारंभस्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घं ॥ ६२ ॥

समारंभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार। नमूं सिद्ध इस कर्म विन, धर्मधरा साधार ॥ ६३ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारंभसाधारणधर्माय नमः अर्घं ॥ ६३ ॥

समारंभ-मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध। नमूं सिद्ध या विन लहो, परम शांति सुख बोध ॥ ६४ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारम्भपरमशांताय नमः अर्घं ॥ ६४ ॥

छन्द मोतीदाम।

वरैं वचयोग धरैं जिय रोष, करैं विधि भेद अरम्भ सदोष। तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूं परमामृत तुष्ट अवार

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नमः अर्घं ॥ ६५ ॥

अकारित वैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार अरम्भ अबोध। भये समरूप महारस धार, नमें हम सिद्ध लहैं भवपार

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नमः अर्घं ॥ ६६ ॥

दोहा।

नानुमोद आरम्भमें, क्रोध सहित वच द्वार। परम प्रीति निज आत्मरति, नमूं सिद्ध सुखकार ॥ ६७ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारंभपरमप्रीतये नमः अर्घं ॥ ६७ ॥

अडिल्ल।

वचन द्वार संरम्भ मानयुत जे करैं, जोड़ करन उपकरण मानसो ऊचरैं।
नाना विधि दुख भोग निजातमको हरैं, नमूं सिद्ध या विन अविनश्वर पद धरैं ॥ ६८ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसंरम्भअविनश्वरधर्माय नमः अर्घं ॥ ६८ ॥

मान प्रकृति करि उदै करावे ना कदा, वचनन करि संरम्भ भेद वरणूं यदा।
मन इन्द्रिय अव्यक्त स्वरूप अनूप हो, नमूं सिद्ध गुण सागर स्वातम रूप हो ॥ ६९ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसंरम्भअव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ६९ ॥

सोरठा।

नानुमोद वच योग, मान सहित संरम्भ मय। दुर्लभ इन्द्री भोग, परम सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ७० ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसंरम्भदुर्लभाय नमः अर्घं ॥ ७० ॥

चौपाई।

समारंभ जिन बैनन द्वार, करत नहीं है मान संभार। ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य हैं निर आकार ॥ ७१ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसमारंभपरमगम्यनिराकाराय नमः अर्घं ॥ ७१ ॥

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारंभ विधि नाहि करान। शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूं सिद्ध उर आनंद धार ॥७२॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसमारंभपरमस्वभावाय नमः अर्घं ॥ ७२ ॥

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय; समारंभ मय हर्षित सोय। त्यागत एक रूप ठहराय, नमूं एकत्व गती सुखदाय ॥ ७३ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसमारंभएकत्वगताय नमः अर्घं ॥ ७३ ॥

मानीजिय निज वचन उचार, वरतत है आरंभ मझार। परमातम हो तजि यह भाव, नमूं धर्मपति धर्म प्रभाव ॥ ७४ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानारंभपरमात्मधर्माय धर्मस्वभावाय नमः अर्घं ॥ ७४ ॥

सोरठा।

मानी बोले बैन, परप्रेरण आरम्भमें। सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमूं ॥ ७५ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानारम्भशाश्वतानन्दाय नमः अर्घं ॥ ७५ ॥

हर्षित वचन उचार, मान सहित आरंभमय। सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमूं ॥ ७६ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानारंभअमृतपूरणाय नमः अर्घं ॥ ७६ ॥

पद्धड़ी छन्द।

धरि कुटिल भाव जो कहत बैन, संरम्भ रूप पापिष्ठ ऐन। तुम धन्य धन्य यह रीति त्याग, होवे दृढ़ धर्मस्वरूप भाग

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासंरम्भअनन्तधर्मैकरूपाय नमः अर्घं ॥ ७७ ॥

मायायुत वचननको प्रयोग, संरम्भ करावत अशुभ योग। तुम यह कलंक नहीं धरो लेश, हो अमृत शशि पूजूं हमेश

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासंरंभअमृतचन्द्राय नमः अर्घं ॥ ७८ ॥

वचमाया युत सरंभ कीन, सो पापरूप भाषो मलीन। तिस त्याग अनेक गुणात्म रूप, राजत अनेक मूरत अनूप

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरम्भअनेकमूर्तये नमः अर्घं ॥ ७९ ॥

तुम समारंभकी विधि विधान, नहिं करत कुटिलता भेद ठान। हो नित्य निरञ्जन भाव युक्त, मैं नमूं सदा संशय विमुक्त

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासमारंभनित्यनिरञ्जनस्वभावाय नमः अर्घं ॥ ८० ॥

दोहा।

मायायुत निज बैनते, समारंभके हेत। नहिं प्रेरित परको नमूं, निजगुण धर्म समेत ॥ ८१ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासमारंभआत्मैकधर्माय नमः अर्घं ॥ ८१ ॥

मायाकरि बोलत नहीं, समारंभ हर्षाय। सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमूं, नमूं सिद्ध मन लाय ॥ ८२ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारम्भपरमसूक्ष्माय नमः अर्घं ॥ ८२ ॥

मायायुत आरंभकी, बचन प्रवृत्ति नशाय। नमि अनन्त अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय ॥ ८३ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायारम्भअनन्तावकाशाय नमः अर्घं ॥ ८३ ॥

मायायुत आरम्भ मय, मेट वचन उपदेश। भये अमल गुण ते नमूं, रागद्वेष नहिं लेश ॥ ८४ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायारंभअमलगुणाय नमः अर्घं ॥ ८४ ॥

मायायुत आरम्भ मय, मेट वचन आनन्द। भये अनन्त सुखी नमूं सिद्ध सदा सुखवृन्द ॥ ८५ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायारम्भनिरवधिसुखाय नमः अर्घं ॥ ८५ ॥

अडिल्ल छन्द।

जो परिग्रहकी चाह लोभसो मानिये, विधि विधान ठानत संरम्भ बखानिये।
वचन द्वार नहीं करे नमूं परमातमा, सब प्रत्यक्ष लखें व्यापक धर्मातमा ॥ ८६ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसंरम्भव्यापकधर्माय नमः अर्घं ॥ ८६ ॥

वर्तावन सरम्भ हेत परके तई, लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई।
नमूं सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो, सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो ॥ ८७ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसंरंभव्यापकगुणाय नमः अर्घं ॥ ८७ ॥

लोभी वच संरम्भ हर्ष परकाशनं, नाना विधि सञ्चरे पाप दुखराशनं।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपद पाइयो, नमूं अचल गुण सहित सिद्ध मन भाइयो ॥ ८८ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरंभअचलाय नमः अर्घं ॥ ८८ ॥

सोरठा

समारम्भके बैन, लोभ सहित पर आसरैं। तज निरलम्बी ऐन, नमूं सिद्ध उर धारिके ॥ ८९ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसमारंभनिरालंबाय नमः अर्घं ॥ ८९ ॥

समारंभ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें। पायो अचल स्वदेश, नमूं निराश्रय सिद्ध गुण ॥ ९० ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसमारंभनिराश्रयाय नमः अर्घं ॥ ९० ॥

नानुमोद वच लोभ, समारंभ परवृत्तमें नमूं तिन्हैं तजि चोभ, नित्य अखण्ड विराजतें ॥ ९१ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारंभअखण्डाय नमः अर्घं ॥ ९१ ॥

दोहा।

लोभ सहित आरंभको, करत नहीं व्याख्यान। नूतन पंचम गति लहो, नमूं सिद्ध भगवान ॥ ९२ ॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभारंभपरितावस्थाय नमः अर्घं ॥ ९२ ॥

लोभ वचन आरंभको, कहत न परके हेत। समयसार परमातमा, नमत सदा सुख देत ॥ ९३ ॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नमः अर्घं ॥ ९३ ॥

नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरंभमय । अजर अमर सुखकार, नमूं निरन्तर सिद्धपद ॥ ९४ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरंतराय नमः अर्घं ॥ ९४ ॥

क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी, करत समस्या निंद्य सरंभ प्रकाशनी ।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा, दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूं सदा ॥ ९५ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरंभकायगुप्तये नमः अर्घं ॥ ९५ ॥

पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरभ तज । चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूं सदा ॥ ९६ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरंभशुद्धकायाय नमः अर्घं ॥ ९६ ॥

हर्षित शीश हिलाय क्रोध उदय समरंभमें । त्यागत भये अकाय, नमूं सिद्ध पद भावयुत ॥ ९७ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसमरंभअकायाय नमः अर्घं ॥ ९७ ॥

समारंभविधि मेटि, कायकुचेष्टा क्रोधकी । स्वै गुणपर्य समेट, भक्ति सहित प्रणमूं सदा ॥ ९८ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारंभस्वान्वयगुणाय नमः अर्घं ॥ ९८ ॥ दोहा

समारंभ विधि क्रोध युत, तनसों नहीं कराय । नित प्रति रति निजभावमें, वंदूं तिनके पाइ ॥ ९९ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभावरतये नमः अर्घं ॥ ९९ ॥

समारंभ सो कायसों, क्रोध सहित परसंस । स्वैं अभिन्न पद पाइयो, नमूं त्याग सरवंस ॥ १०० ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदिकायक्रोधसमारंभसान्वयधर्माय नमः अर्घं ॥ १०० ॥

क्रोधित कायारंभ तजि, परसों रहित स्वभाव । शुद्ध द्रव्यमें रत नमूं, निज सुख सहज उपाव ॥ १०१ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधारभशुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घं ॥ १०१ ॥

क्रोधित कायारंभ नहि, रंच प्रपंच कराय । पंच रूप संसार हनि, नमि पंचमगति राइ ॥ १०२ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधारभसंसारछेदनाय नमः अर्घं ॥ १०२ ॥

क्रोधित कायारम्भमें, हर्ष विषाद विडार । अनेकान्त वस्तुत्व गुण, धरै नमो पद सार ॥ १०३ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारंभजैनधर्माय नमः अर्घं ॥ १०३ ॥

मान सहित संरंभकी, तनसो रचना त्याग । पर प्रवेश विन रूप जिन, लियो नमूं बड़भाग ॥ १०४ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमानकायसंरभस्वरूपगुप्तये नमः अर्घं ॥ १०४ ॥

मान उदय संरंभ विधि, तनसों नहीं कराय। निज कृत पर उपकार विन, लियो नमूं तिन पाइ ॥ १०५ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमानकायसंरंभनिजकृतये नमः अर्घं ॥ १०५ ॥

मान सहित सरंभमें, तनसों हर्ष न लेश। ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूं अशेष ॥ १०६ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमानकायसंरम्भध्येयभावाय नमः अर्घं ॥ १०६ ॥

मदयुत तनसों रंच भी, समारंभ विधि नाहिं। परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूं ताहि ॥ १०७ ॥

ॐ ह्रीं अकृतमानकायसमारंभपरमाराधनाय नमः अर्घं ॥ १०७ ॥

समारंभ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय। ज्ञानानंद सुभाव युत, प्रणमूं शीश नवाय ॥ १०८ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमानकायसमारम्भआनदगुणाय नमः अर्घं ॥ १०८ ॥

समारंभ मय विधि सहित, तनसों हर्ष न होय। निजानन्द नंदित तिन्हैं, नमूं सदा मद खोय ॥ १०९ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमानकायसमारम्भस्वानंदनंदिताय नमः अर्घं ॥ १०९ ॥ चौपई

अकृत मानारम्भ शरीर, पर अनिन्द्य वन्दू धर धीर सिद्ध वसें जुलोक के अन्त, नमो करौ हमरो भव अन्त॥ ११० ॥

ॐ ह्रीं अकृतमानकायारम्भसंतोषाय नमः अर्घं ॥ ११० ॥

कायारम्भ अकारित मान, स्वसरूप रत वन्दू तान। सिद्ध वसें जुलोक के अन्त, नमो करौ हमरो भव अन्त ॥ १११ ॥

ॐ ह्रीं अकारितमानकायारम्भस्वरूपरताय नमः अर्घं ॥ १११ ॥

मानारम्भ अनंदित काय। प्रणमूं विमल शुद्ध पर्याय। शुद्ध आत्मात्रय जग ईश, तिन को सदा नवाऊं शीस ॥११२॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमानकायारम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ११२ ॥ दोहा

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप। गुप्त निजामृत रस लहै, नमूं तिन्हैं तज पाप ॥ ११३ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भअमृतगर्भाय नमः अर्घं ॥ ११३ ॥

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय। मुख्य धर्म चैतन्यता, विलसैं प्रणमूं पाय ॥ ११४ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्याय नमः अर्घं ॥ ११४ ॥

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोदयुत काय। वीतराग आनंद पद, समरस भावन भाय ॥ ११५ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भसमरसीभावाय नमः अर्घं ॥ ११५ ॥

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद। बन्ध दसा स्वै पर द्विविधि, नमत नसै भव खेद ॥ ११६ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भभवछेदकाय नमः अर्घं ॥ ११६ ॥

समारम्भ तन कुटिलसों, भए अकारित स्वाम । निज पारणात सा परिणए गुण स्वातंत्र नमामि ॥ ११७ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासमारंभस्वातंत्र्यधर्माय नमः अर्घं ॥ ११७ ॥

नानुमोद तन कुटिलता, समारंभ विधि देव । गुण अनंत युत परिणमूं, धर्म समूही एव ॥ ११८ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूहाय नमः अर्घं ॥ ११८ ॥

मायायुत निज देहसों, नहिं आरम्भ करेह । परमातम सुख अच्च विन, पायो वन्दूं तेह ॥ ११९ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घं ॥ ११९ ॥

मायारम्भ शरीर करि, पग्मों नहीं करान । निष्ठातम स्वस्थित नमूं, सिद्धराज गुणखान ॥ १२० ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्ठात्मने नमः अर्घं ॥ १२० ॥

मायारम्भ शरीरसों, नानुमोद भगवन्त । दर्श ज्ञानमय चेतना, सहित नमें नित सन्त ॥ १२१ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नमः अर्घं ॥ १२१ ॥

पद्धड़ी छन्द ।

संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग । धारक सिद्धन को धरूं ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान

ॐ अकृतकायलोभसंरम्भपरमचित्परिणताय नमः अर्घं ॥ १२२ ॥

संरम्भ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्वयमेव तेह । धारक सिद्धन को धरूं ध्यान । तुम मेटो मेरो सब अज्ञान

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भस्वसमयरताय नमः अर्घं ॥ १२३ ॥

संरम्भ लोभ तन हर्ष नाश, नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश । धारक सिद्धन को धरूं ध्यान, तुम मेटो मेरो सब अज्ञान

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भव्यक्तधर्माय नमः अर्घं ॥ १२४ ॥

सोरठा ।

लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशके । ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूं सिद्धपद ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भनित्यसुखाय नमः अर्घं ॥ १२५ ॥

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि । पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूं सदा ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भअकषायाय नमः अर्घं ॥ १२६ ॥

पूर्ववर्तनानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें । पायो शौच स्वछन्द, नमूं सिद्धपद भक्ति युत ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घं ॥ १२७ ॥

दोहा ।

द्वार आरम्भकी, लोभ उदय विधि नाश । नमो चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभारम्भचिदात्मने नमः अर्घं ॥ १२८ ॥

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय। निज अवलम्बित पद लियो, नमूं सदा तिन पाइ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभारम्भनिरालंबाय नमः अर्घं ॥ १२६ ॥

लोभी तन आरम्भमें, आनद रीती मेंट। नमूं सिद्ध पद पाइयो, निज आतम दृग श्रेष्ठ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भआत्मरतसिद्धाय नमः अर्घं ॥ १३० ॥

सवैया इकतीसा।

जेते कछु पुदगल परमाणु शब्दरूप, भये हैं अतीत काल आगे होनहार हैं।
तिनको अनन्त गुण करत अनन्तवार, ऐसे महाराशी रूप धरैं विसतार हैं ॥
सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातमके, मानो गुण गण उचरन अर्थ धार हैं।
तौभी एक समयके अनन्त भाग आनंद, कहत न कहैं हम कौन परकार हैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १ ॥

यहां पर " ॐ ह्रीं अर्हं आसिआउसा नमः " इस मन्त्र की १०८ वार जाप देनी चाहिये।

अथ जयमाला

दोहा।

शिवगुण सरधा धार उर, भक्ति भाव है सार। केवल निज आनंद करि, करूं सुजस उचार ॥ २ ॥

पद्धड़ी छन्द।

जय मदनकदन मनकरण नाश, जय शांतिरूप निज सुखविलास। जय कपटसुभट पट करन सूर, जयलोभ चोभ मदम्भ चूर पर परणति सों अत्यन्त भिन्न, निजपरणति सों अति ही अभिन्न। अत्यन्तविमल सबही विशेष, मललेशशोध राखो न लेश मणिदीप सार निर्विघ्नज्योति, स्वाभाविक निज उद्योत होत। त्रैलोक्यशिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड मुनिमन मन्दिरको अन्धकार, तिस ही प्रकाशसौं नशत सार। सो सुलभरूप पायो न अर्थ, जिसकारण भव भव भ्रमें व्यर्थ जो कल्प कालमें होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध। भवि पतितनको उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नहिं पार पाह। जो भवदधि पार अभव्य राम, पावे न वृथा उद्यम प्रयास जिनमुख द्रहसों निकसी अभंग, अतिवेग रूप सिद्धान्त गंग। नय सप्त भंग कल्लोल मान, तिहुँ लोक वही धारा प्रमान याते जगमें तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम। सो तुम ही सों हैं शोभनीक, नातर जल सम जड़ वहै सुठीक

निजपर आतम हित आत्म भूत, जबसे है जब उतपति सूत। ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अग्नि दाह
त्यों आप महामंगल स्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप। हूं सन्त दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावै पद प्रवीण
तातैं मन वच तन भाव धार। तुम सिद्धनकूं मम नमस्कार ॥

दोहा।

जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव। अग्नि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाय ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टाविंशत्यधिकशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १३ ॥

इति पचमी पूजा सम्पूर्ण।

अथ श्री षष्ठी पूजा २५६ गुण सहित।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हंकार विराजै, अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वग्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधि धर, अग्र भागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम सुर ध्यावत अरि नागको। है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन: २५६ गुणसहितविराजमाना अत्रावतरतावतरत संवौषट आह्वानं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं।

दोहा।

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निरोग। सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥ २ ॥

इति यत्र स्थापनं।

अथाष्टकं।

गीता छन्द।

अति नम्रता तिहुं योगमें तिन भक्ति निर्मल भावहीं। यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं ॥
यह उभय द्रव्य सयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वि अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं ॥ १ ॥

अति वास विषयन वासना युत मलय शील सुभावहीं, अरु चन्दनादि सुगन्ध द्रव्य मनोज्ञ प्रासुक लावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं ॥ २ ॥

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं, तिस सार अक्षत अखय स्वच्छ सुवास पुंज बनावहीं।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं, द्वै अर्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दोसैछप्पनगुणसहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

मन रागभक्त्यनुराग आनद ताग माल पुरावही। तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नाग बाज सु लावही ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दोसैछप्पन गुणसहिताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ पुष्पं

जिन भक्ति रसमें तृप्तता मन आन स्वाद न चावही। अंतर चरू बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावही ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावही। मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावही ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

आनन्द धर्म प्रभावाना मनघटा धूम्र सु छावहीं। गंधित दरव शुध घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावही ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावही। रसना लुभावन कल्पतरुके सुर असुर मन भावही ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं। द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

समकित विमल वसु अंग युतकरि अर्घ अन्तर भावही। वसु दरव अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावही।

यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं । द्वै अर्द्ध शत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहिताय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं ॥ ६ ॥

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी, शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वादसु विधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले, करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है, दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है ।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती । मुनि ध्येय सेय अभेय चहुंगुण, गेह द्यो हम शुभमती ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण सिद्धचक्राधिपतये पूर्णार्घं ॥ १ ॥

अथ २५६ गुण सहित नामावली अर्घ ।

चौपाई ।

मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंतर विधि संसारा । तिस हनि समरथ अतिशय रूपा, केवल पाय नमूं शिव-भूपा

ॐ ह्रीं चिरतरसंसारकारण ज्ञाननिर्द्धूतोद्भूतकेवलज्ञानातिशयसंपन्नाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घं ।

मन इन्द्रियनिमित्त मति ज्ञाना, योग देश तिष्ठत पद जाना । क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो

ॐ ह्रीं अभिनिबोधवारकविनाशकाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घं ॥ २ ॥

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद वखाना । क्षयउपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं द्वादशश्रुतावरणकर्मविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३ ॥

है असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञानके भेद सु तेते । क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं असंख्यलोकभेदावधिज्ञानावरणविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४ ॥

है असंख्य परमान प्रमाना, मनपर्ययके भेद बखाना । क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं असंख्यप्रकारमन पर्ययज्ञानावरणविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५ ॥

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत्य स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमानं । केवल आवर्णी विधि नाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं निखिलरूपगुणपर्यायबोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६ ॥

द्वारपती भूपतिके ताईं, रोक रहै देखन दे नाहीं। सोई दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं सकलदर्शनावरणविनाशकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ७ ॥

मूर्तीक पदको प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवे परकाशन। चक्षु दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं चक्षुदर्शनावरणकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८ ॥

दृगविन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उधारे। अदृगदर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं अचक्षुदर्शनावरणरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९ ॥

देशकाल द्रव भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सव ठानं। अवधि दर्श आवरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं अवधिदर्शनावरणरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १० ॥

विन मर्याद सकल तिहुं काल, होय प्रगट घटपट तिहं हाल। केवल दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरणरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११ ॥

वैठे खड़े पड़े घुम्मरिया, देखे नहिं निद्राकी विरिया। निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं निद्राकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२ ॥

सावधान कितनी की जावे, रंच नेत्र उघड़न नहीं पावे। निद्रा निद्रा कर्म विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३ ॥

मंदरूप निद्राका आना, अवलोकै जाग्रत समाना। प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४ ॥

मुखसों लार वहै अति भारी, हस्त पाद कंपत दुखकारी। प्रचला प्रचला कर्म विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५ ॥

सोता हुआ करै सव काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा। यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमो सिद्धस्वज्ञान प्रकाशो ॥

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६ ॥

जे पदार्थ हैं इन्द्रिय योग, ते सव वेदे जिय निज जोग। सोई नाम वेदनी होई, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोई ॥

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७ ॥

रतिके उदय भोग सुखकार, पावे जिय शुभ विविध प्रकार। साता भेद वेदनी होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥

ॐ ह्रीं सातावेदनीयकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८ ॥

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार। एही भेद असाता होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥

ॐ ह्रीं असातावेदनीयकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १९ ॥

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधितें सो जान। ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय

ॐ ह्रीं मोहकर्मरहितायसिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २० ॥

जाके उदय तत्व परतीत, सत्य रूप नहिं हो विपरीत। पंच भेद मिथ्यात निवार, भये, सिद्ध प्रणामूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं मिथ्यात्वकर्मविनाशकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१ ॥

प्रथमोपशम समकित जब गले, मिथ्या समकित दोनों मिले। मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणामूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्वकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२ ॥

दर्शनमें कुछ मल उपजाय, करै समल नहिं मूल नसाय। समय प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणामूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्प्रकृतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३ ॥

धर्ममार्गमें उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष। यह अनन्त अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणामूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धक्रोधकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४ ॥

देव धर्म गुरुमों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान। यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणामूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमानकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५ ॥

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै। यह अनन्त अनुबंध निवार, प्रणामूं सिद्ध महासुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमायाकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २६ ॥

लोभ उदय निर्मालय दर्व, भखे महानिंद मति सर्व। यह अनन्त अनुबन्ध निवार, भये सिद्ध प्रणामूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीलोभकर्मरहिताय नमः अर्घं ॥ २७ ॥

सुन्दरी छन्द।

क्रोध करि अणुव्रत नहिं लीजिये, चरित मोह प्रकृति सु भनीजिए। है अप्रत्याख्यानी कर्मसो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २८ ॥

मान करि अणुव्रत्त न हो कदा, रहै अव्रत युत दर्शन सदा। है अप्रत्याख्यानी कर्मसो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २९ ॥

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रताको जहं उद्योत है। है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३० ॥

मोह लोभ चरित जे जिय वसै, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसै। है अप्रत्याख्यानी कर्मसो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३१ ॥

अडिल्ल छन्द मात्रा २१।

प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरैं, देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरैं।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोधविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३२ ॥

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है, जास उदय पूरण संयम अव्यक्त है।
चरित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानवरणमानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३३ ॥

प्रत्याख्यानी माया मुनि पदकों हनै, श्रावक वृत पूरण नहीं खण्डे जासतै।
चरित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३४ ॥

श्रावक पदमें जास लोभको वास है, प्रत्याख्यानी श्रुतमें संज्ञा तास है।
चरित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३५ ॥

भुजंगप्रयात छन्द।

यथाख्यातचारित्रको नाशकारा, महावृत्तको जास में हो उजारा।
यही संज्वलनक्रोध सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं संज्वलनक्रोधरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३६ ॥

रहै संज्वलन रूप उद्योत जेते, न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते।
यही संज्वलन मान सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं सज्वलनमानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३७ ॥

वहै संज्वलनकी जहां मंद धारा, लहै है तहां शुक्लध्यानी उभारा।
यही संज्वलन वक्र सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमायारहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३८ ॥

जहां संज्वलन लोभ है रंच नांही, निजानन्दको वास होवे तहांही ।
यही सज्वलन लोभ सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया ॥

ॐ ह्रीं सज्वलनलोभरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ३९ ॥

छन्द मोदक ।

जाकरि हास्यभावजुलहातहिं, हास्य क्रिये परकी यह पातहिं । सो तुमनाश कियो जगनाथहिं, शीशनमूं तुमको धरि हाथहिं

ॐ ह्रीं हास्यकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४० ॥

प्रीति करै पर मो रतिमानहिं, सो रतिभेद विधी तिस जानहि । सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूं तुमको धरि हाथहिं

ॐ ह्रीं रतिकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४१ ॥

जो परसों परसन्न न हो मन, आर्पति रूप रहे नित आनन । सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं

ॐ ह्रीं अरतिकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४२ ॥

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सु शोभहिं । सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुमको धरिहाथहिं

ॐ ह्रीं शोककर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४३ ॥

हो उद्वेग उचाटन रूपहिं, मन तन कंपित होत अरूपहिं । सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूं तुमको धरि हाथहिं

ॐ ह्रीं भयकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४४ ॥

सवैया ।

जो परको अपराध उघारत, जो अपनो कछु दोष न जाने, जो परके गुण औगुण जानत, जो अपने गुणको प्रगटाने
सो जिनराज वखान जुगुप्सित, है जियनो विधिके वश ऐसो, हे भगवंत नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिनमें अरि तैसो

ॐ ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४५ ॥

जो नर नारि रमावनकी, निजसों अभिलाष धरै मनमाहीं, सो अति ही परकाश हिये नित, कामकी दाह मिटै छिन माहीं
सो जिनराज वखान नपुन्सक, वेद हनो विधिके वश ऐसो, हे भगवंत नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिनमें अरि तैसो

ॐ ह्रीं नपुन्सकवेदरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४६ ॥

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरन से कछु आनन्द माने । किंचित काम जगै उरमें नित, शांति सुभावनकी सुध ठाने
सो जिनराज वखानत है नर, वेद हनो विधिके वश ऐसो । हे भगवन्त नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिनमें अरि तैसो ॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४७ ॥

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ न जानत कोई । हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई ॥

सो जिनराज वखानत है तिय, वेद हनो विधिके वश ऐसो । हे भगवन्त नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिनमें अरि तैसो

ॐ ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४८ ॥

वसन्ततिलका छन्द ।

आयु प्रमाण दृढ बन्धन और नाहीं, गत्यानुसार थिति पूरण करण माहीं ।
सोई गिनाश कीनो तुम देवनाथा, वंदू तुम्हैं तरण कारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं आयुकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ४९ ॥

जो है कलेश अवधी वम होत जासो, तेतीस सागर रहै थिति नर्क जासों ।
सोई विनाश कीनो तुम देवनाथा, वंदू तुम्हैं तरण कारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं नरकायुरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५० ॥

जासों करै त्रियगकी थिति आयु पूरी, सोई कहो त्रियग आयु महालघूरी ।
सोई विनाश कीनो तुम देवनाथा, वंदू तुम्हैं तरण कारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचायुरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५१ ॥

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको, ते ते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको ।
सोई विनाश कीनों तुम देवनाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं मनुष्यायुरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५२ ॥

याही प्रकार जितने दिन देव देही, नासै अकाल नहिं जे सुर आयुसे ही ।
सोई विनाश कीनो तुम देवनाथा, वंदू तुम्हैं तरण कारण जोर हाथा ॥

ॐ ह्रीं देवायुरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५३ ॥

पद्धड़ी छन्द ।

जो करे जीवको वहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार । सो नाम कर्म तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं नामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५४ ॥

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय । सो नर्कगती तुम नाश कीन । मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं नरकगतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५५ ॥

जासों उपजे तिर्यंच जीव, रहै ज्ञान हीन मलयुत सदीव । सो तिर्यंगगति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ॥

ॐ ह्रीं तियचगतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नम. अर्घं ॥ ५६ ॥

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीचऊंच ताको उद्योत । सो मनुष गती तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन

ॐ ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५७ ॥

चउ विधि सुरपद जासो लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय । सो देवगती तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन

ॐ ह्रीं देवगतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५८ ॥

कामिनीमोहन छन्द ।

एक ही भाव सामान्यका पावना, जीवकीजातिकाभेदसोगावना । होत जो थावराएकइन्द्रीकहो, पूजहूं सिद्धकेचरणताको दहो

ॐ ह्रीं एकेन्द्रियजातिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५९ ॥

फर्सकेमाथमेंजीभ जोआमिले, पांयसोंआपनेआप भूपरचले । गामिनी कर्म सोदोयइन्द्री कहो, पूजहूंसिद्धके चरण ताको दहो

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियजातिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६० ॥

नाकहो औरदोआंखिकेजोड़में, हो उदयचालना योग मों लोड़में । गामिनीकर्म सोतीनइन्द्री कहो, पूजहूं सिद्ध के चरणताको दहो

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजातिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६१ ॥

आंख हो नाकहो जीभहो फर्शहो, कानके शब्दका ज्ञान जामें न हो, गामिनीकर्म सो चारइन्द्री कहो, पूजहूंसिद्धके चरण ताको०

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजातिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६२ ॥

कानभी आमिलैजीवजा जातिमें, होअसज्ञीसुसंज्ञीय दो भांतिमें । गामिनी कर्मसो पञ्चइन्द्रीकहो, पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो

ॐ ह्रीं पचेन्द्रियजातिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६३ ॥

लावनी ।

हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्मकी प्रकृति भनी, लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृतिके उदय तनी ।
भये अकाय अमूरति आनन्द, पुञ्ज चिदातम ज्योति घनी, नमूं तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ॥

ॐ ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६४ ॥

निज शरीरको अणिमादिक करि, बहु प्रकार परणमाय वरै, वैक्रिय तन कहलावे यह, देव नारकी मूल धरै ॥
भए अकाय अमूरति आनन्द, पुञ्ज चिदातम ज्योति घनी, नमूं तुम्हैं करजोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६५ ॥

धवल वर्ण शुभ योगी संशय, हरण आहारकका पुतला, जो प्रमत्त गुणथानक मुनिके, देह औदारिक सों निकला ।
भये अकाय अमूरति आनन्द, पुञ्ज चिदातम ज्योति घनी, नमूं तुम्हैं करजोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ॥

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६६ ॥

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करन, तैजस नाम शरीर शास्त्रमें, गावत हैं नहिं तेज वरण ।

भये अकाय अमूरति आनन्द, पुञ्ज चिदातम ज्योति घनी, नमूं तुम्हैं करजोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ॥
ॐ ह्रीं तैजसशरीररहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ६७॥

पुद्गलीक वरगणा जीवसों, एक क्षेत्र अवगाही हैं, नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहैं।
भये अकाय अमूरति आनन्द, पुञ्ज चिदातम ज्योति घनी, नमूं तुम्हैं कर जोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी ॥
ॐ ह्रीं कार्माणशरीररहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ६८॥

इन्द्रवज्रा छन्द।

जेते प्रदेशा तन बीच आवैं, सारे मिलैं जोड़ न छिद्र पावें। संघात नामा जिस देहजानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥
ॐ ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ६९॥

वैक्रियके जोड़ जो होत नाहीं, संघातनामा जिन वैन नाहीं। संघात नामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो
ॐ ह्रीं वैक्रियिकसंघातरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ७०॥

ऐसे प्रकारा तनमें अहारा, संधी मिलाया कर चेत सारा। संघात नामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो ॥
ॐ ह्रीं आहारकसंघातरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ७१॥

तेजस्सके अङ्ग उपङ्ग सारे, संधी मिलाया तिस मांहि धारे। संघात नामा जिस देह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो
ॐ ह्रीं तैजससंघातरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ७२॥

ज्ञानादि आवर्ण जो कर्मकाया, ताकोमिलाया श्रुतमाहि गाया। संघातनामा जिसदेह जानो, पूजूं तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो
ॐ ह्रीं कार्माणसंघातरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ७३॥

चौबोला छन्द।

पुद्गलीक वर्गणा जोगते, जब जिय करत अहारा। प्रणावावे तिनको एकत्र करि, बंध उदय अनुसारा॥
यह औदारिक बन्धन तुमने, छेद किया निरधारा। भए अबंध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा॥
ॐ ह्रीं औदारिकबन्धनरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ७४॥

वैक्रियक तनु परमाणू मिल, परस्पर अनिवारा। हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा॥
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा। भए अबंध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा॥
ॐ ह्रीं वैक्रियिकबंधनछेदकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ७५॥

मुनि शरीरसों बाहिज निसरे, संशय नाशनहारा। ताके मिले प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा॥
यही आहारक बंधन तुमने, छेद कियो निरधारा। भए अबन्ध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा॥
ॐ ह्रीं आहारकबन्धनछेदकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ७६॥

दीप्त जोति जो कारमाणकी, रहै निरन्तर लारा, जहां तहां नहिं बिखरैं कण ज्यों, वहै एक ही धारा ।
तैजस नामा बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा, भए अबन्ध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं तैजसबन्धनरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ७७ ॥

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, पुद्‌गल जातिय सारा, एक क्षेत्र अवगाही जियको, दुविधि भाव करतारा ।
कारमाण यह बन्धन तुमने छेद कियो निरधारा, भए अबन्ध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ॥

ॐ ह्रीं कार्माणबन्धनरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ७८ ॥

छन्द रोला ।

तन आकृति संस्थान आदि, समचतुरस्र वखानो, ऊपर तले समान, यथाविधि सुन्दर जानो ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद, बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ७९ ॥

ऊपरसे हो थूल तले हो, न्यून देह जिस, परिमण्डलनिग्रोध नाम, वरणो सिद्धांत तिस ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद, बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८० ॥

नीचेसे हो थूल न्यून होवे उपराही, बंमई सम वामीक देह जिन आज्ञा माहीं ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद, बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं स्वातिसंस्थानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८१ ॥

जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी, कुब्ज नाम संस्थान ताहि वरणों जिन वानी ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद, बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८२ ॥

लघुमों ठिगना रूप एम तन होवे जाको, वामन है परसिद्ध लोकमें कहिये ताको ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद, बीजभूत कल्याण नमूं, भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८३ ॥

जिततित बहु आकार कहीं नहिं हो यक सारूं, हुंडक अति असुहान पाप फल प्रगट उधारूं ।

यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजातम पद, बीजभूत कल्याण नमूं भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥

ॐ ह्रीं हुंडकसंस्थानरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८४ ॥

लक्ष्मीधरा छन्द।

जीव आप भावसों जु कर्मकी क्रिया करेत, अङ्ग वा उपङ्ग सो शरीरके उदय समेत।
सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश, सिद्धरूप हो नमो सुपाइयो अबाध वास ॥

ॐ ह्रीं औदारिकअङ्गोपांगरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८५ ॥

देव नारकी शरीर मांस रक्तसे न होत, तासको अनेक भांति आप देसके उद्योत।
वैक्रियक सो शरीर अंग वा उपंग नाश, सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकअंगोपांगरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८६ ॥

साधुके शरीर मूलतें कढ़े प्रशंस योग, संशकोविध्वंस कार केवली सु लेत भोग।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश। सिद्ध रूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥

ॐ ह्रीं आहारकअंगोपांगरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८७ ॥

गीता छन्द।

संहनन बन्धन हाड होय अभेद वज्रसो नाम है, नाराच कीली ऋषभ डोरी बांधनेके ठाम है।
है आदिको संहनन जो जिस वज्र सर्वप्रकार हो, यह त्याग बन्ध अबंध निवसो परम आनंद धार हो ॥

ॐ ह्रीं वज्रऋषभनाराचसंहननरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८८ ॥

ज्यों वज्रकी कीली ठुकी हो हाड संधीमें जहां, सामान्य ऋषभ जु जेवरी ताकरि बंधाई हो तहां।
है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो, यह त्याग बंध अबंध निवसो परम आनंद धार हो ॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहननरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ८९ ॥

नहिं वज्रका हो ऋषभ अरु नाराच भी नहिं वज्र हो, सामान्य कीली करि ठुकी सब हाडसंधी वज्र हो।
है तीसरा संहनन जो नाराच ही परकार हो, यह त्याग बन्ध अबन्ध निवसो परम आनंद धार हो ॥

ॐ ह्रीं नाराचसंहननरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९० ॥

हो जडित छोटी कीलिका, सो संधि हाडोंकी जबै, कछु ना विशेषण वज्रके, सामान्य ही होवे सबै।
है चौथवां संहनन जो, नाराच अर्द्ध प्रकार हो, यह त्याग बंध अबंध निवसो, परम आनंद धार हो ॥

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसंहननरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९१ ॥

जो परस्पर जडित होवे, संधि हाडनकी जहां, नहिं कीलिका सों ठुकी होवे, शाल संधीके तहां।
है पांचवां संहनन कीलक नाम यह परकार हो, यह त्याग बंध अबंध निवसो, परम आनंद धार हो ॥

ॐ ह्रीं कीलिकसहननरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९२ ॥

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे, संधि हाड़ोमय सही, केवल नसासों होय वेढ़ी, माससों लतपत रही ।।
अन्तिम स्फाटिक संहनन यह हीन शक्ति असार हो, यह त्याग बन्ध अबन्ध निवसो परम आनंद धार हो ॥

ॐ ह्रीं असंप्राप्तासृपाटिकासंहननरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९३ ॥

दोहा।

वर्ण विशेष न श्वेत है, नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं श्वेतनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९४ ॥

वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९५ ॥

वर्ण विशेष न रक्त है। नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ९६ ॥

वर्ण विशेष न हरित है, नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ९७ ॥

वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ९८ ॥

गंध विशेष न शुभ कहो। नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं सुगन्धनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ ९९ ॥

गंध विशेष न अशुभ है, नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं दुर्गंधनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०० ॥

स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार। स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं तिक्तरसरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०१ ॥

स्वाद विशेष न कटुक है, नामकर्म तन धार, स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०२ ॥

स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार, स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०३ ॥

स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं मधुररसरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०४ ॥

स्वाद विशेष कषाय है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०५ ॥

फर्स विशेष न नर्म है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०६ ॥

फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०७ ॥

फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०८ ॥

फर्स विशेष न अगुरु है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १०९ ॥

फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तनधार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११० ॥

फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १११ ॥

फर्स विशेष न चिकण है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं चिकणस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११२ ॥

फर्स विशेष न रूक्ष है, नामकर्म तन धार । स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं रूक्षस्पर्शरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११३ ॥

छन्द मरहठा ।

हो जो प्रजाप्त वर पणइन्द्रीधर जाय नर्क निरधार, विग्रहसों चालमें अंतरालमें धरै पूर्व आकार ।

सो नर्क नामकरि गावत गणधर आनुपूर्वी सार, तुम ताहि नशायो शिवगति पायो नमत लहूं भवपार ॥

ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वीछेदकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११४ ॥

निजकाय छांडकरि अंत समय मरि होय पशू अवतार, विग्रहसों चालमें अन्तरालमें धरै पूर्व आकार ।

सो पशू नाम करि गावत गणधर आनुपूर्वी सार, तुम ताहि नशायो शिव गति पायो नमत लहूं भवपार ॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११५ ॥

हों मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुषगति सार, विग्रहसों चालमें अंतरालमें धरै पूर्व आकार ।

सो मनुष नाम करि गावत गणधर आनुपूर्वी सार, तुम ताहि नशायो शिवगति पायो नमत लहूं भवपार ॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११६ ॥

समकितमों अतिवर वा कलेश करि धारि देवगति चार, विग्रहसों चालमें अन्तरालमें धरै पूर्व आकार ।

सो देव नाम करि गावत गणधर आनुपूर्वी सार, तुम ताहि नशायो शिव गति पायो नमत लहूं भवपार ॥

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११७ ॥

छन्द त्रोटक

तनभार भए निज घात ठने, तिसकी कछु आकृति ऐसी बने । अपघात सुकर्म सिद्धांत भनो, जगपूज्य भए तसु मूल हनो

ॐ ह्रीं अपघातनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११८ ॥

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनिको निर्मूल करै । परघात सु कर्म सिद्धांत भनो, जगपूज्य भए तसु मूल हनो

ॐ ह्रीं परघातनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ११९ ॥

अति तेजमई परदीप्त महा, रविविंब विषैं जिय भूमि लहा । यह आतप कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो

ॐ ह्रीं आतापनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२० ॥

परकासमई जिम विंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह असी । द्युति नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जगपूज्य भए तसु मूल हनो

ॐ ह्रीं उद्योतनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२१ ॥

तनकी तिथि कारण श्वास गहैं, स्वर अंतर बाहर भेद वहैं । यह श्वास सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो

ॐ ह्रीं श्वासकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२२ ॥

शुभ चाल चलैं अपनी जिसतैं, शशि ज्यों नभ सोहत हैं तिसतैं । नभमें गति कर्म सिद्धांत भनो, जगपूज्य भए तसु मूल हनो

ॐ ह्रीं प्रशस्तविहायोगतिनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ॥ १२३ ॥ (ॐ ह्रीं अप्रशस्तविहायोगतिरहिताय नमः अर्घं ।)

इक इन्द्रीय जात विरोध भई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई। त्रस नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जगपूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२४ ॥

इक इन्द्री जातहि पावत हैं, अरु शेष न ताहि भरावत हैं। यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं थावरनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२५ ॥

परमें परवेश न आप करैं, परको निजमें नहिं थाप धरैं। यह बादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२६ ॥

जलसों दबसों नहिं आप मरै, सब ठौर रहै परको न हरै। यह सूक्षम कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२७ ॥

जिमतें परिपूरणाता करि है, निज शक्ति समाज उदय धरि है। पर्याप्त सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं पर्याप्तनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२८ ॥

परिपूर्णता नहिं धार सके, यह होत सभी साधारण के। अपर्यापति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं अपर्याप्तनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १२९ ॥

जिम लोह न भार धरै तनमें, जिम आकन फूल उडै वनमें। अगुरुरूप लघू यह भेद भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं अगुरुलघुनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३० ॥

इक देह विषैं इक जीव रहै, इकलो जिसको सब भोग लहै। परतेक सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं प्रत्येकनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३१ ॥

इक देह विषैं बहु जीव रहैं, इक साथ सभी तिस भोग लहैं। इह भेद निगोद सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो
ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३२ ॥

उपेन्द्रवज्रा छन्द।

चले न जो धातु तजै न वामा, यथा विधी आप धरैं निवासा। यही प्रकारा थिरनाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो
ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३३ ॥

अनेक थानं मुख गौण धातं, चलंति धारं निजवास धातं। यही प्रकाराऽथिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो
ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३४ ॥

यथाविधी देह विशाल सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै। यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३५ ॥

असुन्दराकार शरीरमाहीं, लखो जहासों विद्रूप ताहीं । यही प्रकारा ऽशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ।

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३६ ॥

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी । यही सुभगता को भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ।

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३७ ॥

धरें अनेका गुण तोन जासों, करैं कभी प्रीति न कोइ तासों । दुर्भाग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो

ॐ ह्रीं दुर्भगनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३८ ॥

पद्धड़ी छन्द ।

ध्वनि वीनभांति ज्यों मधुरबैन, निसरै पिकआदिक सुरस दैन । यह सुस्वर नामप्रकृति कहाय, तुम हनो नमूं निज सीस नाय

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३९ ॥

गर्दभस्वर जैसो कहो भास, तैसो स्वअशुभ कहो सु भास । यह दुःस्वर नामप्रकृति कहाय, तुम हनों नमूं निज शीश नाय

ॐ ह्रीं दुःस्वरनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४० ॥

अडिल्ल छन्द ।

होत प्रभामई कांति महारमणीक जू । जग जनमन भावन माने यह ठीक जू ॥
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहो । ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४१ ॥

रूखो मुखको वरण लेश नाहिं कांतिको, रूखे केश नखाकृति तन बहु भांति को ॥
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहो । ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४२ ॥

होत गुप्त गुण तौ भी जग में विस्तरै । जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करै ।
यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो । ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं यशःप्रकृतिछेदकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४३ ॥

जासु गुणनको औगुण कर सब ही ग्रहैं । करत काज परशंसित पण निंदित कहैं ॥
अपयश प्रकृति विनाश सुभावी पद लहो । ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं अपयशःनामकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४४ ॥

योग थान नेत्रादिक ज्योंके त्यों बनें, रचित चतुर कारीगर करते हैं तनें ।
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो, ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं निर्माणकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४५ ॥

पंच कल्याणक चौतिस अतिशय राज ही, प्रातिहार्य अठ समोशरण द्युति छाज ही ।
तीर्थंकर विधि विभव नाश स्वय पद लहो, ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरप्रकृतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४६ ॥

चाल छन्द ।

जो कुम्भकार की नांई, छिन घट छिन करत सुराई । सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४७ ॥

लोकनिमें पूज्य प्रधाना, सब करत विनय सनमाना । यह ऊंच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं उच्चगोत्रकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४८ ॥

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना । यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं नीचगोत्रकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १४९ ॥

ज्यों दे न सकें भण्डारी, परधन को हो रखवारी । यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५० ॥

हो दान देन को भावा, दे सके न कोटि उपावा । दानांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं दानांतरायकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५१ ॥

मनो दान लेन के भावे, दातार प्रसंग न पावे । लाभांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं लाभांतरायकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५२ ॥

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाये न अवसर योगा । भोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं भोगांतरायकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५३ ॥

तिय आदिक वारम्वारा, नहीं भोग सके हितकारा । उपभोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं उपभोगांतरायकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५४ ॥

चेतन निज बल प्रगटावे, यह योग कभू नहिं पावे । वीर्यान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं वीर्यांतरायकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५५ ॥

ज्ञानावरणादिक नामी, निज भाग उदय परिणामी। अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥१५६ ॥

इकसौ अड़ताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी। सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं एकशताष्टचत्वारिंशत्कर्मप्रकृतिरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५७ ॥

परिणाम भेद संख्याता, जो वचन योग में आता। संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं संख्यातकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५८ ॥

है वचनन सों अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई। विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं असंख्यातकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १५९ ॥

अविभाग प्रछेद अनन्ता, जो केवल ज्ञान लहन्ता। यह कर्म अनन्त प्रजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६० ॥

सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्ष्म भाव धरंता। विधि नन्तानन्त प्रजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६१ ॥

॥ मोतीदाम छन्द ॥

न हो परिणाम विषै कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै बिन भेद। निजाश्रित भाव रमै सुखधाम, करूं तिस आनन्द को परिणाम ॥

ॐ ह्रीं आनन्दस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६२ ॥

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषन ते सब ही बिन खेद। पराश्रितता बिन आनन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूं पद शर्म ॥

ॐ ह्रीं आनन्दधर्मात्मकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ १६३ ॥

न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसे निज आनन्द भाव। यही वरणे परमानन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहूं पद शर्म ॥

ॐ ह्रीं परमानन्दधर्मात्मकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६४ ॥

कभू परसों कछु द्वेष न होत, कभूं फुनि हर्ष विशेष न होत। रहै नित ही निज भावन लीन, नमूं पद साम्य सुभाव सुलीन ॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ १६५ ॥

निजाकृतिमें नहिं लेश कषाय, अमूरति शांतिमई सुखदाय। अनाकुलता बिन साम्यस्वरूप, नमूं तिनको नित आनंद रूप ॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ १६६ ॥

अनन्तगुणातमद्रव्य पर्याय,यहीविधि आपधरैं बहुभाय । सभी कुमती करि हो अलखाय,नमूं जिनवैन भली विधि गाय ॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणात्मकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६७ ॥

अनन्त गुणातम रूप कहाय,गुणी गुण भेद सदा प्रणमाय । महागुण स्वच्छ सदा तुम रूप, नमूं तिनको पद पाइ अनूप ॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६८ ॥

अभेद सुभेद अनेक सु एक,धरो इन आदिक धर्म अनेक । विरोधित भावनसों अविरुद्ध,नमूं जिन आगमकी विधि शुद्ध ॥
ॐ ह्रीं अनन्तधर्मात्मकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६९ ॥

रहै धर्मी नित धर्म सरूप, न हो परदेशनसों अणुरूप । चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरों प्रणमूं मन भक्ति स्वरूप ॥
ॐ ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७० ॥

॥ चौपाई ॥

हीनाधिक नहिं भाव विशेष, आतमीक आनन्द हमेश । सम स्वभाव सोई सुखरास, प्रणमूं सिद्ध मिटै भववास ॥
ॐ ह्रीं समस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७१ ॥

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायो निज आनन्द विशाल । साम्य सुधारसको नित भोग, नमूं सिद्ध सन्तुष्ट मनोग ॥
ॐ ह्रीं संतुष्टाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७२ ॥

पर पदार्थको इच्छक नाहिं, सदा सुखी स्वातम पदमाहि । मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमूं राजत सम सन्तोष ॥
ॐ ह्रीं समसंतोषाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७३ ॥

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय । शुद्ध निरंजन समगुण लहों,नमूं सिद्ध परकृत दुख दहों ॥
ॐ ह्रीं साम्यगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७४ ॥

निजपदसों थिरता नहि तजै, स्वानुभूत अनुभव नित भजै । निराबाध तिष्ठै अविकार, सम स्थाई गुण भण्डार ॥
ॐ ह्रीं साम्यस्थाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७५ ॥

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठै समधार । कृत्याकृत्य सम गुण पाइयो, भक्ति सहित हम सिर नाइयो ॥
ॐ ह्रीं साम्यकृत्याकृत्यगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७६ ॥

छन्द झूलना ।

भूल नहीं भय करै छोभ नाहीं धरै, गेरकी आसको त्रास नाहीं धरै ।
शरण काकी चहै सबनको शरण है, अन्यकी शरण विन नमूं ताही वरै ॥
ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७७ ॥

द्रव्य षट्में नहीं आप गुण आप ही, आपमें राजते सहज नीको सही ।
स्वगुण अस्तित्वता वस्तुकी वस्तुता, धरत हो मैं नमूं आपही को स्वता ॥

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७८ ॥

गेरसे गेर हो आप में लै रहो, स्वैचतुर खेतमें वास पायो ।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो, मैं तुम्हें भक्तियुत शीश नायो ॥

ॐ ह्रीं अनन्यधर्माय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १७९ ॥

साधना जबतई होत है तबतई, दोऊ परिमाण का काज जामें ।
आप स्वैपद लियो तिन जलांजलि दियो, अन्य नहीं चहत निज शुद्धतामें ॥

ॐ ह्रीं परिमाणविमुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८० ॥

तोमर छन्द ।

दृग ज्ञान पूरणचन्द्र, अकलंक ज्योति अमन्द । निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८१ ॥

सब ज्ञानमय परिणाम, वर्णादिको नहि काम । निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप नित पूजहूं चिद्रूप ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८२ ॥

निज चेतना गुण धार, बिन रूप हो अधिकार । निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप; नित पूजहूं चिद्रूप ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचेतनाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८३ ॥

सुन्दरी छन्द ।

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा । कहत हैं मुनि शुद्ध सुभायजी, नमूं सिद्ध सदा तिन पायजी ॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८४ ॥

पर परिणामनसों नहिं मिलत हैं, निजपरिणामन सों नहिचलत हैं । शुद्धपरिणामी तुमपदनमूं, नमत तुमपद सब अघको दमूं ॥

ॐ ह्रीं शुद्धपरिणामकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८५ ॥

वस्तुता व्यवहार नहीं ग्रहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै । शुद्धरूप न ताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है ॥

ॐ ह्रीं अशुद्धरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८६ ॥

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभवमें विकलप नहि कोऊ । सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम तिनपद परतीत हो ॥

ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८७ ॥

चौपाई।

क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उधारो। युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृक्स्वरूपाय सिद्ध रमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८८ ॥

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो। अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १८६ ॥

नाश सु पूर्वक हो उतपाता, सत् लक्षण परिणति मरजादा। क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावतहूं मन हर्ष विशेखा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६० ॥

नित्य रूप निज चित पद मांही, अन्य रूप पलटन हो नाहीं। द्रव्य दृष्टि में यह गुण देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तध्रुवाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६१ ॥

कर्म नाश जो स्वापद पावै, रञ्च मात्र फिर अन्त न आवै। यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥

ॐ ह्रीं अव्ययभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६२ ॥

पर नहीं व्यापे तुमपद मांहीं, परमें रमण भाव तुम नाहीं। निज करि निजमें निज गुण देखा, ध्यावतहूं मन हर्ष विशेखा ॥

ॐ ह्रीं अनन्तनिलयाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६३ ॥

शंखनारी छन्द।

अनन्ताभिधानो, गुणाकार जानो। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६४ ॥

अनन्ता स्वभावा, विशेपन उपावा। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं अनन्तस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६५ ॥

विनाकार रूपा, चिन्मय सरूपा। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६६ ॥

सदा चेतना में, न हो अन्यता में। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६७ ॥

दोहा।

जो कछु भाव विशेष है, सब चिद्रूपी धर्म। असाधार पूरण भये, नमत नशें सब कर्म ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १६८ ॥

परकृत व्याधि विनाशिके, स्वै अनुभवकी प्राप्ति। भई, नमूं तिनको लहूं, यह जगवास समाप्ति ॥
ॐ ह्रीं स्वानुभवउपलब्धिरमाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १९९ ॥

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभवकी डोर। गहो लहो थिरता रहो, रमण ठौर नहिं और ॥
ॐ ह्रीं स्वानुभूतिरताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०० ॥

सरवोत्तम लोकीक रस, सुधा कुरस सब त्याग। निज पद परमामृत रसिक, नमूं चरण बडभाग ॥
ॐ ह्रीं परमामृतरताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०१ ॥

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान। जान निजानन्द परम रस, तुष्ट सिद्ध भगवान ॥
ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०२ ॥

शंकातीत अतीत सो, धरे प्रीति निज माहि। अमल हिये संतनि प्रिये, परम प्रीति नमि ताहि ॥
ॐ ह्रीं परमप्रीताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०३ ॥

अक्षय आनन्द भाव युत, निज हितकार मनोग। सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग ॥
ॐ ह्रीं परमवल्लभयोगाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०४ ॥

शब्द गन्धरसफरश नहिं, नहीं वरण आकार। बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार ॥
ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०५ ॥

सर्व दर्वसों भिन्न है, नहिं अभिन्न तिहुं काल। नमूं सदा परकाशधर, एकहि रूप विशाल ॥
ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०६ ॥

सर्व दर्वतें भिन्नता, जिन गुण निज में वास। नमूं अखंड परमातमा, सदा सुगुण की राश ॥
ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०७ ॥

सर्व दर्व परिणामसों, मिलें न निज परिणाम। नमूं निजानन्द ज्योतिघन, नित्य उदय अभिराम ॥
ॐ ह्रीं एकत्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०८ ॥

चौपाई।

पर संयोग तथा समवाय, यह सम्वाद नहीं ह्वै भाय। नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमूं द्वैत भाव हम हरो ॥
ॐ ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २०९ ॥

पूर्व पर्याय नासियो सोई, जाको फिर उतपाद न होई। अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥
ॐ ह्रीं शाश्वताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१० ॥

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव । अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २११ ॥

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरो निज ज्ञान । अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतउद्योताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१२ ॥

ज्ञानानन्द सुधाकरचन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द । अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं अमृतचन्द्राय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१३ ॥

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरविघ्न छेद अभेद अपार । अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं शाश्वतअमृतमूर्तये सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१४ ॥

पद्धड़ीछन्द ।

मन इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्षम नाम सरूप तेह । मनपर्यय जाकूं नाहिं पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय ॥

ॐ ह्रीं परमसूक्ष्माय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१५ ॥

बहु तास नभोदरमें समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकों न पाय । इकसों इककों बाधा न होय, सूक्षम अविनाशी नमों सोय ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१६ ॥

नभ गुणध्वनि जो यहजोग नाहिं,हो जिसो गुणीगुण तिसो ताहि । सोराजत हो सूक्षमस्वरूप,नमहूं तुम सूक्षमगुणअनूप ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१७ ॥

तुम त्याग द्वैत ताको प्रसंग, पायौ एकाकी छवि अभंग । जाको कबहूं अनुभव न होय, नमूं परम रूप है गुप्त सोय ॥

ॐ ह्रीं परमरूपगुप्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१८ ॥

त्रोटक छन्द ।

सर्वार्थ विमानक देव तथा,मन इन्द्रिय भोगन शक्तियथा । इनके सुखको इक सीम सही,तुम आनन्दको पर अन्त नहीं ॥

ॐ ह्रीं निरवधिसुखाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २१९ ॥

जगजीवनिकोनहिंभाग्ययहै,निज शक्ति उदय करि व्यक्तिलहै । तुम पूरणलायक भाव लहो,इम अन्तविना गुणरास गहो ॥

ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२० ॥

भवि जीव सदा यहरीति धरें,नित नूतन पर्यविभाव धरें । तिस कारणको सब व्याधि दहो,तुम पाइसुरूप जु अन्त न हो ॥

ॐ ह्रीं निरवधिस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२१ ॥

अवधि मनपर्य सुज्ञान महा, दर्वादि विषैं मरजाद लहा । तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नहीं ॥

ॐ ह्रीं अतुलज्ञानाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२२ ॥

तिहूं काल तिहूं जगके सुखको,कर वार अनंत जुपावतको । तुम एक समय सुखकी समता, नहिं पाय नमूं मन आनंदता ॥

ॐ ह्रीं अतुलसुखाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२३ ॥ नाराच छन्द ।

सर्व जीव राशिके सुभाव आप जान हो, आपके सुभाव अंश और कौन ज्ञान हो ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो, राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२४ ॥

आपकी गुणौघ वेलि फैलि है अलोकलों, शेषसे अमाय पत्रकी न पाय नोकलों ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो, राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥

ॐ ह्रीं अतुलगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२५ ॥

सूर्यको प्रकाश एक देश वस्तु भास ही, आपको सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश ही ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो, राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥

ॐ ह्रीं अतुलप्रकाशाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२६ ॥

तास रूप को गहो न फेरि जास नाश हो, स्वात्मवासमें विलास आस नाश त्रास हो ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो, राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ॥

ॐ ह्रीं आत्मवासजिनाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२७ ॥ सोरठा ।

मोहादिक रिपु जीति, निजगुण निधि सहजे लहो । विलसो सदा पुनीत, अचल रूप वन्दों सदा ॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२८ ॥

उत्तम क्षाइक भाव, क्षय उपशम सव गये विनशि । पायो सहज सुभाव, अचल रूप वन्दों सदा ॥

ॐ ह्रीं अचलस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २२९ ॥

अथिर रूप संसार, त्याग सुथिर निज रूप गहि । रहो सदा अविकार, अचल रूप वन्दों सदा ॥

ॐ ह्रीं अचलस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३० ॥ मोतियादाम छन्द ।

निराश्रित स्वाश्रित आनन्दधाम,परै परसो न परै कछु काम । अविन्दु अवंधु अवंध अमंद, करूं पदवन्दूं रहूं सुखवृन्द

ॐ ह्रीं निरालम्बाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं॥ २३१ ॥

अराग अदोप अशोक अभोग, अनिष्टसंयोग न इष्ट वियोग । अविन्दु अवंधु अवंध अमंद, करूं पदवन्दूं रहूं सुखवृन्द

ॐ ह्रीं आलम्बरहिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३२ ॥

अजीव न जीव न धर्म अधर्म, न काल अकाल लहै तिसधर्म। अविन्दु अवंधु अवंध अमंद, करूं पदवन्दूं रहूं सुखवृन्द

ॐ ह्रीं निर्लेपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३३ ॥

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय। अविन्दु अवंधु अवंध अमंद, करूं पदवन्दूं रहूं सुखवृन्द

ॐ ह्रीं निष्कषायाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३४ ॥

न हो परसो रुप राग विभाव, निजातममें अवलीन स्वभाव। अविन्दु अवंधु अवंध अमंद, करूं पदवन्दूं रहूं सुखवृन्द

ॐ ह्रीं आत्मरतये सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३५ ॥

दोहा।

निज स्वरूपमें लीनता, ज्यों जल पुतली वार। गुप्त स्वरूप नमूं सदा, लहूं भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं स्वरूपगुप्ताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३६ ॥

जोहे सोहे और नहीं, कछु निश्चय व्यवहार। शुद्ध द्रव्य परमात्मा, नमूं शुद्धता धार ॥

ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३७ ॥

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव भव छेद कराय। असंसार पदको नमूं, यह भव वास नशाय ॥

ॐ ह्रीं असंसाराय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २३८ ॥

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच छन्द।

हरो सहाय कर्णको, सुभोगता विवर्णको। निजातमीक एक ही, लहो अनंद तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं। २३९ ॥

न हो विभावता कदा, स्वभावमें सुखी सदा। निजातमीक एक ही, लहो अनंद तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४० ॥

अछेद रूप सर्वथा, उपाधिकी नहीं व्यथा। निजातमीक एक ही, लहो अनद तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दस्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४१ ॥

दुभेद तीन वेद ही, स्वचेतना अवेद ही। निजातमीक एक ही, लहो अनंद तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानदगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४२ ॥

न अन्यकी प्रवाह है, अचाह है न चाह है। निजातमीक एक ही, लहो अनंद तास ही ॥

ॐ ह्रीं स्वानदसंतोषाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४३ ॥

सोरठा।

रागादिक परिणाम, हैं कारण ससार के। नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४४ ॥

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज धर्मको । स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं स्वतन्त्रधर्माय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४५ ॥

निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमात्मा । राजत हैं शिव-भूप, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं आत्मस्वभावाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४६ ॥

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणति मई । राजे हैं सुखखानि, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं परमचित्परिणामाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४७ ॥

दर्श ज्ञानमई धर्म, चेतन धर्मी प्रगट हो । भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४८ ॥

दर्शज्ञान गुणसार, जीवभूत परमात्मा । राजत सब परकार, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २४९ ॥

अष्ट कर्म मल जार, दीप्तरूप निज पद लहो । स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं परमस्नातकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५० ॥

रागादिक मल सोध, दोऊ विधि विधान विध । लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं स्नातकधर्माय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५१ ॥

विधि आवरण विनाश, दर्श ज्ञान परिपूर्ण हो । लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं सर्वावलोकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५२ ॥

निजकर निजमें वास, सर्व लोकसों भिन्नता । पायो शिव-सुख रास, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५३ ॥

ज्ञान भावकी जोति, व्यापक लोकालोकमें । दर्शन विन उद्योत, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं लोकालोकव्यापकाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५४ ॥

जो कछु धरत विशेष, सब ही सब आनंदमय । लेश न भाव कलेश, नमूं सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं आनंदविधानाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५५ ॥

जिस आनंदको पार, पावत नहीं यह जगतजन । सो पायो हितकार, नमत सदा भव भय हरण ॥

ॐ ह्रीं आनंदपूर्णाय सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ २५६ ॥

दोहा।

इत्यादिक आनंद गुण, धारत सिद्ध अनंत। तिन पद आठों दरवसों, पूजत हैं नित संत ॥

ॐ ह्रीं षट्पंचाशतअधिकद्विशतगुणयुक्ताय सिद्धाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यहां "ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः" इस मन्त्र का १०८ बार जाप देना चाहिये।)

अथ जयमाला।

दोहा।

थावर शब्द विषय धरै, थावर त्रस पर्याय। यों न होय तो तुम सुगुण, हम किहविधि वर्णाय ॥ १ ॥
तिसपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान। बालक जल शशिबिंबको, चहत ग्रहण निज पान ॥ २ ॥

पद्धडी छन्द।

जय परनिमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्धस्वरूप भाग। जय जगपालन विन जगतदेव, जय दयाभाव विन शांतिमेव
परसुख दुखकरण कुरीतिटार, परसुख दुख कारण शक्तिधार। फुनिफुनि नवनव नित जन्मरीत, विन सर्वलोक थापी पुनीत
जय लीलारामविलास नाश,स्वाभाविक निजपद रमणवास। शयनासन आदि क्रियाकलाप,तज सुखी सदा शिवरूप आप
विन कामदाह नहीं नार भोग, निरद्वन्द निजानंद मगन योग। वरमाल आदि शृंगार रूप, विन शुद्ध निरंजन पद अनूप
जय धर्म मर्म वन हन कुठार, परकाश पुंज चिद्रूप सार। उपकरण हरण दव सलिलधार, स्वैशक्ति प्रभावउ पय अपार
नभसीम नहीं अरु होतहोउ, नहीं कालअंत लहो अंतसोउ। पर तुम गुणरास अनंतभाग, अक्षयविधि राजत अवधि त्याग
आनंद जलधि धारा प्रवाह, विज्ञानसुरी मुखद्रह अथाह। निज शांति सुधारस परम खान, समभाव बीज उत्पत्ति थान
निज आत्मलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणतिप्रकाश। दृगज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव
निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम। अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध
एकाग्ररूप चिंता निरोध, जे ध्यावें पावें स्वयं बोध। गुण मात्र संत अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप

घत्ता—दोहा।

सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मन्त्रराज है सार। सर्व सिद्ध दातार है, सर्व विघन हरतार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं षटपंचाशदधिकद्विशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घम्।

तीन लोक चूडामणी, सदा रहो जयवन्त। विघन हरण मंगल करण, तुम्हें नमें नित संत ॥

इत्याशीर्वादः। (इति षष्ठी पूजा सम्पूर्णम्।)

अथ सप्तमी पूजा।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ बिंदु हंकार बिराजे, अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधि धर, अग्र भागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको। ह्वै केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन: पांचसैबारह ५१२ गुणसंयुक्ता अत्रावतरतवतरत संवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ: स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं।

दोहा।

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग। सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥ इति यंत्रस्थापनं।

अथाष्टकं।

चाल बारहमासा छन्द।

सुवरण कुम्भ क्षीरभर धारत, मुनि मन शुद्ध प्रवाह बहावहि। हम दोऊ विधि लाइक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहिं
शक्ति सारू सामान्य नीरसों, पूजू हूं शिवतिय के स्वामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुख धामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसयुताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं।

नतु कोऊ चंदन नतु कोऊ केसरि, भेट किये भवपार भयो है। केवल आप कृपा दृगहीसों, यह अथाह दधि पार लयो है
रीति सनातन भक्तनकी लखि, चंदन की यह भेट धरामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चंदनं।

इन्द्रादिक पदहू अनवस्थित, दीखत अन्तर रुचि न करै है। केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपदकी चाह धरै है
तातैं अक्षतसों अनुरागी, हूं सो तुम पद पूजकरामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुख धामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं।

पुष्प बाण हीसों मन्मथ जग-विजयी जगमें नाम धरावे। देखहु अद्भुत रीति भक्तकी, तिसहि भेट धर काम हनावे

शरणागत की चूक न देखी, तातें पूज्य भए शिरनामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय कामबाणविनाशनाय पुष्प।

हनत असाता पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेटन लायो। भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भव कारण भाव सतायो
मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं।

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी। हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी
मोह अन्ध विनसो तिह कारण, दीपनसो अर्चूं अभिरामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं।

धूप घरे उघरे प्रजरे मणि, हेम धरे तुम पदपर वारूं। बारबार आवर्त जोरि करि, धार धार निज शीशन हारूं
धूम्र धार समतन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूप।

तुम हो वीतराग निज पूजन, वन्दन थुति परवाह नहीं है। अरु अपने समभाव वहै कछु, पूजा फलकी चाह नहीं है
तौभी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी। द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं।

तुमसेस्वामीके पदसेवत, यहविधि दुष्टरंक कहाकर है। ज्यों मयूरध्वनिसुनि अहिनिजबिल, विलयजाय छिनबिल मनधर है
तातें तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुं मुदामी। हो तुम पूज्य भए हम पूजक, तातें तुम पद सदा नमामी

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसयुक्ताय सर्वसुखप्राप्तये अर्घं। गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी, शुभपुष्प मधुकर नित रमें चरु, प्रचुर स्वाद सु विधि घनी
वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले, करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है, दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती, मुनि ध्येय सेय अभेय चहुं गुण, गेह द्यो हम शुभमती

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये पूर्णपदप्राप्तये महार्घं।

पांचसौबारह गुणसहित नाम अर्घ।

अर्द्ध छन्द जोगीरासा।

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल जोति प्रकाशी। भव्यन मन तप मोह विनाशक, वन्दूं शिव थल वासी॥

ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः अर्घं ॥ १ ॥

सुरनर मुनिमन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना । हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, वन्दूं श्री भगवाना॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नमः अर्घं ॥ २ ॥

केवल दर्श ज्ञान किरणावलि, मंडित तिहुं जग चन्दा। मिथ्या तप हर जगत आदि करि वन्दूं पद अरविन्दा॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नमः अर्घं ॥ ३ ॥

घाति कर्म रिपु जारि छारकर, स्वै चतुष्ट पद पायो। निज स्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नमः अर्घं ॥ ४ ॥

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल भानु उगायो। भव्यनको प्रतिबोधि उधारे, बहुर मुक्ति पद पायो॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ५ ॥

धर्म अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर रेखा। बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमें देखा॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नमः अर्घं ॥ ६ ॥

मोह महा दृढ़ बंध उघारो, कर विपतंतु समाना। अतुल बली अरहंत कहायो, पाय नमूं शिवथाना॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घं ॥ ७ ॥

युगपत लोकालोक विलोकन, हैं अनन्त दृगधारी। गुप्तरूप शिवमग दरसायो, तिनपद धोक हमारी॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नमः अर्घं ॥ ८ ॥

घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि किरण पसारा। तैसो ज्ञान भान अरहतको, ज्ञेय अनंत उघारा॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घं ॥ ९ ॥

आसन शयन पान भोजन बिन, दीप्त देह अरहंता। ध्यानवान करतान हान विधि, भए सिद्ध भगवंता॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यगुणाय नमः अर्घं ॥ १० ॥

सप्त तत्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई। ताकरि भव्य जीव संबोधे, नमूं भये सिद्ध सोई ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ११ ॥
ध्यान सलिलसों धोय लोभ मल, शुद्ध निजातम कीनो। परम शौच अरहंत स्वरूपी, पाय नमूं शिव लीनो ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्शौचगुणाय नमः अर्घं ॥ १२ ॥
नय प्रमाण श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी। प्रगटायो परतत्त्व ज्ञानमें, नमूं भये शिव-थानी ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाय नमः अर्घं ॥ १३ ॥
मन इन्द्रिय विन सकल चराचर, जगपद करि प्रगटायो। यह अरहन्त मती कहलायो, वन्दूं तिन शिव पायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हदभिन्नबोधकाय नमः अर्घं ॥ १४ ॥
अनुभव सम नहीं होत दिव्यध्वनि, ताको भाग अनंता। जानो गणधर यह श्रुत अवधी, पाइ नमूं अरहन्ता ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतावधिगुणाय नमः अर्घं ॥ १५ ॥
सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल सागर मांही। एक भयो अरहन्त अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्अवधिगुणाय नमः अर्घं ॥ १६ ॥
अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा। यह अरहन्त पाय मन पर्यय, नमूं भए भवपारा ॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छुद्धमनःपर्ययभावाय नम अर्घं ॥ १७ ॥
मोह मलिनता जग जिय नाशै, केवलता गुण पावै। सर्व शुद्धता पाइ नमत हैं, हम अरहन्त कहावैं ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणाय नमः अर्घं ॥ १८ ॥
मोह जनित सो रूप विरूपी, तिस विन केवलरूपा। श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, वन्दूं हो शिवभूपा ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १९ ॥
तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल दरशन पायो। इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भावसहित शिर नायो ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नमः अर्घं ॥ २० ॥
निर आवरण करण विन जाको, शरण हरण नहि कोई। केवलज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नमः अर्घं ॥ २१ ॥
अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो। केवल वल अरहन्त नमें हम, शिव थल वास करानो ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नम. अर्घं ॥ २२ ॥

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी। मंगलमय अर्हंत सर्वदा, नमूं मुक्ति पदधारी ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय नमः अर्घं ॥ २३ ॥

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, क्षायिक मंगलकारी। यह अर्हंत दर्श पायो मैं, नमूं भये शिवकारी ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनाय नमः अर्घं ॥ २४ ॥

निजपर संशय आदि पाय विन, निरावरण विकसानो। मंगलमय अरहंत ज्ञान है, वन्दूं शिव सुख थानो ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानाय नमः अर्घं ॥ २५ ॥

परकृत जरा आदि संकट विन, अतुल बली अर्हंता। नमूं सदा शिवनारीके संग, सुखसों केलि करंता ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलवीर्याय नमः अर्घं ॥ २६ ॥

पापरूप एकान्त पक्ष विन, सर्व तत्व परकाशी। द्वादशांग अरहंत कहो मैं, नमूं भये शिववामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलद्वादशांगाय नमः अर्घं ॥ २७ ॥

विन प्रतक्ष अनुमान सुबाधित, सुमतिरूप परिणामा। मंगलमय अर्हंतमती मैं, नमूं देउ शिव धामा ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलअभिन्नबोधकाय नमः अर्घं ॥ २८ ॥

नय विकलप श्रुतअंग पक्षके, त्यागी हैं भगवन्ता। ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमूं अरहन्ता ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलश्रुतात्मकजिनाय नमः अर्घं ॥ २९ ॥

मंगलमय मर्वावधि जाकरि, पावे पद अरहन्ता। वन्दूं ज्ञान प्रकाश नाश भव, शिव थल वास करन्ता ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलावधिज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ३० ॥

वर्धमान मनपर्य ज्ञान करि, केवल भानु उगायो। भव्यनि प्रति शुभ मार्ग बतायो, नमूं सिद्ध पद पायो ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलमन पर्ययज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ३१ ॥

जा विन और अज्ञान सकल जग, कारण बंध प्रधाना। नमूं पाइ अरहन्त मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ३२ ॥

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमइ राजैं। केवलरूप नमूं सब अघहर, श्री अरहन्त बिराजैं ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३३ ॥

चक्षु आदि सब भेद विघनहर, क्षायक दर्शन पाया। श्री अरहन्त नमूं शिववासी, इह जग पाप नशाया ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ३४ ॥

जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता। मंगलमय सब मंगलदायक नमूं, कियो जग अन्ता ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलाय नमः अर्घं ॥ ३५ ॥
केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा। सो अरहन्त सिद्धपद पायो, नमूं पाय भवपारा ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलरूपाय नमः अर्घं ॥ ३६ ॥
शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानंद विराजैं। सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूं शिवालय राजैं ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्माय नमः अर्घं ॥ ३७ ॥
सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्म स्वरूपा। सो अरहन्त भये परमातम, नमूं त्रियोग निरूपा ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३८ ॥
सर्व जगत सम्बन्ध विघन नहिं, उत्तम मंगल सोई। सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलउत्तमाय नमः अर्घं ॥ ३९ ॥
लोकातीत त्रिलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी। लोकशिखर सुखरूप विराजैं, तिनपद धोक हमारी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ४० ॥
लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्री जिनपदसों न्यारे। तिनको त्याग भये शिव वन्दूं, काटो बन्ध हमारे ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घं ॥ ४१ ॥
मिथ्या मतकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगतमें सारो। ता विनाशि अरहन्त कहो, लोकोत्तम पूज हमारो ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ४२ ॥
ज्ञायक दरशन है अरहन्ता, और लोकमें नाहीं। सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ४३ ॥
कर्मवलीने सब जग बांध्यो, ताहि हनो अरहन्ता। यह अरहन्त वीर्य लोकोत्तम, पायौ सिद्ध अनन्ता ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ॥ ४४ ॥
अक्षअतीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला। सो अरहंत नमूं शिवनायक, पाऊं भवदधि कूला ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअभिनिबोधकाय नमः अर्घं ॥ ४५ ॥
परमावधि ज्ञानी सुख खानी, केवलज्ञान प्रकाशी। यहै अवधि अरहन्त नमूं मैं, संशय तमको नाशी ॥

जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवलके माहीं। साचात् शिवरूप नमो मैं, अन्य लोकमें नाहीं ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ४७ ॥

तीन लोकमें सार सु श्री, अरहंत स्वयभू ज्ञानी। नमूं सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ४८ ॥

सर्वोत्तम तिहुं लोक प्रकाशक, केवलज्ञान स्वरूपी। सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४९ ॥

ज्ञान तरंग अभंग वहै, लोकोत्तम धार अरूपी। सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ५० ॥

सहित असाधारण गुण पर्यय, केवलज्ञान सरूपी। सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ५१ ॥

जगजिय सर्व अशुद्ध कहो एक, केवल शुद्ध सरूपी। सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलाय नमः अर्घं ॥ ५२ ॥

त्रिविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सुरूपी। सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५३ ॥

हीनाधिक धिक धिक जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी। सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नमः अर्घं ॥५४॥

दोहा।

समारिनके भाव सब, बन्ध हेत वरणाय। मुक्तिरूप अरहंतके, भाव नमूं सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमभावाय नमः अर्घं ॥ ५५ ॥

कबहुं न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश। मुक्तिरूप प्रणमूं सदा, नाशे विघन विशेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घं ॥ ५६ ॥

जा सेवत वेवत स्वसुख, सो सर्वोत्तम देव। शिववासी नाशी त्रिजग, फासी नमहूं एव ॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय नमः अर्घं ॥ ५७ ॥

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चय सो सुखरास। शरण स्वरूपी जिन नमूं, करैं सदा शिववास ॥
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणरूपाय नमः अर्घं ॥ ५८ ॥

पद्धरी छन्द।

स्वाभाविकगुण अरहन्त गाय,जासों पूरण शिवसुख लहाय। हम शरण गही मनवचनकाय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्गुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ५९ ॥

विन केवलज्ञान न मुक्ति होय,पायो है श्री अरहन्त जोय। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं संत आनन्द पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानशरणाय नमः अर्घं ॥ ६० ॥

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, माख्यो है शिव मारग असेव। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनन्द पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनशरणाय नमः अर्घं ॥ ६१ ॥

संसार विषम वन्धन उछेद, अरहंत वीर्य पायो अखेद। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यशरणायनमः अर्घं ॥ ६२ ॥

सब कुमति विगतमतजिन प्रतीत,हो जिसतेशिवसुख देअभीत। हम शरणगही मनवचनकाय,नित नमैं संत आनन्द पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगश्रुतशरणाय नमः अर्घं ॥ ६३ ॥

अनुमानादिक साघत विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्अभिनिबोधकाय नमः अर्घं ॥ ६४ ॥

जिनभाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव। हमशरण गही मनवचनकाय, नितनमैं संत आनंदपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्श्रुतशरणायनमः अर्घं ॥ ६५ ॥

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधि शिवसुख कराय। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हदवधिबोधशरणाय नमः अर्घं ॥ ६६ ॥

मुनि लहैं गहैंपरिणाम श्वेत,जिन मनपर्यय शिव वास देत। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं सन्त आनंदपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घं ॥ ६७ ॥

आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणाय नमः अर्घं ॥ ६८ ॥

मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावे शिव–सुख निश्चय अबाध। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ६९ ॥

शिव–सुखदायक निज आत्म ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलधर्मशरणाय नमः अर्घं ॥ ७० ॥

यह केवल गुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाव। हम शरणगही मनवचनकाय,नितनमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ७१ ॥

संसार रूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्त कार। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ७२ ॥

क्षय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता विन जिन ज्ञानी शिव सुरूप। हमशरण गही मन वचन काय,नितनमैं सन्त आनंदपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलज्ञानशरणायनमः अर्घं ॥ ७३ ॥

अरहन्त दर्श मंगल स्वरूप, तासों दरशै शिव-सुख अनूप। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलदर्शनशरणाय नमः अर्घं ॥ ७४ ॥

अरहंत बोध है मंगलीक, शिव मारग प्रति वरते अलीक। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलबोधशरणाय नमः अर्घं ॥ ७५ ॥

निज ज्ञानानंद प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलशरणाय नमः अर्घं ॥ ७६ ॥

जाविन तिहुं लोक न और मान, भवसिंधु तरण तारण महान। हम शरण गही मनवचनकाय, नित नमैं संत आनन्दपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घं ॥ ७७ ॥

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ७८ ॥

तुम विन समरथ तिहुं लोकमांहि, भवसिंधु उतारण और नाहिं। हम शरण गही मनवचनकाय, नित नमैं संत आनंदपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीयशरणाय नमः अर्घं ॥ ७९ ॥

विन परिश्रम तारण तरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय। हम शरण गही मन वचन काय,नित नमैं संतआनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणायनमः अर्घं ॥ ८० ॥

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश। हम शरण गही मनवचनकाय,नित नमैं संत आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगशरणायनमः अर्घं ॥ ८१ ॥

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ सत कारण प्रकाश। हम शरण गही मनवचनकाय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअभिनिबोधकाय नमः अर्घं ॥ ८२ ॥

मिथ्यारत प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधीको प्रकाश। हमशरणगही मनवचन काय, नित नमैं सन्त आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअवधिशरणाय नमः अर्घं ॥ ८३ ॥

मनपर्यय शिव मंगल लहाय, लोकोत्तम श्री गुरु सो कहाय। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययशरणाय नमः अर्घं ॥ ८४ ॥

आवरणातीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जगमें प्रधान। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनन्द पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नमः अर्घं ॥ ८५ ॥

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अन्तर लोकोत्तम ज्ञानरूप। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नमः अर्घं ॥ ८६ ॥

रतनत्रय निमित मिलो अबाध, पायो निज आनंद धर्म सार्थ। हम शरण गही मनवचनकाय, नित नमैं संत आनंद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नमः अर्घं ॥ ८७ ॥

सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो सब कर प्रकृती अभाव। हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सत आनद पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअनन्तचतुष्टयशरणाय नमः अर्घं ॥ ८८ ॥

अडिल्ल छन्द।

दर्श ज्ञान सुख बल ज गुण ये चार हैं, आतमीक परधान विशेष अपार हैं।
इनही सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा, हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥
ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणचतुष्टाय नमः अर्घं ॥ ८९ ॥

क्षयोपशम सम्वादित ज्ञान कलाहरी, पूरण ज्ञायक स्वयंबुद्धि श्री जिनवरी।
इनही सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा, हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्निजज्ञानस्वयंभुवे नमः अर्घं ॥ ९० ॥

जनमत ही दश अतिशय शासनमें कही, स्वयं शक्ति भगवान आप तिनको लही ॥ इनही सों० ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दशअतिशयस्वयंभुवे नमः अर्घं ॥ ९१ ॥

ये दश अतिशय घाति कर्म क्षयको करैं, महा विभवको पाय मोक्ष नारी वरैं ॥ इनही सों० ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दशघातिक्षयजअतिशयाय नमः अर्घं ॥ ९२ ॥

केवल विभव उपाय प्रभू जिनपद लियो, चौदै अतिशय देवन करि सेवन कियो। इनहींसो हैं पूज्य०

ॐ ह्रीं अर्हद्देवकृतचतुर्दशअतिशयाय नमः अर्घं॥ ९३॥

चौंतीस अतिशय जे पुराण वरने महा, मुक्ति समान अनूपम श्री गुरु ने कहा। इनहींसो हैं०॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चतुस्त्रिंशत्अतिशयविराजमानाय नमः अर्घं॥ ९४॥

डालर छन्द।

लोकालोक अणू सम जानो, ज्ञानानंत सुगुण पहिचानो। सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानानंदगुणाय नमः अर्घं॥ ९५॥

समरस सुस्थिर भाव उधारा, युगपत लोकालोक निहारा। सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्तध्येयाय नमः अर्घं॥ ९६॥

इक इक गुणका भाव अनन्ता, पर्ययरूप सोहै अरहन्ता। सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हदनतगुणाय नमः अर्घं॥ ९७॥

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी। सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हत्तपअनन्तगुणाय नमः अर्घं॥ ९८॥

आतम शक्ति जास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी। सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घं॥ ९९॥

निज गुण निज ही माहिं समाया, गणधरादि वरनन न कराया। सो अरहंत सिद्धपदपायो, भावसहित हम शीश नवायो॥

ॐ ह्रीं अर्हद्गुप्तस्वरूपाय नमः अर्घं॥ १००॥

दोधक छन्द।

जो निज आतम माधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई। लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी॥

ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १०१॥

सर्व विशुद्ध विरूप सरूपी, स्वातम रूप विशुद्ध अनूपी। लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं॥ १०२॥

शाश्वत सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा। लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नमः अर्घं॥ १०३॥

आकुलता सब ही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी। लोकशिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी॥

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घं॥ १०४॥

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नहीं अन्तर एक प्रकारा। लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घं ॥ १०५ ॥

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी। लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घं ॥ १०६ ॥

एक अणुमल कर्म लजावै, सोय निरंजनता नहिं पावै। लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिरञ्जनेभ्यो नमः अर्घं ॥ १०७ ॥

अर्धरोला छन्द।

चारों गतिको भ्रमण नाशकर, थिरता पाई। निज स्वरूप में लीन, अन्य सों मोह नशाई ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअचलपदप्राप्ताय नमः अर्घं ॥ १०८ ॥

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो। संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ॥

ॐ ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १०९ ॥

असंख्यात मरजाद एक ताहू सौं बीते। विजय लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते ॥

ॐ ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११० ॥

काल आदि मर्याद अनादी, सो विधि जारी। भए अनन्त दिगम्बर साधु जु, शिवपद धारी ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १११ ॥

पुष्करार्द्ध सागर लों, जे थल थान बखानो। देव सहाइ उपाइ, उर्द्ध गति गमन करानो ॥

ॐ ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११२ ॥

वन गिर नगर गुफादि सर्व थलसों, शिव पाई। सिद्धक्षेत्र सब ठौर बखानत, श्री जिनराई ॥

ॐ ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११३ ॥

नभहीमें जिन शुकलध्यान,बल कर्म नाश किय। आयु पूर्णवश ततछिन,ही शिववास जायलिय ॥

ॐ ह्रीं गगनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११४ ॥

आयु स्थिति सम अन्य कर्म, कारण परदेशा। परसैं पूरण लोक आत्म, केवली जिनेशा ॥

ॐ ह्रीं समुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११५ ॥

केवलि जिन बिन समुद्घात, शिववास लिया है। स्वते स्वभाव समान, अघाती कर्म किया है ॥

ॐ ह्रीं असमुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११६ ॥

उल्लाला छन्द।

तिन विशेष अतिशय रहित, सामान केवली नाम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं साधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११७ ॥

त्रिभुवन में नहीं पावतो, जो जिन गुण अभिराम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं असाधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११८ ॥

गर्भ कल्याणक आदि युत, तीर्थंकर सुखधाम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ ११९ ॥

तीर्थंकरके समय में, केवली जिन अभिराम है। सिद्ध भये तिहुं योयतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरअंतरसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२० ॥

पंच शतक पच्चीस फुनि, धनुषकाय अभिराम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं उत्कृष्टअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२१ ॥

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यवगाहन नाम है। सिद्ध भये तिहुं जोगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं मध्यमअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२२ ॥

तीन अर्ध तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय है। सिद्ध भये तिहुं जोगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं जघन्यअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२३ ॥

देव निमित्त मिलो जहां, तिर्यक लोक सु धाम है। सिद्ध भये तिहुं जोगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं तिर्यग्लोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२४ ॥

षट्विधि परणति कालकी, तिन अपेक्ष यह नाम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं षट्विधिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२५ ॥

अंत समय उपसर्गतें, शुकल ध्यान अभिराम है। सिद्ध भये तिहुं यौगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२६ ॥

पर उपसर्ग मिलै नहीं, स्वतः शुक्ल शुभ धाम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥
ॐ ह्रीं निरुपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १२७ ॥

अन्तर द्वीप मही जहां, देवन के अभिराम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं द्वीपसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १२८॥
देव गये ले सिंधु जब, कर्म छयो तिह ठाम है। सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परणाम है ॥
ॐ ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १२६॥

भुजंगप्रयात छन्द।

धरैं जोग आसन गहैं शुद्धताई, न हो खेद ध्यानांग सों कर्म छाई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा ॥
ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३०॥
महा शांति मुद्रा पलौथी लगाये, कियो कर्म को नाश ज्ञानी कहाये। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं पर्यङ्कासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१३१ ॥
लहै आदिको संहनन पुरुष देही, लखायो परारंभ में भावते ही। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३२॥
खपायो प्रथम सात प्रकृती त्रिमोहा, गहै शुद्ध श्रेणी चयो कर्म लोहा। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं क्षायिकश्रेणीसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३३॥
समय एकमें एक गामी अनंता, भयो आठ तापं यही भेद अन्ता। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३४॥
किसी देशमें वा किसी काल माहीं, गिने दो समयमें तथा अन्तराई। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३५॥
समय एक दो तीन धाराप्रवाही, कियो कर्म क्षय अन्तराय होय नाहीं। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३६॥
हुवे हैं सु होंगे सु हो हैं अचारी, त्रिकालं सदा मोक्ष पन्थं विहारी। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३७॥
तिहूं लोकके शुद्ध सम्यक्त धारी, महा भार संजम धरै हैं अचारी। भये सिद्ध राजा० ॥
ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥ १३८॥

मरहठा छन्द।

तिहुं लोक निहारा सब दुखकारा, पापरूप संसार। ताको परिहारा सुलभ सुखारा भये सिद्ध अविकार।
है जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार। मैं नमूं त्रिकाला हो अघ टाला, तपहर शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं सिद्धमगलेभ्यो नमः अर्घं॥ १३९॥

तिहुं कर्मकालमा लगी जालमा, करै रूप दुखदाय। तुम ताको नाशो स्वयं प्रकाशो स्वातमरूप सुभाय॥ है जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलरूपेभ्यो नमः अर्घं॥ १४०॥

तिहुं जगके प्राणी सब अज्ञानी, फंसे मोह जंजाल। हो तिहुं जगत्राता पूरण ज्ञाता, तुमहि एक खुशहाल॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलज्ञानेभ्यो नमः अर्घं॥ १४१॥

यह मोह अन्धेरी छई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाय। तुम ताहि उघारो सकल निहारो, युगपत आनंददाय॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलदर्शनेभ्यो नमः अर्घं॥ १४२॥

निजबधन डोरी छिनमें तोरी, स्वयं शक्ति परकाश। निरभय निरमोही परम अछोही, अन्तराय विधि नाश॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलवीर्येभ्यो नमः अर्घं॥ १४३॥

जाके प्रसादकर सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय। रुषराग निवारा सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घं॥ १४४॥

अस्पर्श अमूरति चिन्मय मूरति, अरस अलिंग अनूप। मन अक्ष अलक्षं ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाह स्वरूप॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलअवगाहनेभ्यो नमः अर्घं॥ १४५॥

अव्यक्त स्वरूपं अमल अनूपं, अलख अगम असमान। अवगाह उदर धर वास परस्पर, भिन्न भिन्न परमान॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलसूक्ष्मत्वेभ्यो नमः अर्घं॥ १४६॥

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश। विधि गोत्र नाशकर पूरण पदधर, असंवाद परकाश॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलअगुरुलघुभ्यो नमः अर्घं॥ १४७॥

पुद्गल कृत सारी विविधि प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार। सब भांति निवारी निज सुखकारी, पायो पद अविकार॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलअव्याबाधेभ्यो नमः अर्घं॥ १४८॥

अवगाह प्रणामी ज्ञानारामी, दर्शन वीर्य अपार। सूक्ष्म अवकाशं अज अविनाशं, अगुरुलघू सुखकार॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलाष्टगुणेभ्यो नमः अर्घं॥ १४९॥

सुद्धातम सारं अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिवार। निज गुणपरधानं सम्यकज्ञानं, आदि अन्त अविकार ॥
है जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार। मैं नमूं त्रिकाला हो अघ टाला, तपहर शशि उनहार ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलअष्टस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ॥ १५० ॥

मंगल अरहन्तं अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्ट गुण भास। ये ही विलसावै अन्य न पावै, असाधार्ण परकाश ॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलअष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घं ॥ १५१ ॥

निर आकुलताई सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम। संसार निवारण बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम ॥ है जगत्रय०

ॐ ह्रीं सिद्धमङ्गलधर्मेभ्यो नमः अर्घं ॥ १५२ ॥

चूलिका छन्द।

तीन काल तिहुं लोकमें, तुम गुण औरन माहिं लखाने। लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज वखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ १५३ ॥

लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने। लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज वखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ॥ १५४ ॥

अमल अनूपम तेज घन, निरावर्ण निजरूप प्रमाने। लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज वखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १५५ ॥

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाने। लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज वखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ॥ १५६ ॥

सकल दर्शनावरण विन, पूरन-दरशन जोति उगाने। लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज वखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ॥ १५७ ॥

अतुल अतीन्द्रिय वीर्यकर, भोगे नित शिवनारि अघाने। लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज वखाने ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ॥ १५८ ॥

त्रोटक छन्द।

विन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोक विषै हितु हो। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घं ॥ १५९ ॥

तुम रूप अनूपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ॥ १६० ॥

निरभेद अछेद विकासित हैं, सब लोक अलोक विभाषित हैं। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घं ॥ १६१ ॥

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वंद अबंध अभय अजई। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घं ॥ १६२ ॥

हित कारण तारण तरण कहै, अप्रमाद प्रमाद प्रकाशन है। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घं ॥ १६३ ॥

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतमतत्व प्रबोध लहा। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घं ॥ १६४ ॥

जिनको पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार प्रवाह वहै अति ही। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धअनन्तशरणाय नमः अर्घं ॥ १६५ ॥

कबहूं नहिं अन्त समावत है, सु अनन्त अनन्त कहावत है। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धअनन्तानन्तशरणाय नमः अर्घं ॥ १६६ ॥

तिहुं काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषैं थिर भाव सदा। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नमः अर्घं ॥ १६७ ॥

तिहुं लोक शिरोमणि पूज्य महा, तिहुं लोक प्रकाशक तेज कहा। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ १६८ ॥

गिनती परिमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धअसंख्यातलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ १६९ ॥

पूर्वापर एकहि रूप लसै, नित लोक सिंघासन वास वसै। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७० ॥

जगवास पर्याय विनाश कियो, अब निश्चय रूप विशुद्ध भयो। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धउत्पादगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७१ ॥

पर द्रव्य थकी रुष राग नहीं, निज भाव बिना कहुं लाग नहीं। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७२ ॥

विन कर्म कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७३ ॥

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहां, रुष राग कलेश प्रवेश न ह्वां। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वस्थितगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७४ ॥

निज रूप विषैं नित मगन रहैं, परयोग वियोग न दाह लहैं। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७५ ॥

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७६ ॥

परतत्त्व अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न गुह्य कहा। इनही गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ १७७ ॥

मालिनी छन्द।

निज गुणवर स्वामी शुद्ध संबोध नामी, परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा।
मन वच तन लाई पूजहों भक्ति भाई, भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणगणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १७८ ॥

सव विधि मल जारा, बन्ध संसार टारा। जग जिय हितकारी, उच्चता पाय सारी ॥ मन वच तन०

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १७९ ॥

परपरिणतिखण्डं, भेद बाधा विहण्डं। शिवसदन निवासी, नित्य स्वानंदरासी ॥ मन वच तन०

ॐ ह्रीं सिद्धअखण्डस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १८० ॥

चित सुख विलसानं, आकुलं भाव हानं। निज अनुभव सारं, द्वैत संकल्प टारं ॥ मन वच तन०

ॐ ह्रीं सिद्धचिदानंदस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ १८१ ॥

परकरण निवारं, भाव संभाव धारं। निज अनुपम ज्ञानं, सुक्ख रूपं निधानं ॥ मन वच तन०

ॐ ह्रीं सिद्धसहजानंदाय नमः अर्घं ॥ १८२ ॥

विधि वश सब प्रानी, हीन आधिक्य ठानी। तिस करण निमूला, पापरूपा घरूला ॥ मन वच तन०

ॐ ह्रीं सिद्धअछेद्यरूपाय नमः अर्घं ॥ १८३ ॥

जबलग परजाया, भेद नाना धराया। इक शिवपद मांही, भेद आभास नांही ॥
मन वच तन लाई, पूजहों भक्ति भाई। भवि भव भय चूरं, शाश्वतं सुक्ख पूरं ॥
ॐ ह्रीं सिद्धअभेदगुणाय नमः अर्घं ॥ १८४ ॥

अनुपम गुण धारी, लोक सम भाव टारी। सुरनर पशु ध्यावैं, सो नहीं पार पावैं ॥ मन वच तन०
ॐ ह्रीं सिद्धअनुपमगुणाय नमः अर्घं ॥ १८५ ॥

जिस अनुभव सरसै, धार आनन्द वरसै। अनुपम रस सोई, स्वाद जासो न कोई ॥ मन वच तन०
ॐ ह्रीं सिद्धअमृततत्त्वाय नमः अर्घं ॥ १८६ ॥

सब श्रुत विस्तारा, जास माहीं उजारा। यह निजपद जानो, आत्म संभाव मानो ॥ मन वच तन०
ॐ ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नमः अर्घं ॥ १८७ ॥

दोधक छन्द।

जीव अजीव सबै प्रतिभासी, केवल जोति लहो तम नाशी। सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥
ॐ ह्रीं सिद्धकेवलप्राप्ताय नमः अर्घं ॥ १८८ ॥

चेतन रूप प्रदेश विराजे, आकृति रूप अलिंग सु छाजे। सिद्ध समूह नमूं शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाकारनिराकाराय नमः अर्घं ॥ १८९ ॥

नाहिं गहें पर आश्रित जानो, सो अवलम्ब विना पद मानो। सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिरजाई ॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिरालंबाय नमः अर्घं ॥ १९० ॥

राग विषाद बसै नहिं जामें, योग वियोग भोग नहिं तामें। सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥
ॐ ह्रीं सिद्धनिष्कलकाय नमः अर्घं ॥ १९१ ॥

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म समूह विनाश भयो है। सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥
ॐ ह्रीं सिद्धतेजःसंपन्नाय नमः अर्घं ॥ १९२ ॥

आतम लाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूह नसाया। सिद्ध समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई ॥
ॐ ह्रीं सिद्धआतमसंपन्नाय नमः अर्घं ॥ १९३ ॥

मोतियादाम छन्द।

चहूं गति काय स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष। भजों मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांबुजको निज माथ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धागर्भवासाय नमः अर्घं ॥ १९४ ॥

निजानंद श्रीयुत ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय। भजो मनआनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसंतर्पकाय नमः अर्घं ॥ १९५ ॥

सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद कीन। भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निजमाथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धअन्तराकाराय नमः अर्घं ॥ १९६ ॥

जहां लग द्वेष प्रवेश न होय, तहां लग सार रसायन होय। भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अर्घं ॥ १९७ ॥

जिसो निरलेप हुए विष तुंव्य, तिसो जग अग्र निराश्रय लुंव्य। भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घं ॥ १९८ ॥

तिहूं जग शीस विराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य। भजो मनआनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घं ॥ १९९ ॥

अकाय अरूप अलख अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद। भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०० ॥

अडिल्ल छन्द।

ऋषभ आदि चित धारि प्रथम दीक्षा धरी। केवलज्ञान उपाय धर्म विधि उच्चरी ॥
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं। परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घं ॥ २०१ ॥

निज ही निज उर धार हेत सामर्थ है। आतमशक्ति कर व्यक्ति करण विधि व्यर्थ है ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिगुप्तेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०२ ॥

साधन साधक साध्य भाव सब ही गयो। भेद अगोचर रूप महासुख संचयो ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०३ ॥

तत्व प्रतीत निजातम रूप अनुभव कला। पायो सत्यानंद कुमारग दलमला ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०४ ॥

वस्तु अनंत धर्म प्रकाशक ज्ञान है। एक पक्ष हठ सहित निपट असुहान है ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०५ ॥

वस्तु धर्म सामान्य ताहि अवलोकना । शुद्ध निजातम धर्म ताहि नहिं लोपना ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०६ ॥

अतुल अकम्प अखेद शुद्ध परणति धरैं । जगतरूप व्यापार न इक छिन आदरैं ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०७ ॥

षट् त्रिशति गुण सूरि मोक्ष-फल पाइयो । तातैं हम इन गुण कर ही जश गाइयो ॥

निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं । परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥

ॐ ह्रीं सूरिषट्त्रिशद्गुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २०८ ॥

पंचाचार आचारसाधि साथ शिवपद लियो । वास्तव में ये गुण निजमें परगट कियो ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिपंचाचारगुणे नमः अर्घं ॥ २०९ ॥

गुण समुदाय सरूप द्रव्य आतम महा । परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१० ॥

वीतराग परिणति रचही सुखकार जू । परम शुद्ध स्वैसिद्ध भये अनिवार जू ॥ निज स्वरूप०

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २११ ॥

छन्द चञ्चला ।

आप सुक्खरूप हो सु और सौख्यकार होत । ज्यूँ घटादिको प्रकाश-कार है सुदीप जोत ॥

सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान । मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्ष मान ॥

ॐ ह्रीं सूरिमङ्गलेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१२ ॥

सस अंश भानु वस्तु भाव को प्रकाशमान । ज्ञानइन्द्रियातिइन्द्रिया कहै उभय प्रमाण ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानमंगलेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१३ ॥

लोक उत्तमा सुईजु कर्मको प्रसंग टार । शुद्ध बुद्ध ऋद्धि पाय लोक वेदना निवार ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१४ ॥

लोकभीत सों अतीत आदि अन्त एक रूप । लोकमें प्रसिद्ध सर्व भावको अनूप भूप ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१५ ॥

वीचमें न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय । या अबाध धर्मके, प्रकाशमें करै सहाय ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१६ ॥

मोह भारको निवार शुद्ध चेतना सुधार, येह वीर्यता अपार, लोकमें प्रशंसकार ।
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान, मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ॥ २१७ ॥

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान । सप्त तत्वको वखान, मोक्षमार्गको निधान ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरिकेवलधर्माय नमः अर्घं ॥ २१८ ॥

शील आदि पूर भेद, कर्मके कलाप छेद । आत्म-शक्तिको प्रकाश, शुद्ध चेतना विलास ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरितप्तपोभ्यो नमः अर्घं ॥ २१९ ॥

लोक चाहकी न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह । शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२० ॥

मोहको न जोर जाय, घोर आपदा नसाय । घोरतें तपो सु लोक सिद्ध जाय मुक्ति पाय ॥ सूरि धर्मको०

ॐ ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२१ ॥

कामिनीमोह छन्द ।

वृद्धपर वृद्ध गुण गहन नित हो जहां, शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहां ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥

ॐ ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२२ ॥

एक सम भाव सम और नहिं ऋद्धि है, सर्व ही ऋद्धि जाके भये सिद्ध है ॥ सूरि सिद्धांतके०

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं ॥ २२३ ॥

योगके रोकसे कर्मका रोक हो, गुप्त साधन किये साध्य शिवलोक हो ॥ सूरि सिद्धांतके०

ॐ ह्रीं सूरिसुयोगेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२४ ॥

ध्यान वल कर्मके नाशके हेतु है, कर्मको नाश शिववास ही देतु है ॥ सूरि सिद्धांतके०

ॐ ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२५ ॥

पंचधाचारमें आत्म अधिकार है, वाह्य आधार आधेय सुविकार है ॥ सूरि सिद्धांतके०

ॐ ह्रीं सूरिधातृभ्यो नमः अर्घं ॥ २२६ ॥

सूर सम आप पर तेज करतार हैं, सूरि ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार हैं ॥ सूरि सिद्धांतके०

ॐ ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नमः अर्घं ॥ २२७ ॥

वाह्य छत्तीः अन्तर अभेदातमा, आपथिर रूप है सूरि परमात्मा ॥
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥
ॐ ह्रीं सूरिगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ २२८ ॥

ज्ञान उपयोगमें स्वस्थता शुद्धता, पूर्णचारित्रता पूर्ण ही बुद्धता ॥ सूरि सिद्धांतके०
ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ २२९ ॥

शरण दुख हरण पर आप स्वै शर्ण हैं, आपने कार्यमें आपही कर्ण हैं ॥ सूरि सिद्धांतके०
ॐ ह्रीं सूरिशरणाय नमः अर्घं ॥ २३० ॥

दोहा।

ज्यों कञ्चन विन कालिमा, उज्वल रूप सुहाय। त्योंही कर्म-कलंक विन, निज स्वरूप दरशाय ॥
ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ॥ २३१ ॥

भेदाभेद सु नय थकी, एक द्वि धर्म विचार। पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार ॥
ॐ ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ॥ २३२ ॥

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन। पूरण ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि सुधीन ॥
ॐ ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २३३ ॥

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त। पूरण सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त ॥
ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २३४ ॥

अनेकान्त तत्वार्थके, ज्ञाता सूरि महान। निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण ॥
ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २३५ ॥

मोहादिक रिपु नाशिके, सूरि महा सामर्थ। शिव भामिन भरतार नित, रमै साधि निज अर्थ ॥
ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २३६ ॥

पद्धड़ी छन्द।

जिन निज आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करैं पर पाप छीन। शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिमंगलशरणाय नमः अर्घं ॥ २३७ ॥

रत्नत्रय जीव सुभाव भाय, भवि पतित उधारण हो सहाय। शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नमः अर्घं ॥ २३८ ॥

तपकर ज्यों कञ्चन अग्नि जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरितपशरणाय नमः अर्घं ॥ २३९ ॥
एकाग्रचित्त चिंता निरोध, पावै अबाध शिव आतम सोध । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घं ॥ २४० ॥
केवल ज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरंजन पद सुखाइ । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घं ॥ २४१ ॥
तिहुं लोकनाथ तिहुं लोक माहिं, यासम दूजो सुखदाय नाहिं । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ २४२ ॥
आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुं काल भव्य पावै निर्वाण । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर
ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घं ॥ २४३ ॥
मध अधो ऊर्द्ध तिहुं जगतमाहिं, सबजीवन सुखकर और नाहिं । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरणगही आनंद पूर
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलाय नमः अर्घं ॥ २४४ ॥
तिहुं लोकमाहिं सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमंगलशरणाय नमः अर्घं ॥ २४५ ॥
उत्तम मंगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव सुख स्वरूप । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलोत्तमशरणाय नमः अर्घं ॥ २४६ ॥
शरणागत दुखनाशन महान, तिहुं जगहित कारण सुखनिधान । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मङ्गलशरणाय नमः अर्घं ॥ २४७ ॥
तिहुं लोकनाथ तिहुं लोकपूज, शरणागत प्रतिपालन अदूज । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंदपूर
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डनशरणाय नमः अर्घं ॥ २४८ ॥
अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, संसारातीत विमोह मुक्त । शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ॥
ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिमण्डलशरणाय नमः अर्घं ॥ २४९ ॥

त्रोटक छन्द ।

जिन रूप अनूप लखें सुख हो, जगमें यह मंत्र महान कहो । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा
ॐ ह्रीं सूरिमंत्रस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २५० ॥

जिम नागदेव वशमंत्र विधी, भव वास हरण तुम नामनिधी । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिमन्त्रगुणाय नमः अर्घं ॥ २५१ ॥

जगमोहित जीव न पावत हैं, यह मंत्र सु धर्म कहावत हैं । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिधर्माय नमः अर्घं ॥ २५२ ॥

चिद्रूप चिदातम भाव धरें, गुण सार यही अविरुद्ध वरें । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिचैतन्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २५३ ॥

अविकार चिदातम आनद हो, परमातम हो परमानंद हो । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिचिदानंदाय नमः अर्घं ॥ २५४ ॥

निजज्ञान प्रमाण प्रकाश करै, सुख रूप निराकुलता सु धरै । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नमः अर्घं ॥ २५५ ॥

धरि योग महाशम भाव गहै, सुखराशि महा शिववास लहै । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिसमभावाय नमः अर्घं ॥ २५६ ॥

सम भाव महा गुण धारत हैं, निजआनंद भाव निहारत हैं । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणानन्दाय नमः अर्घ ॥ २५७ ॥

शिवसाधनका विधिनाश कहा, विधिनाशनको तपकर्ण महा । धरिभक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणसुरूपाय नमः अर्घं ॥ २५८ ॥

निजआतम विषैं नित मगन रहैं, जगके सुखमूल न भूलिचहैं । धरिभक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिहसाय नमः अर्घं ॥ २५९ ॥

वनवास उदास सदा जगतैं, पर आसन खास विलास रतैं । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिहसगुणाय नमः अर्घं ॥ २६० ॥

निजनाम महागुणमंत्र धरै, छिन मात्र जपे भवि आश वरै । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिमंत्रगुणानन्दाय नमः अर्घं ॥ २६१ ॥

परमोत्तम सिद्धपर्याय कही, अति शुद्धप्रसिद्ध सुखात्ममही । धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करै सुखदा

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घं ॥ २६२ ॥

माला छन्द।

शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै, मिथ्यातम हरि भवि आनन्द करि अनुभव भाव दरसै।
सूरि निज भेद कियो परसै, भये मुक्ति मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसै ॥

ॐ ह्रीं सूरिअमृतचन्द्राय नमः अर्घं ॥ २६३ ॥

पूरण चन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान सुधा वरसै, भवि चकोर चित चाहत नित मनु चरण जोति परसै।
सूरि निज भेद कियो परसै, भये मुक्ति मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसै ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाचद्रस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २६४ ॥

जगजिय ताप निवारन कारण विलसे अन्दरसै, देव सुधा सम गुण निवाहकर सकल चराचरसै।
सूरि निज भेद किये परसै, भये मुक्ति मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसै ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घं ॥ २६५ ॥

जा धुनि सुनि संशय विनसे जिम ताप मेघ वरसै, मनहुं कमल मकरंद वृन्द अलि पाय सुधारससै।
सूरि निज भेद कियो परसै, भये मुक्ति मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसै ॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घं ॥ २६६ ॥

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसै, गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसै।
सूरि निज भेद किये परसै, भये मुक्ति मैं नमूं शीश नित जोर युगल करसै ॥

ॐ ह्रीं सूरिअमृतध्वनिसुरूपाय नमः अर्घं ॥ २६७ ॥

चकोर छन्द।

जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास। द्रव्य कहावत है सु अनंत, स्वभाव धरै निज आतम विलास
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुख काम नमूं वसु जाम

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घं ॥ २६८ ॥

ज्यों शशि जोति रहै सियरा, नित ज्यों रविजोति रहै नितताप। ज्यों निजज्ञानकला परिपूरण, राजत हो निजकरणासु आप
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम

ॐ ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घं ॥ २६९ ॥

हो अविनाश अनूपम रूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान। पै न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परिमाण
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम
ॐ ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घं ॥ २७० ॥

जे कछु द्रव्य तने गुण हैं, सुमस्त मिलें गुण आतम माहि। ताकरि द्रव्य सरूप कहावत, है अविनाश नमैं हम ताहि
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २७१ ॥

जा गुणमें गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर। सो गुण रूप सदा निवसै, हम पूजत हैं करके कर जोर
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वस जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २७२ ॥

जो परिणाम धरैं तिनसों तिनमें करहैं बरतै तिस रूप। सो पर्याय उपाय विना नित, आप विराजत हैं सु अनूप
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २७३ ॥

हो नित ही परिणाम समै प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान। सो तुम भाव प्रकाश कियो निज, यह गुणका उत्पाद महान
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घं ॥ २७४ ॥

ज्यों मृतिका निज रूप न छांडत, है घटमांहि अनेक प्रकार। सो तुम जीव सुभाव धरौ नित, मुक्त भए जगवास निवार।
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घं ॥ २७५ ॥

थे जगमें सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार। ते सब त्याग भए शिवरूप, अबंध अमन्द महा सुखकार ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घं ॥ २७६ ॥

जे जगमें षट्द्रव्य कहे, तिनमें इक जीव सुज्ञान स्वरूप। और सभी विन ज्ञान कहे, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूप ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्वाय नमः अर्घं ॥ २७७ ॥

ज्ञान सुभाव धरो नित ही नहिं, छाड़त हो कबहूं निज वान। येहि विशेष भयो सब सों नहिं, औरनमें गुण ये परधान ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्वगुणाय नमः अर्घं ॥ २७८ ॥

हो कर्तादि अनेक सुभाव, निज तममें परमें अनिवार। सो परको न लगार रहो, निज ही निज कर्म रहो सुखकार ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम, सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिजस्वभावधारकाय नमः अर्घं ॥ २७९ ॥

द्रव्य तथापि विभाव दोऊ विधि, कर्म प्रवाह वहै विन आदि। ते सब एक भये थिररूप, निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम। सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम ॥
ॐ ह्रीं सूरिआस्रवविनाशाय नमः अर्घं ॥ २८० ॥

मोदक छन्द।

बंध दोऊ विधिके दुख कारण, नाश कियो भवपार उतारण। सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर
ॐ ह्रीं सूरिवंधतत्वविनाशाय नमः अर्घं ॥ २८१ ॥

सम्वर तत्व महासुख देतहि, आस्रव रोकनको यह हेतहि। सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर
ॐ ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घं ॥ २८२ ॥

ज्यूं मणि दीपअडोल अनूपहि, संवर तत्व निराकुलरूपहि। सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर
ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २८३ ॥

संवरके गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सुध्यावत। सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर
ॐ ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घं ॥ २८४ ॥

संवर धर्मतनी शिव पावहि, संवर धरम तहां दरशावहि। सूरि महा निज ज्ञान कलाकार, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर ॥
ॐ ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नमः अर्घं ॥ २८५ ॥

दोहा।

एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप। नमूं निरजरा तत्वसो, पायो सिद्ध अनूप ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्वाय नमः अर्घं ॥ २८६ ॥

शुद्ध सुभाव जहां तहां, कहो कर्मको नाश। एम निरजरा तत्वका, रूप कियो परकाश ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २८७ ॥

कोटि जन्मके विघन सब, सूखे तृण सम जान । दहे निरजरा अग्निसों, इह गुण है परधान ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २८८ ॥

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म । धर्मी सोई आतमा, एक हि रूप सुपर्म ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २८९ ॥

समय समय गुण श्रेणिका, खिरै कर्म बल ध्यान । ये सम्बंध निवार करि, करै मुक्ति सुख पान ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबधाय नमः अर्घं ॥ २९० ॥

अतुल शक्ति थिर भावका, सो प्रगटी तुम माहिं । यही निर्जरा रूप है, नमूं भक्ति कर ताहि ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिजरास्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २९१ ॥

सर्व कर्मके नाश विन, लहै न शिव–सुखरास । निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घं ॥ २९२ ॥

सकल कर्ममल नाशतैं, शुद्ध निरंजन रूप । ज्यों कंचन विन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घं ॥ २९३ ॥

द्रव्य भाव दोनों सुविधि, करे जगतमें वास । दोऊ विध बन्ध उखारके, भये मुक्त सुखरास ॥
ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नमः अर्घं ॥ २९४ ॥

पर विकलप सुख दुख नहीं, अनुभव निज आनन्द । जन्म मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कंद ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ २९५ ॥

जहां न दुखको लेश है, उदय कर्म अनुसार । सो शिवपद पायो महा, नमूं भक्त उर धार ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घं ॥ २९६ ॥

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध है तिनसों नित्त प्रबन्ध । जे जगवास विलास दुख, तिनकूं नमूं अबन्ध ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुबधाय नमः अर्घं ॥ २९७ ॥

जैसी निज तन आकृती, तज कीनो शिववास । ते तैसैं नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ २९८ ॥

क्षयोपशम परिणाम कर, साध न निजका रूप । वा निजपदमें लीनता, ये ही गुप्त स्वरूप ॥
ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घं ॥ २९९ ॥

इन्द्रियजनित न दुख जहां, सदा निजानन्द रूप। निर आकुल स्वाधीनता, वरते शुद्ध स्वरूप ॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३०० ॥

रोला छन्द।

संपूरण श्रुत सार निजातम बोध लहानो, निज अनुभव शिव मूल मानु उपदेश करानो।
शिष्यनके अज्ञान हरैं ज्यों रवि अन्धियारा, पाठक गुण संभवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३०१ ॥

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी, तत्व ज्ञानसों लहै निजातम पद सुख दानी। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नमः अर्घं ॥ ३०२ ॥

भवसागरतें भव्य जीव तारन अनिवारा, तुममें यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३०३ ॥

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी, हीनाधिक बिन अचल विराजत शुद्ध सरूपी। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३०४ ॥

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरैं हैं, तिहूं काल प्रति अन्य भाव नहि ग्रहण करै हैं। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३०५ ॥

सहभावी गुण सार जहां परभाव न लेसा, अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घं ॥ ३०६ ॥

गुण समुदायी द्रव्य याहितें निरगुण नाहीं, सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं। शिष्यनके अज्ञान०

ॐ ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घं ॥ २०७ ॥

सत् सरूप सब द्रव्य सधैं नीके अबाधकर, सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भाव धर। शिष्यनके अज्ञान०

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३०८ ॥

जे जे हैं परिनाम विना परिनामी नाहीं, परिनामी परिनाम एक ही है तुममांही। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३०९ ॥

अगुरुलघू पर्याय शुद्ध परिणाम बखानी, निज सरूपमें अंतरगत श्रुतज्ञान प्रमानी। शिष्यनके अज्ञान० ॥

ॐ ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नम. अर्घं ॥ ३१० ॥

जगतवास सब पापमूल जियको दुखदाई, ताको नाशन हेत कहो शिव मूल उपाई। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकमगलाय नम: अर्घं॥ ३११ ॥
जहां न दुखको लेश सर्वथा सुख ही जानो, सोई मंगल गुण तुममें प्रत्यक्ष लखानो। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकमंगलगुणाय नमः अर्घं ॥ ३१२ ॥
औरन मंगलकरन आप मंगलमय राजै, दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजै। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकमंगलगुणस्वरूपाय नम: अर्घं॥ ३१३ ॥
आदि अन्त अविरुद्ध शुद्ध मंगलमय मूरति, निज सरूपमें वसै सदा परभाव विदूरित। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमगलाय नम: अर्घं ॥ ३१४ ॥
जितनी परणति धरो सबहि मंगलमय रूपी, अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकमगलपर्यायाय नम: अर्घं ॥ ३१५ ॥
निश्चय वा व्यवहार सर्वथा मंगलकारी, जग जीवनके विघन विनाशन सर्व प्रकारी। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमगलपर्यायाय नम: अर्घं ॥ ३१६ ॥
भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व वखानो, वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमगलाय नम: अर्घं ॥ ३१७ ॥
सब विशेष प्रतिभा समान मंगलमय भासे, निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे। शिष्यनके अज्ञान० ॥
ॐ ह्रीं पाठकस्वरूपमगलाय नम: अर्घं ॥ ३१८ ॥

पायता छन्द।

निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकमगलोत्तमाय नम: अर्घं॥ ३१९ ॥
जगजीवन को हम देखा, तुम ही गुण सार विशेखा। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ३२० ॥
षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यलोकोत्तमाय नम: अर्घं ॥ ३२१ ॥
निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाय नम: अर्घं॥ ३२२ ॥

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम ज्ञानी। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ३२३ ॥
तुम पद निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ३२४ ॥
हम सोवत हैं नितमोही, निर्मोही लखें तुमको ही। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ३२५ ॥
द्रगवंत महा सुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३२६ ॥
निरशंस अनंत अबाधा, निज बोधन भाव अराधा। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घं ॥ ३२७ ॥
सम्यक्त महा सुखकारी, निज गुण स्वरूप अविकारी। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३२८ ॥
निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घं ॥ ३२९ ॥
निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त अशेषा। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घं ॥ ३३० ॥
परिणाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेश कदाही। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३१ ॥
द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावे जगवासी न ऐसो। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३३२ ॥
निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनन्द सुभाव सु जीवत। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३३ ॥
अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३४ ॥

एकवार लखे सबहीको, तद्रूप निजातमहीको। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३३५ ॥

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३३६ ॥

शरणागत दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घं ॥ ३३७ ॥

जिनशरण गही शिव पायो, हम शरण महा गुण गायो। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ३३८ ॥

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ३३९ ॥

दृग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४० ॥

निरभेद स्वरूप अनूपा, हूँ शर्ण तणी शिव भूपा। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४१ ॥

निज आत्म-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४२ ॥

आतम-सरूप सरधाना, तुम शरण गही भगवाना। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३४३ ॥

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४४ ॥

आतम शक्ती प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४५ ॥

परमातम वीर्य महा है, पर निमित न लेश तहां है। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपरमात्मशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४६ ॥

श्रुत द्वादशांग जिनवानी, निश्चय शिववास करानी। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकद्वादशांगशरणाय नमः अर्घं ॥ ३४७ ॥

दश पूर्व महा जिनवानी, निश्चय अघहर सुखदानी। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदशपूर्वांगाय नमः अर्घं ॥ ३४८ ॥

दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करानी। तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वांगाय नमः अर्घं ॥ ३४९ ॥

निज आतम चर्ण प्रगटावै, आचार अंग कहलावै। तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकआचारांगाय नमः अर्घं ॥ ३५० ॥

रेखता छन्द।

विविध शंकादि तम टारी, निरंतर ज्ञान आचारी। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नमः अर्घं ॥ ३५१ ॥

पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घं ॥ ३५२ ॥

मुक्तिप्रद दैन अनिवारी, सर्व बुध चरण आचारी। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घं ॥ ३५३ ॥

शुद्ध रत्नत्रय-धारी, निजातमरूप अविकारी। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयसहायाय नमः अर्घं ॥ ३५४ ॥

ध्रौव्य पंचमगती पाई, जन्म फुनि मरण छुटकाई। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकध्रुवासंसाराय नमः अर्घं ॥ ३५५ ॥

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३५६ ॥

आन तुम सम न गुण होई, कहो एकत्व गुण सोई। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ३५७ ॥

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोई परमातम कहलाया। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वपरमात्मने नमः अर्घं ॥ ३५८ ॥

उच्चगत मोक्षका दाता, एक निजधर्म विख्याता । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वधर्माय नमः अर्घं ॥ ३५६ ॥

जो तुम चेतनता परकाशी, न पावै ऐसी जगवासी । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वचेतनाय नमः अर्घं ॥ ३६० ॥

ज्ञान दर्शन सरूपी हो, असाधारण अनूपी हो । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वचेतनस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३६१ ॥

गहै नित निज चतुष्टयको, मिलै कबहूं नहीं परसों । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकएकत्वद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३६२ ॥

स्वपद अनुभूति सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घं ॥ ३६३ ॥

अनन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घं ॥ ३६४ ॥

स्वआतम ज्ञान दरशाया, ये पूरण ऋद्धि पद पाया । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नमः अर्घं ॥ ३६५ ॥

सकल विधि मूर्छा त्यागी, तुम्ही निर्ग्रन्थ बडभागी । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्ग्रन्थाय नमः अर्घं ॥ ३६६ ॥

निजाश्रित अर्थ जानाही, अबाधित अर्थ तुममाही । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकअर्थविधानाय नमः अर्घं ॥ ३६७ ॥

न फिर संसार पद पाया, अपूरव बन्ध विनसाया । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकासंसारानुबन्धाय नमः अर्घं ॥ ३६८ ॥

आप कल्याणमय राजो, सकल जगत्रास दुख त्याजो । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणाय नमः अर्घं ॥ ३६६ ॥

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमः अर्घं ॥ ३७० ॥

अहित परिहार पद जोहै, परम कल्याण तासो है। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३७१ ॥

स्वसुख द्रव्याश्रये मोहीं, जहां कछु पर निमित नाहीं। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३७२ ॥

जोहै मोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकनत्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ३७३ ॥

रहै निज चेतना माही, कहैं चिद्रूप मुनि ताही। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नमः अर्घं ॥ ३७४ ॥

सर्वथा ज्ञान परिणामी, प्रगट है चेतना नामी। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनाय नमः अर्घं ॥ ३७५ ॥

नहीं अन्यत्र भेदा है, गुणी गुण निरविछेदा है। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नमः अर्घं ॥ ३७६ ॥

घटाघट वस्तु परकाशी, धरे हैं जोति प्रतिभाशी। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्योतिःप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ ३७७ ॥

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धोंका। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमः अर्घं ॥ ३७८ ॥

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुतिमें प्रगट सारा। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमः अर्घं ॥ ३७९ ॥

ज्ञानसों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकचिदानदाय नमः अर्घं ॥ ३८० ॥

चराचर वस्तु स्वाधीना, एक ही समय लखलीना। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घं ॥ ३८१ ॥

सकल जीवोंके सुख कारन, शरण तुमही हो अनिवारन। पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसकलशरणाय नमः अर्घं ॥ ३८२ ॥

तुम हि त्रयलोक हितकारी, अछूते शरण बलिहारी । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नमः अर्घं ॥ ३८३ ॥

तुम्हारी शरण तिहुं काला, करन जग जीव प्रतिपाला । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नमः अर्घं ॥ ३८४ ॥

शर्ण अनिवार सुखदाई, प्रगट सिद्धांतमें गाई । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रिमगलशरणाय नमः अर्घं ॥ ३८५ ॥

लोकमें धर्म विख्याता, सो तुम हीमें है सुखसाता । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ ३८६ ॥

जोग विन आस्रव नाहीं, भये निरआस्रवा ताही । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकआस्रववेदाय नमः अर्घं ॥ ३८७ ॥

आस्रव कर्मका खोना, कार्य था आपना होना । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकआस्रवविनाशाय नमः अर्घं ॥ ३८८ ॥

तत्र निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकआस्रवोपदेशछेदकाय नमः अर्घं ॥ ३८६ ॥

प्रकृति सब कर्मकी चूरी, भाव मल नाश दुख पूरी । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकबधमुक्ताय नमः अर्घं ॥ ३६० ॥

न फिर संसार अवतारा, बंध विधि अन्त कर डारा । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकबन्धान्तकाय नमः अर्घं ॥ ३६१ ॥

आस्रव कर्म दुखदाई, रुके संवर ये सुखदाई । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवराय नमः अर्घं ॥ ३६२ ॥

सर्वथा जोग विनसाया, स्वसंवर रूप दरशाया । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३६३ ॥

भावमें कलुषता नाहीं, भये संवर करण ताहीं । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरकारणाय नमः अर्घं ॥ ३६४ ॥

क

कुपरणति राग रूप नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३९५ ॥

काम दव दाह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककन्दर्पछेदकाय नमः अर्घं ॥ ३९६ ॥

चहूं विधि बंध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नमः अर्घं ॥ ३९७ ॥

दऊ विधि कर्मका खोना, सोई है मोक्षका होना । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घं ॥ ३९८ ॥

द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूं शिवरूप सुखकारा । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ३९९ ॥

अरति रति परनिमित खोई, आतम रति है प्रगट सोई । पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकआत्मरतये नमः अर्घं ॥ ४०० ॥

लोलतरङ्ग छन्द तथा बड़ी चौपाई ।

अट्ठाईस मूल गुणधारी, सो सब साधु वरें शिव नारी । साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ॥ ४०१ ॥

मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये । साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ ४०२ ॥

साधुनके गुण साधु हि जाने, होत गुणी गुण ही परमाने । साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४०३ ॥

नेम थकी शिववास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप करे जो । साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४०४ ॥

जीव सदा चिद् भाव विलासी, आप ही आप सधै शिव राशी । साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे

ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४०५ ॥

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभाशी । साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणाय नमः अर्घं ॥ ४०६ ॥

एक हि वार लखाय अमेदा, दर्शनको सब एक विछेदा। साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घं॥ ४०७॥

आपहि साधन साध्य तुम्हीं हो, एक अनेक अमेद तुम्हीं हो। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घं॥४०८॥

चेतनता निज भाव न छारे, रूप स्पर्शन आदि न धारे। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं॥४०९॥

जो उतपाद भयो इकवारा, सो निरबाध रहै अविकारा। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नमः अर्घं॥ ४१०॥

है परिणाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम साधु भये शिवगामी। साधु भये शिवसाधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घं॥ ४११॥

जो गुण वा पर्याय धरो हो, सो निज माहिं अभिन्न वरो हो। साधु भये शिवसाधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घं॥ ४१२॥

मगलमय तुम नाम कहावै, लेतहि नाम सु पाप नसावै। साधु भये शिवसाधन हारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुमगलाय नमः अर्घं॥ ४१३॥

मंगल रूप अनूपम सोहै, ध्यान किये नित आनंद होहै। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुमगलस्वरूपाय नमः अर्घं॥ ४१४॥

पाप मिटै तुम शरण गहेतें, मंगल शरण कहाय लहेतें। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलशरणाय नमः अर्घं॥ ४१५॥

देखत ही सब पाप नसे हैं, आनंद मंगलरूप लसे हैं। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलदर्शनाय नमः अर्घं॥ ४१६॥

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटैं तिनहीके। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलज्ञानाय नमः अर्घं॥ ४१७॥

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मंगल जोति धरौ रवि कासा। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणमंगलाय नमः अर्घं॥ ४१८॥

मंगल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनंता पाप गलाया। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलाय नमः अर्घं ॥ ४१६ ॥

वीर्य महा सुखरूप निहारा, पाप बिना नित ही अविकारा। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४२० ॥

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थहि मोक्ष लहामी। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यपरममंगलाय नमः अर्घं ॥ ४२१ ॥

वीर्य स्वभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४२२ ॥

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ४२३ ॥

लोक सभी विधि बन्धन माहीं, तुमसमरूप धरें ते नाहीं। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घं ॥ ४२४ ॥

लोकनके गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४२५ ॥

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४२६ ॥

लोक सभी षटद्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४२७ ॥

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषैं अरु कोहै। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ४२८ ॥

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४२९ ॥

देखनमें कछु आड न आवे, लोक सभी सब उत्तम गावे, साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ४३० ॥

देखन जानन भाव धरो हो, उत्तम लोकके हेतु गहो हो । साधु भये शिव सानहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ४३१ ॥

जाकर लोक शिखरपद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घं ॥ ४३२ ॥

धर्म स्वरूप निजातम माही, उत्तम लोक विषैं ठहराई । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४३३ ॥

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहैं बल ताको । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ॥ ४३४ ॥

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४३५ ॥

पूरण आतम कला परकाशी, लोक विषैं अतिशय अविनाशी । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमअतिशयाय नम· अर्घं ॥ ४३६ ॥

राग विरोध न चेतन माहीं, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताही । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ४३७ ॥

ज्ञान सरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अटोला । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४३८ ॥

राग विरोध जयो शिवगामी, आतम अनातम अन्तरयामी । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घं ॥ ४३९ ॥

भेद विना गुण भेद धरो हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घं ॥ ४४० ॥

साधत आतम पौर्ष सवाई, उत्तम पुरुष कहो जगताई । साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमः अर्घं ॥ ४४१ ॥

साधु समान न दीनदयाला, शरण गहैं सुख होत विशाला । साधू भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४२ ॥

जे जन साधू शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४३ ॥

साधुनके गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे। साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥

ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४४ ॥

लावनी छन्द।

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी, इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरें मुनिराजैं, मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकम्प विराजै ॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४५ ॥

तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा, यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४६ ॥

निज आतम रूपमें दृढ़ सरधा तुम पाई, थिर रूप सदा निवसो शिववास कराई। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुआत्मशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४७ ॥

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा, तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श सरूपा। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४४८ ॥

तुम परम पूज्य परमेश परम पद पाया, हम शरण गही पूजैं नित मन वच काया। निज रूपमगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमः अर्घं ॥ ४४९ ॥

तुम मन इन्द्री व्यापार जीत सुअभीता, हम शरण गही मनु आज कर्मरिपु जीता। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमः अर्घं ॥ ४५० ॥

भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मनमें, तिनको अवलम्ब उभारो भय हर छिनमें। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यशरणाय नमः अर्घं ॥ ४५१ ॥

दृगबोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा, तुम बल अपार शरणागत विघन विछेदा। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं वीर्यशरणाय नमः अर्घं ॥ ४५२ ॥ साधु वीर्यम्

निज ज्ञानानन्दी महालक्ष्मी सोहै, सुर असुरनमें नित परम मुनी मन मोहै। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीअलंकृताय नमः अर्घं ॥ ४५३ ॥

भववास महा दुखरास ताहि विनशाया, अतिछीन लीन स्वाधीन महासुख पाया।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकम्प विराजें ॥

ॐ ह्रीं साधुजन्ममीप्रणीताय नमः अर्घं ॥ ४५४ ॥

त्रिभुवनका ईश्वरपना तुम्हींमें पाया, त्रिभुवनके पातक हरौ मनू रवि छाया। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमः अर्घं ॥ ४५५ ॥

तुम काल अनन्तानन्त अबाध विराजो, परनिमित विकार निवार सु नित्य सु छाजो। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुध्रुवाय नमः अर्घं ॥ ४५६ ॥

तुम क्षायक लब्धि प्रभाव परम गुण धारी, निवसो निज आनन्द मांहि अचल अविकारी। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमः अर्घं ॥ ४५७ ॥

तेरम चौदम गुणथान द्रव्य है जैसो, रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमः अर्घं ॥ ४५८ ॥

फिर जन्म मरण नहिं होय जन्म वो पाया, संसार विलक्षण सो अपूर्व पद पाया। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमः अर्घं ॥ ४५९ ॥

सूक्षम अलब्धि पर्याप्त निगोद शरीरा, ते तुच्छ द्रव्य कर नाशि भये भव तीरा। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यव्ययाय नमः अर्घं ॥ ४६० ॥

रागादिक परिग्रह टारि तत्व सरधानी, इम साधु जीव निज साधत शिवसुखदानी। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुजीवाय नमः अर्घं ॥ ४६१ ॥

स्वसवेदन विज्ञान परम अमलाना, तज इष्ट अनिष्ट विकल्प जाल दुखसाना। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नमः अर्घं ॥ ६४२ ॥

देखन जानन चेतन सुरूप अविकारी, गुण गुणी भेदमें अन्य भेद व्यभिचारी। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनगुणाय नमः अर्घं ॥ ४६३ ॥

चेतनकी परिणति रहै सदा चित मांही, ज्यों सिंधु लहर है सिंधु और कछु नाहीं। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुचेतनस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४६४ ॥

चेतन विलास सुखरास नित्य परकाशी, सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकम्प विराजें ॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनाय नमः अर्घं ॥ ४६५ ॥
तुम असाधारण अरुपरमातम परकाशी, नहिं अन्य जीव यह लहै गहै भववासी। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ ४६६ ॥
तुम मोह तिमिर विन स्वयं सूर्य परकाशी, गुण द्रव्य पर्य सब भिन्न भिन्न प्रतिभाशी। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुज्योतिःस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४६७ ॥
ज्यों घटपटादि दीपककी ज्योति दिखावै, त्यों ज्ञान ज्योति सब भिन्न भिन्न दरशावै। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुज्योतिःप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४६८ ॥
सामान्य रूप अवलोकन युगपत सारा, तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरे अन्धयारा। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनज्योतिःप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४६९ ॥
साकार रूप सु विशेष ज्ञान द्यु ति माहीं, युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तू प्रगटाई। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुज्ञानज्योतिःप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४७० ॥
जे अर्थ जन्य कहैं ज्ञान वो झूठे वादी, है स्वपर प्रकाशक आतम ज्योति अनादी। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुआत्मज्योतिषे नमः अर्घं ॥ ३७१ ॥
है तारन तरन जहाजाश्रित—भवसागर, हम शरन गही पावें शिववास उजागर। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७२ ॥
सामान्य रूप सब साधु मुक्ति मग साधें, हम पावें निज पद नेमरूप आराधैं। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुसर्वशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७३ ॥
त्रस नाड़ी ही में तत्त्वज्ञान सरधानी, ताकर साधे निश्चय पावे शिवरानी। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७४ ॥
तिहुं लोक करन हित वरते नित उपदेशा, हम शरण गही मेटो भवत्रास कलेशा। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७५ ॥

संसार विषम दुखकार असार अपारा, तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकम्प विराजें ॥

ॐ ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घं ॥ ४७६ ॥

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजै, तद्‌पि निज सत्ता माहि भिन्नता साजै। निज रूप० ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वाय नमः अर्घं ॥ ४७७ ॥

यद्यपि सामान्य सरूप सु पूरण ज्ञानी, तद्‌पि निज आश्रय भाव भिन्न परनामी। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ४७८ ॥

है असाधारण एकत्व द्रव्य तुम माही, तुम सम संसार मझार और कोऊ नाहीं। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४७९ ॥

यद्यपि सब ही हो असंख्यात परदेशी, तद्‌पि निज में निज रूप स्वद्रव्य स्वदेशी। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४८० ॥

सामान्य रूप सब ब्रह्म कहावै ज्ञानी, तिनमें तुम वृषभ सु पर्म ब्रह्म परिणामी। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ ४८१ ॥

सापेक्ष एक ही कहै सु नय विस्तारा, तुम भाव प्रगट कर कहै सु निश्चैकारा। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमस्याद्वादाय नमः अर्घं ॥ ४८२ ॥

है ज्ञान निमित यह वचन जाल परिमाणा, है वाचक वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुशुद्धब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ ४८३ ॥

पर द्रव्य निरूपण करे सोई आगम हो, तिसके तुम मूल निधान सु परमागम हो। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमागमाय नमः अर्घं ॥ ४८४ ॥

तीर्थेश कहै सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं, तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताहीं। निज रूप गमन० ॥

ॐ ह्रीं साधुजिनागमाय नमः अर्घं ॥ ४८५ ॥

तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थका वाची, ताके प्रबोधसों हो प्रतीत मन सांची। निज रूप मगन० ॥

ॐ ह्रीं साधुअनेकार्थाय नमः अर्घं ॥ ४८६ ॥

लोभादिक मेटे विन न शौचता होई, है वृथा तीर्थ स्नान करो भी कोई।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकम्प विराजें ॥
ॐ ह्रीं साधुशौचाय नमः अर्घं ॥ ४८७ ॥

है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना, सो शुद्ध शौच गुण यही न तनका धोना। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ४८८ ॥

एकदेश कर्ममल नाश पवित्र कहायो, तुम सर्व कर्ममल नाशि परम पद पायो। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुपवित्राय नमः अर्घं ॥ ४८९ ॥

तुम रहो बन्धमों दूरि एकांत सुखाई, ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिस माहीं। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुविविक्ताय नमः अर्घं ॥ ४९० ॥

सब द्रव्य भाव नोकर्म बन्ध छुटकाया, तुम शुद्ध निरंजन निज सरूप थिर पाया। निज रूप मगन० ॥
ॐ ह्रीं साधुबन्धमुक्ताय नमः अर्घं ॥ ४९१ ॥

अडिल्ल छन्द।

भावास्रव विन अतिशय सहित अबन्ध हो, मेघ पटल विन ज्यों रवि किरण अबन्ध हो।
मोक्षमार्ग वा मोक्षश्रेय सब साधु हैं, नमत निरंतर हमहूं कर्मरिपुको दहैं ॥
ॐ ह्रीं साधुबन्धप्रतिबन्धकाय नमः अर्घं ॥ ४९२ ॥

तुम स्वरूपमें लीन परम संवर करैं, यह कारण अनिवार कर्म आवन हरैं। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥
ॐ ह्रीं साधुसंवरकारणाय नमः अर्घं ॥ ४९३ ॥

पुद्गलीक परिणाम आठ विधि कर्म हैं, तिनकी करत निर्जरा शुद्ध सु परम हैं। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जराद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४९४ ॥

पर्म शुद्ध उपयोग रूप वरते जहां, छिनमें नन्तानन्त कर्म खिरहैं तहां। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जराविमलाय नमः अर्घं ॥ ४९५ ॥

सकल विभाव अभाव निर्जरा करत है, ज्यों रवि तेज प्रचण्ड सकल तम हरत है। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नमः अर्घं ॥ ४९६ ॥

जे संसार निमित ते सब दुखरूप हैं, तुम निमित शिव कारण शुद्ध अनूप हैं। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥
ॐ ह्रीं साधुनिमित्तमुक्ताय नमः अर्घं ॥ ४९७ ॥

संशय रहित सुनिश्चै सम्मतिदाय हो, मिथ्या भ्रमतम नाशन सहज उपाय हो ।
मोक्ष मार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं, नमत निरंतर हमहूं कर्मरिपुको दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुबोधधर्माय नमः अर्घं ॥ ४९८ ॥

अति विशुद्ध निज ज्ञान स्वभाव सु धरत हो, भव्यनके संशय आदिक तम हरत हो । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुबोधगुणाय नमः अर्घं ॥ ४९९ ॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो, पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुसुगतिभावाय नमः अर्घं ॥ ५०० ॥

जासों परे न और जन्म वा मरण है, सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहै । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमगतिभावाय नमः अर्घं ॥ ५०१ ॥

पर निमित्त रागादिक जे परिनाम हैं, इनविभावसों रहित साधु शुभ नाम हैं । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुविभावरहिताय नमः अर्घं ॥ ५०२ ॥

निज सुभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो, इन्द्र फनेन्द्र नरेन्द्र शीश निज नाइयो । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुस्वभावमहिताय नमः अर्घं ॥ ५०३ ॥

कर्मबन्धसों रहित सोई शिवरूप हैं, निवसें सदा अबन्ध स्वशुद्ध अनूप हैं । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५०४ ॥

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हो, सत्यारथ निश्चल निश्चै परमाण हो । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमानंदाय नमः अर्घं ॥ ५०५ ॥

तीन लोकके पूज्य यतीजन ध्यावही, कर्म-शत्रुको जीत अर्हं पद पावही । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुअर्हंत्स्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५०६ ॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो, तीन लोक परमेष्ठि परम पद पाइयो । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुसिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५०७ ॥

शिव मारग प्रगटावन कारण हो तुम्हीं, भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं । मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुसूरिप्रकाशिने नमः अर्घं ॥ ५०८ ॥

स्वपर स्वहितकरि परम बुद्धि भरतार हो, ध्यान धरत आनंद बोध दातार हो।

मोक्ष मार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं, नमत निरंतर हमहूं कर्मरिपुको दहैं ॥

ॐ ह्रीं साधुउपाध्यायाय नमः अर्घं ॥ ५०६ ॥

पंच परम गुरु प्रगट तुम्हारो नाम है, भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है। मोक्षमागर्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ॥ ५१० ॥

लोकालोक सु व्यापक ज्ञान सुभावतें, तदपि निज सुपद लीन विहीन विभावतें। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुआत्मरताय नमः अर्घं ॥ ५११ ॥

रतनत्रय निज भाव विशेष अनन्त हैं, पंच परम गुरु भये नमें नित सन्त हैं। मोक्षमार्ग वा मोक्ष० ॥

ॐ ह्रीं साधुअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरत्नत्रयात्मक अनन्तगुणेभ्यो नमः अर्घं ॥ ५१२ ॥

अडिल्ल छन्द।

पंच परम गुरुनाम विशेषणको धरैं, तीन लोकमें मंगलमय आनन्द करैं।

पूरण करि थुति नाम अन्त सुख कारणं, पूजूं हूं युत भाव सुअर्घ उतारणं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपंचशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं ॥

(यहां पर " ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः " इस मन्त्र का १०८ वार जपन करना चाहिये)

अथ जयमाला।

रत्नत्रय भूपित महा, पंच सुगुरु शिवकार। सकल सुरेन्द्र नमें नमूँ, पाऊं सो गुण सार ॥

पद्धडी छन्द।

जय महामोह दल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनंद पूर।

जय दोउ विधि कर्म विमुक्त देव, जय निजानंद स्वाधीन एव

जय सशयादि भ्रमतम निवार, जय स्वामिभक्ति द्युति थुति अपार।

जय युगपत सकलप्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष ॥

जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वंद निरामय निर उपाधि।

जय मन वच तन व्यापार नाश, जय थिर सरूप निज पद प्रकाश ॥
जय पर निमित्त सुख दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार ।
निजमें परको परमें न आप, परवेश न हो नित निर-मिलाप ॥
तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार ।
तुम पंच परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त ॥
एकादशांग सर्वांग पूर्व, स्वै अनुभव पायो फल अपूर्व ।
अन्तर बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधू पद लहाय ॥
हम पूजत नित उर भक्ति ठान, पावें निश्चय शिवपद महान ।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय, मणि चंद्र कांति द्रवता लहाय ॥

घत्तानन्द छन्द ।

जय भव भय हारं बन्ध विडारं, सुख सारं शिव करतारं ।
नित सन्त सु ध्यावत पाप नसावत, पावत पद निज अविकारं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपचशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं ॥

सोरठा ।

तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव भय नशै । सन्त सदा चित धार, शांति करो भवतप हरो ॥

(इत्याशीर्वादः)   इति सप्तमी पूजा समाप्त ।

—:0:—

अथ अष्टमी पूजा १०२४ गुण सहित ।

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सुरेफ बिन्दु हंकार बिराजै, अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै ।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिवर, अग्र भागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
पुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको, ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिनः १०२४ गुणविराजमाना अत्रावतरतावतरत संवौषट् , अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः,अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निरोग । सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥

यन्त्र स्थापनम् ।

अथाष्टकं ।

गीता छन्द ।

निज आतमरूप सु तीर्थ मग नित, सरस आनंद धार हो । नाशे त्रिविध मल सकल दुखमय, भव जलधिके पार हो ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, नीरसों पूजा करूँ । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूँ ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजारचौवीसगुणसंयुक्ताय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

शीतल सरूप सुगन्ध चन्दन, एक भव तप नाशही । सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह नहिं, और ठौर सु वास ही ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, मलयसों पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजार चौवीसगुणसंयुक्ताय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अक्षय अबाधित आदि अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो । ज्यों तुष विना तंदुल, दिपै त्यूं, निखिल अमल प्रभाव हो ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, अक्षतं पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजारचौवीसगुणसंयुक्ताय श्रीअक्षतपदप्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कंठ पहिरें भावसों । जिनके मधुप मन रसिक लुब्धित, रमत नित प्रति चावसों ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, पुष्पसों पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजारचौवीसगुणसंयुक्ताय कामबाणविनाशनाय पुष्प ॥ ४ ॥

शुद्धात्म सरस सुपाक मधुर, समान और न रस कहीं । ताके हो अस्वादी सो तुम सम, और संतुष्टित नहीं ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, चरुनसों पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजारचौवीसगुणसंयुक्ताय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् ॥ ५ ॥

स्वैपर प्रकाश स्वभावधर, ज्यूं निज स्वरूप संभारते । त्यूं ही त्रिकाल अनंत द्रव्य पर्याय, प्रगट निहारते ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, दीपसों पूजा करूं । इक सहस चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजारचौवीसगुणसंयुक्ताय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्द्ध गमन स्वभावतें । राजै अचल शिव थान नित, तिन धर्मद्रव्य अभावतें ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, धूपसों पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकहजारचौवीसगुणसंयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा । तीर्थेश पदको स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा ॥
यातें उचित ही है जु तुम पद, फलनसों पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

अष्टांग मूल सु विधि हरो निज, अष्ट गुण पायो सही । अष्टार्द्ध गति संसार मेटि सु, अचल ह्वै अष्टम मही ॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, अर्घसों पूजा करूं । इक सहस अरु चौवीस गुण गण, भाव युत मनमें धरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १०२४ गुणसयुक्ताय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं ॥ ९ ॥

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वासचंदन, धवल फल अक्षत युत अनी । शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सु विधि घनी
वरदीपमाल उजाल धूपायन रसायन भले । करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले ॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप है । दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप है ॥
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिवकमलापती । मुनि ध्येय सेय अभेय चहुं गुण गेह द्यो हम शुभ मती ॥ पूर्णार्घम्

एक सहस्रचौबीस गुणनामावली ।

दोहा ।

इन्द्रिय विषय कषाय हैं अन्तर शत्रु महान । तिनको जीतत जिन भये, नमूं सिद्ध भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाय नमः अर्घं ॥ १ ॥

रागादिक जीते सु जिन, तिनमें तुम परधान । तातें नाम जिनेन्द्र है, नमूं सदा धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नमः अर्घं ॥ २ ॥

रागादिक लवलेश विन, शुद्ध निरंजन देव । पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपूर्णाय नमः अर्घं ॥ ३॥

बाह्य शत्रु उपचरितको, जीतत जिन नहिं होय । अन्तर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ४ ॥

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत हैं तिहुं काल । गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रष्ठाय नमः अर्घं ॥ ५ ॥

गणधरादि सत पुरुष जे, वीतराग निरग्रन्थ । तुमको सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिपाय नमः अर्घं ॥ ६ ॥

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहंत । द्रव्यभाव सर्वातमा, नमूं सिद्ध भगवत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नमः अर्घं ॥ ७ ॥

गणधरादि सेवत चरन, शुद्धातम लवलाय । तीन लोक स्वामी भये, नमूं सिद्ध अधिकाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनस्वामिने नमः अर्घं ॥ ८ ॥

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान । सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूं पाऊँ शिवसुख थान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घं ॥ ९ ॥

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात । सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननाथाय नमः अर्घं ॥ १० ॥

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज । नितप्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्य समाज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपतये नमः अर्घं ॥ ११ ॥

त्रिभुवन शिखरशिरोमणी, राजत सिद्ध अनंत । शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवे नमः अर्घं ॥ १२ ॥

जिन आज्ञा त्रिभुवनविषें, वरते सदा अखण्ड । मिथ्यामति दुरपक्षको, देत नीति सों दण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनराजाधिराजाय नमः अर्घं ॥ १३ ॥

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश। राजत है विस्तीर्ण जिन, नमूं हरो भववास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनविभवे नमः अर्घं ॥ १४ ॥

आत्मज्ञ जिन नमत हैं, शुद्धातमके हेत। स्वामी हो तिहुं लोकके, नमूं वसे शिवखेत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनभर्त्रे नमः अर्घं ॥ १५ ॥

मिथ्यातमको नाश करि, तत्वज्ञान प्रकाश। दीप्ति रूप रविसम सदा, करो सदा उर वास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्वप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ १६ ॥

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार। धर्ममार्ग प्रगटात हैं, शुद्ध सुलभ सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मजिदीशाय नमः अर्घं ॥ १७ ॥

अमृत सम निज दृष्टिसों, यथाख्यात आचार। तिन सबके स्वामी नमूं, पायो शिवपद सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घं ॥ १८ ॥

समोशरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान। शुद्धातम शिवपद लहो, नमूं कर्मकी हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घं ॥ १९ ॥

सूरज सम तिहुं लोकमें, मिथ्या तिमिर निवार। सहज दिखायो मोक्षमग, मैं वंदूं हित धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननेत्रे नमः अर्घं ॥ २० ॥

जन्म मरण दुख जीति कर, जिन जिन नाम धराय। नमूं सिद्ध परमातमा, भवदुख सहज नसाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनजेत्रे नमः अर्घं ॥ २१ ॥

अचल अबाधित पद लहो, निज स्वभाव दिढ भाय। नमूं सिद्ध कर जोरिकर, भाव सहित उर लाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपरिदृढाय नमः अर्घं ॥ २२ ॥

सर्व-व्यापि परमातमा, सर्व पूज्य विख्यात। श्रीजिनदेव नमूं त्रिविध, सर्व पाप नशि जात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाय नमः अर्घं ॥ २३ ॥

श्री जिनेश जिनराज हो, निज स्वभाव अनिवार। पर निमित्त विनशे सकल, वन्दूं शिवसुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घं ॥ २४ ॥

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय। तीन लोक पालक महा, मैं वन्दूं शिवराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपालकाय नमः अर्घं ॥ २५ ॥

गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार । अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूं करो भवपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घं ॥ २६ ॥

परम धर्म उपदेश करि, प्रगटायो शिवराय । श्री जिन निज आनन्द विमें, वरतैं वदूं ताय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनेशाय नमः अर्घं ॥ २७ ॥

पूरण पद पावत निपुण, सब देवन के देव । मैं पूजूं नित भावसों, पाऊं शिव स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घं ॥ २८ ॥

तीन लोक विख्यात हैं, तारण तरण जिहाज । तुम सम देव न और है, तुम सबके शिरताज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनअद्वितीयाय नमः अर्घं ॥ २९ ॥

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिरनाय । इन्द्रादिक थुति करि थके, मैं वन्दू तिस पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घं ॥ ३० ॥

तुम समान नहिं देव है, भविजन तारन हेत । चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावे शिवसुख खेत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्रविबधाय नमः अर्घं ॥ ३१ ॥

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपति निवार । धर्मामृत कर पोषियो, वरते शशि उनहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घं ॥ ३२ ॥

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोकके जीव । तत्व मार्ग प्रगटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनादित्याय नमः अर्घं ॥ ३३ ॥

विन कारण तारणतरण, दीप्त रूप भगवान । इन्द्रादिक पूजत चरण करत कर्म की हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तरूपाय नमः अर्घं ॥ ३४ ॥

जैसे कुञ्जर चक्रके, जाने दल को साज । चार संघ नायक प्रभु, वंदूं सिद्ध समाज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनकुञ्जराय नमः अर्घं ॥ ३५ ॥

दीप्त रूप तिहु लोकमें, है प्रचण्ड परताप । भक्तनको नित देत हैं, भोगे शिव सुख आप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनार्काय नमः अर्घं ॥ ३६ ॥

रत्नत्रय मग साधकर, सिद्ध भये भगवान । पूरण निजसुख धरत हैं, निजमें निज परिणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधौरेयाय नमः अर्घं ॥ ३७ ॥

तीन लोकके नाथ हो, ज्यूं तारागण सूर्य । शिव सुख पायो परम पद, वन्दौ श्री जिन धूर्य्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधुर्याय नमः अर्घं ॥ ३८ ॥

पराधीन विन परम पद, तुम विन लहै न और । उत्तमातमा मैं नमूं, तीन लोक शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ३९ ॥

जहाँ न दुखको लेश है, तहां न परसों कार । तुम विन कहूं न श्रेष्ठता, तीन लोक दुख टार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकदुःखनिवारणाय नमः अर्घं ॥ ४० ॥

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज । परम श्रेय परमातमा, वन्दू शिवसुख साज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवराय नमः अर्घं ॥ ४१ ॥

निर्भय हो निर-आश्रयी, निःसंगी निर्बंध । निज साधन साधक सुगुन, परसों नहिं सम्बंध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःसगाय नमः अर्घं ॥ ४२ ॥

अन्तराय विधि नाशकै, निजानन्द भयो प्राप्त । संत नमें कर जोर युग, भव-दुख करो समाप्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोद्वहाय नमः अर्घं ॥ ४३ ॥

शिवमारगमें धरत हो, जग मारगतें काढ़ । धर्म धुरंधर मैं नमूं, पाऊं भव वन बाढ़ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृषभाय नमः अर्घं ॥ ४४ ॥

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार । रहो सु थिर निज धर्ममें, मैं वन्दूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधर्माय नमः अर्घं ॥ ४५ ॥

जगत जीव विधि धूलि सों, लिप्त न लहै प्रभाव । रत्नराशि सम तुम दिपौ, निर्मल सहज सुभाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनरत्नाय नमः अर्घं ॥ ४६ ॥

तीन लोक के शिखर पर, राजत हो विख्यात । तुम सम और न जगतमें, बड़ा कोई दिखलात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरसे नमः अर्घं ॥ ४७ ॥

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोहशत्रुको जीत । लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोकके मीत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घं ॥ ४८ ॥

चारि घातिया कर्मको, नाश कियो जिनराय । घाति अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिन.ग्र्याय नमः अर्घं ॥ ४९ ॥

निज पौरुषकर साधियो, निज पुरुषारथ सार। अन्य सहाय नहीं चहैं, सिद्ध सु वीर्य अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनशार्दूलाय नमः अर्घं ॥ ५० ॥
इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय। तीन लोक चूड़ामणी, नमूं सिद्ध सुख होय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपुंगवाय नमः अर्घं ॥ ५१ ॥
निजानंद पदको लहो, अविरोधी मल नास। समकित विन तिहुं लोकमें, और नहीं सुखरास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रवेकाय नमः अर्घं ॥ ५२ ॥
जगत शत्रुको जीतिके, कल्पित जिन कहलाय। मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनहंसाय नमः अर्घं ॥ ५३ ॥
द्रव्य भाव दोनो नहीं उत्तम शिवसुख लीन। मन वच तन करि मैं नमूं, निज सम भाव जु कीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमसुखधारकाय नमः अर्घं ॥ ५४ ॥
चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय। तारण तरण जहानके, मैं वन्दूं शिवराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घं ॥ ५५ ॥
स्वयं बुद्ध शिवमार्गमें, आप चलैं अनिवार। भविजन अग्रेश्वर भये, वन्दूं भक्ति विचार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नमः अर्घं ॥ ५६ ॥
शिवमारगके चिह्न हो, सुखसागरकी पाल। शिवपुरके तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनग्रामण्ये नमः अर्घं ॥ ५७ ॥
तुम सम और न जगतमें, उत्तम श्रेष्ठ कहाय। आप तिरैं पर तारते, वन्दूं तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनसत्तमाय नमः अर्घं ॥ ५८ ॥
स्वपर कल्याणक प्रभू, पंचकल्याणक ईश। श्रीपति शिव-शंकर नमूं, चरणाम्बुज धरि शीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवाय नमः अर्घं ॥ ५९ ॥
मोह महाचल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ। परम ज्योति शिवपद लहो, चरन नमूं धरि माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमजिनाय नमः अर्घं ॥ ६० ॥
चहुं गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ। नमूं सिद्ध कर जोरिकैं, पाऊं मैं सर्वार्थ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जिनचहुंगतिदुःखान्तकाय नमः अर्घं ॥ ६१ ॥

जीते कर्म निकृष्टको, श्रेष्ठ भये जिनदेव। तुम सम और न जगतमें, वन्दूं मैं तिन मेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घं ॥ ६२ ॥

आप मोक्ष मग साधियो, और न सुलभ कराय। आदि पुरुष तुम जगतमें, धर्म रीति वरताय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घं ॥ ६३ ॥

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय। मैं वन्दूं तिन भक्तिकर, सिद्ध कहावे सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनमुखाय नमः अर्घं ॥ ६४ ॥

सुरपति सम अग्रेश हो, निज पर भासनहार। आप तिरे भवि तारियो, वन्दूं योग संभार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घं ॥ ६५ ॥

रागादिक रिपु जीत तुम, श्री जिन नाम धराय। सिद्ध भये कर जोरिके, वन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनाय नमः अर्घं ॥ ६६ ॥

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण। उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्मको चूर्ण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनउत्तमाय नमः अर्घं ॥ ६७ ॥

चहुं प्रकारके देवता, नित्य नमावत शीश। तुम देवनके देव हो, नमूं सिद्धजगदीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृन्दारकाय नमः अर्घं ॥ ६८ ॥

जो निज सुख होने न दे, सो सत रिपु है जोय। ऐसे रिपुको जीतके, नमूं सिद्ध जो होय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरिजिते नमः अर्घं ॥ ६९ ॥

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात। जामें विघ्न न लेश है, नमूं सिद्ध कहलात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्नाय नमः अर्घं ॥ ७० ॥

रागदोष मद मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय। शुद्ध निरंजन सिद्ध हैं, वंदूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरजसे नमः अर्घं ॥ ७१ ॥

मत्सर भाव दुखी करे, निजानन्दको घात। सो तुम नाशो छिनकमें, सम सुखिया कहलात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तमस्काय नमः अर्घं ॥ ७२ ॥

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहिं जाय। वचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धाय नमः अर्घं ॥ ७३ ॥

रागादिक मल विन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान। शुद्ध निरंजन पद लियो, नमूं चरण धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरंजनाय नमः अर्घं ॥ ७४ ॥

द्रव्य भाव दो विधि करम, नाशि भये शिवराय। वन्दूं मन वच काय कर, भविजनको सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मघ्नाय नमः अर्घं ॥ ७५ ॥

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म। तिनको अन्त खिपाइके, लियो मोक्षपद पर्म ॥

ॐ ह्रीं अर्हं घातिकर्मान्तकाय नमः अर्घं ॥ ७६ ॥

ज्ञानावरणी पटल विन, ज्ञान दीप्ति परकाश। शुद्ध सिद्ध परमातमा, वंदत भवदुख नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तये नमः अर्घं ॥ ७७ ॥

कर्म रुलावे आतमा, रागादिक उपजाय। तिन सो कर्म विनाशकैं, सिद्ध भये सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ममर्मभिदे नमः अर्घं ॥ ७८ ॥

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात। मुनि मन मोहन रूप है, नमूं जोरि जुग हाथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनुदयाय नमः अर्घं ॥ ७९ ॥

राग नहीं थुतिकारसों, निंदक सो नहिं द्वेष। सम सुखिया आनंद घन, वन्दूं सिद्ध हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतरागाय नमः अर्घं ॥ ८० ॥

क्षुधा वेदनी नाशकर, स्वै सुख भुन्जन हार। निजानन्द संतुष्ट हैं, वन्दूं भाव विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुधे नमः अर्घं ॥ ८१ ॥

एक दृष्टि सबको लखैं, इष्ट अनिष्ट न कोय। द्वेष अंग व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेषाय नमः अर्घं ॥ ८२ ॥

भवसागरके तीर हैं, शिवपुरके हैं राहि। मिथ्यातम हर सूर्य हैं, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नमः अर्घं ॥ ८३ ॥

जग जनमें यह दोष है, सुखी दुखी बहु भेव। ते सब दोष निवारियो, उत्तम हो स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोषाय नमः अर्घं ॥ ८४ ॥

जनम मरण यह रोग है, तिनको कठिन इलाज। परमौषध यह रोगकी, वन्दूं मेटन काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगदाय नमः अर्घं ॥ ८५ ॥

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सों होय । सो जिन मोह विनाशियो, नमूं सिद्ध हैं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्वाय नमः अर्घं ॥ ८६ ॥

तृष्णा दुखको मूल है, सुखी भये तिस नाश । मन वच तन करि मैं नमूं, है आनद विलास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीततृष्णाय नमः अर्घं ॥ ८७ ॥

अन्तर बाह्य निरिच्छ हैं, एकी रूप अनूप । निष्पृह परमेश्वर नमूं, निजानन्द शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं असंगाय नमः अर्घं ॥ ८८ ॥

क्षायिक समकितको धरैं, निर्भय थिरता रूप । निजानन्दसों नहिं चिगें, वन्दूं मैं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भयाय नमः अर्घं ॥ ८९ ॥

स्वप्न प्रमादी जीवके, अल्प-शक्ति सों होय । निज बल अतुल महा धरै, सिद्ध कहावे सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्वपनाय नमः अर्घं ॥ ९० ॥

दर्श ज्ञान सुख भोगतें, खेद न रंचक होय । सो अनन्त बल के धनी, सिद्ध नमामी सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःश्रमाय नमः अर्घं ॥ ९१ ॥

युगपत सब प्रापत भये, जानत हैं सब भेव । संशय विन आश्चर्य नहिं, नमूं सिद्ध स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतविस्मयाय नमः अर्हं ॥ ९२ ॥

सिद्ध सनातन कालतैं, जगमें हैं परसिद्ध । तथा जन्म जर नहिं धरैं, नमूं जोरि कर सिद्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मने नमः अर्घं ॥ ९३ ॥

भ्रम विन ज्ञान प्रकाशमें, भासै जीव अजीव । संशय विन निश्चल सुखी, वन्दूं सिद्ध सदीव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःसंशयाय नमः अर्घं ॥ ९४ ॥

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार । जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूं सिद्ध अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जराय नमः अर्घं ॥ ९५ ॥

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नहिं होय । मरण रहित वन्दूं सदा, देउ अमर पद सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमराय नमः अर्घं ॥ ९६ ॥

निजानन्दके भोगमें, कभी न आरत आय । यातें तुम अरतीत हो, वन्दूं सिद्ध सुहाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरत्यतीताय नमः अर्घं ॥ ९७ ॥

होत नहीं सोचन कभूं, ज्ञान धरैं परतच्छ । नमूं सिद्ध परमात्मा, पाऊं ज्ञान अलच्छ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचिन्ताय नमः अर्घं ॥ ९८ ॥

जानत हैं सब ज्ञेयको, पर ज्ञेयनतें भिन्न । यातें निर्विषयी कहे, लेश न भोगैं अन्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषयाय नमः अर्घं ॥ ९९ ॥

अहंकार आदिक त्रिषठ, तुम पद निवसैं नाहिं । सिद्ध भये परमात्मा, मैं वन्दूं हूं ताहिं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिषष्ठिजिते नमः अर्घं ॥ १०० ॥

जेते गुण परजाय हैं, द्रव्य अनन्त सुकाल । तिनको तुम जानो प्रभू, वन्दूं मैं नमि भाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञाय नमः अर्घं ॥ १०१ ॥

ज्ञान आरसी तुम विषैं, झलकें ज्ञेय अनन्त । सिद्ध भये तिनको नमें, तीनों काल सु सन्त ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविदे नमः अर्घं ॥ १०२ ॥

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान । नमूं सिद्ध परमातमा, तीनों योग प्रधान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वदर्शिने नमः अर्घं ॥ १०३ ॥

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मझार । सर्वालोकी सिद्ध हैं, नमूं त्रियोग सम्हार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वावलोकाय नमः अर्घं ॥ १०४ ॥

तुम सम प्राक्रम और सब, जगवासी में नाहिं । निज बल शिवपद साधियो, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तविक्रमाय नमः अर्घं ॥ १०५ ॥

निजसुख भोगत नहिं चिगे, वीर्य अनन्त धराय । तुम अनन्त बलके धनी, वन्दूं मन वच काय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घं ॥ १०६ ॥

सुखाभास जग जीवके, पर निमित्तसे होय । निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावै सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसुखाय नमः अर्घं ॥ १०७ ॥

निज सुखमें सुख होत है, पर सुखमें सुख नाहिं । सो तुम निज सुखके धनी, मैं वंदूं हूं ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसौख्याय नमः अर्घं ॥ १०८ ॥

तीन लोक तिहुं कालके, गुण पर्यय कछु नाहिं । जाको तुम जानों नहीं, ज्ञान भानुके माहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञानाय नमः अर्घं ॥ १०९ ॥

द्रव्य तथा गुण पर्यको, देखै एकीवार । विश्वदर्श तुम नाम है, वंदों भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदर्शिने नमः अर्घं ॥ ११० ॥

संपूरण अवलोकतें, दर्शन धरो अपार । नमूं सिद्ध कर जोरिके, करो जगत से पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घं ॥ १११ ॥

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय । विन इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ~~जिनपनेकाय~~ नमः अर्घं ॥ ११२ ॥ [illegible]

विश्व मांहि तुम अर्थ सव, देखो एकीबार । विश्वचक्षु तुम नाम है, वन्दूं भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वचक्षुषे नमः अर्घं ॥ ११३ ॥

तीन लोकके अर्थ जे, वाकी रहे न शेष । युगपत तुम सव जानियो, गुण पर्याय विशेष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशेषविदे नमः अर्घं ॥ ११४ ॥

पराधीन अरु विघ्न विन, है सांचा आनन्द । सो शिवगतिमें तुम लियो, मैं वन्दूं सुखकन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आनन्दाय नमः अर्घं ॥ ११५ ॥

सत् प्रशंसता नित वहै, या सद्भाव सरूप । सो तुममें आनन्द है, वन्दत हूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदानन्दाय नमः अर्घं ॥ ११६ ॥

उदय महा सत् रूप है, जामें असत न होय । अन्तराय अरु विघन विन, सत्य उदै है सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदोदयाय नमः अर्घं ॥ ११७ ॥

नित्यानंद महासुखी, हीनादिक नहिं होय । नहिं गत्यन्तर रूप हो, शिवगतिमें है सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्यानन्दाय नमः अर्घं ॥ ११८ ॥

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रनमें नाहिं । सोइ श्रेष्ठ सुख भोगते, वन्दूं हूं मैं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परानन्दाय नमः अर्घं ॥ ११९ ॥

पूरण सुखकी हद धरैं, सो महान आनन्द । सो तुम पायो शिव-धनी, वन्दूं पद अरविंद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानदाय नमः अर्घं ॥ १२० ॥

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय । चारों गतिमें सो नहीं, तुम पायो सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमानदाय नमः अर्घं ॥ १२१ ॥

जामें विघन न लेश है, उदय तेज विज्ञान। जाको हम जानत नहीं, सुलभ रूप विधि दान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोदयाय नमः अर्घं ॥ १२२ ॥

परम शक्ति परमातमा, पर सहाय विन आप। स्वयं वीर्य आनंदके, नमत कटैं सब पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमौजसे नमः अर्घं ॥ १२३ ॥

महातेजके पुन्ज हो, अविनाशी अविकार। झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पणवत आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमतेजसे नमः अर्घं ॥ १२४ ॥

परम धाम उतकृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय। जासों फिर आवत नहीं, जन्म मरण नशि जाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमधाम्ने नमः अर्घं ॥ १२५ ॥

जगत गुरू परमातमा, जगत सूर्य शिव नाम। परम हंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घं ॥ १२६ ॥

दिव्यज्योति स्वज्ञानमें, तीन लोक प्रतिभास। शंका विन विश्वास कर, निजपर कियो प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षज्ञात्रे नमः अर्घं ॥ १२७ ॥

निज विज्ञान सु ज्योतिमें, संशय आदिक नाहिं। सो तुम सहज प्रकाशियो, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्योतिषे नमः अर्घं ॥ १२८॥

शुद्ध बुद्ध परमातमा, परम ब्रह्म कहलाय। सर्व लोक उतकृष्ट पद, पायो वन्दूं ताय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ १२९ ॥

चार ज्ञान नहिं जासमें, शुद्ध सुरूप अनूप। परको नाहिं प्रवेश है, एकाकी शिव रूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमरहसे नमः अर्घं ॥ १३० ॥

निज गुण द्रव्य पर्यायमें, भिन्न भिन्न सब रूप। एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यगात्मने नमः अर्घं ॥ १३१ ॥

शुद्ध बुद्ध परमातमा, निज विज्ञान प्रकाश। स्वै आतमके बोधतें, कियो कर्मको नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रबोधात्मने नमः अर्घं ॥ १३२ ॥

कर्म मैलसे लिप्त हैं, जगत आतम दिन रैन। कर्म नाश महपद लियो, वन्दूं हूं सुख दैन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महात्मने नमः अर्घं ॥ १३३ ॥

आतमको गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय । ज्ञानानन्दैश्वर्यता, उदय भयो है सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्ममहोदयाय नमः अर्घं ॥ १३४ ॥

दर्श ज्ञान सुख वीर्यको, पाय परम पद होय । सो परमातम तुम भये, नमूं जोर कर दोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घं ॥ १३५ ॥

मोहकर्मके नाशतें, शांत भये सुख देन । क्षोभ रहित पर शांत हो, शांत नमूं सुख लेन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांतात्मने नमः अर्घं ॥ १३६ ॥

पूरण पद तुम पाइयो, यातें परे न कोय । तुम समान नहिं और है, मैं वन्दू पद दोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परात्मने नमः अर्घं ॥ १३७ ॥

पुद्गल कृत तन छारकै, निज आतममें वास । स्वै प्रदेश गृहके विषैं, नित ही करत विलास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मनिकेतनाय नमः अर्घं ॥ १३८ ॥

औरनको नित देत हैं, शिवसुख भोगें आप । परम इष्ट तुम हो सदा, निज सम करत मिलाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ १३९ ॥

मोक्ष लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत । महा इष्ट कहलात हो, वन्दूं शिवसुख हेत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महितात्मने नमः अर्घं ॥ १४० ॥

रागादिक मल नाशिकै, श्रेष्ठ भये जगमांहि । सो उपासना करणको, तुम सम कोई नाहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठात्मने नमः अर्घं ॥ १४१ ॥

परमें ममत विनाशकै, स्वै आतम थिर धार । पर विकल्प संकल्प विन, तिष्ठो सुख आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मनिष्ठिताय नमः अर्घं ॥ १४२ ॥

स्वै आतममें मग्न हैं, स्वै आतम लवलीन । परमें भ्रमण करैं नहीं, सन्त चरण शिर दीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मनिष्ठाय नमः अर्घं ॥ १४३ ॥

तीन लोकके नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज । तुम सम और महानता, नहिं धारत है दूज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घं ॥ १४४ ॥

तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम । सर्व सिद्धता ईश हो, पूरहु सबके काम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरूढात्मने नमः अर्घं ॥ १४५ ॥

स्वै आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय। निश्चल परम सुभावमें, भये प्रकृतिको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दृढात्मने नमः अर्घं ॥ १४६ ॥

क्षयोपशम नानाविधै, क्षायक एक प्रकार। सो तुममें नहिं औरमें, वन्दूं योग संभार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं एकविद्याय नमः अर्घं ॥ १४७ ॥

कर्म पटलके नाशतें, निर्मल ज्ञान उदार। तुम महान विद्या धरो, वन्दूं भाव संभार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाविद्याय नमः अर्घं ॥ १४८ ॥

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय। पायो सहज महान पद, वन्दूं तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महापदेश्वराय नमः अर्घं ॥ १४९ ॥

पंच परम पद पाइयो, ब्रह्म नाम है एक। पूजूं मन वच काय करि, नाशैं विघन अनेक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ १५० ॥

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाय। हीनाधिक बिन विलसते, वन्दूं ध्यान लगाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सार्वाय नमः अर्घं ॥ १५१ ॥

पूरण पंडित ईश हो, बुद्ध धाम अभिराम। वन्दूं वृच काय करि, पाऊं मोक्ष सु धाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविद्येश्वराय नमः अर्घं ॥ १५२ ॥

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल। शुद्ध परिणाम धरैं सदा, वंदूं नित नमि भाल ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घं ॥ १५३ ॥

ज्ञान दर्श, आवर्ण विन, दिपो अनंताऽनंत। सकल ज्ञेय प्रतिभास है, नमैं तुम्हैं नित संत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतधिये नमः अर्घं ॥ १५४ ॥

इक इक गुण प्रतिछेदको, पार न पायो जाय। सो गुण रास अनंत है, वन्दूं तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतात्मने नमः अर्घं ॥ १५५ ॥

अहमिंद्रनकी शक्ति जो, करो अनंती रास। सो तुम शक्ति अनंत गुण, करैं अनंत प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतशक्तये नमः अर्घं ॥ १५६ ॥

क्षायक दर्शन जोतिमें, निरावरण परकास। सो अनंत दृग तुम धरौ, नमें चरण नित दास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतदृशे नमः अर्घं ॥ १५७ ॥

जाकी शक्ति अपार है, हेत अहेत प्रसिद्ध । गणधरादि जानत नहीं, मैं वंदूं नित सिद्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतधीशक्तये नमः अर्घ ॥ १५८ ॥

चेतन शक्ति अनंत है, निरावरण जो होय । सो तुम पायी सहज ही, कर्म पुञ्जको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तचिदे नमः अर्घं ॥ १५६ ॥

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख परमें नाहिं । निजानन्द रस लीन है, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतमुदे नमः अर्घं ॥ १६० ॥

जाके कर्म लिपै न फिर, दिपै सदा निरधार । सदा प्रकाश जु सहित है, वन्दूं योग सम्हार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ १६१ ॥

निजानन्दके माहि हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध । सो तुम पायो सहज ही, नमत मिले नवनिद्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १६२ ॥

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कषाय । साक्षात सबको लखो, वन्दूं तिनके पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नमः अर्घं ॥ १६३ ॥

सकल गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश । तुम समान नहिं दूसरो, वन्दत पूरें आश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समग्रर्द्धये नमः अर्घं ॥ १६४ ॥

सर्व कर्मको छीन करि, जरी जेवरी सार । सो तुम धूलि उडाइयो, वन्दूं भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नमः अर्घं ॥ १६५ ॥

चहुं गति जगत कहात है, ताको करि विध्वंश । अमर अचल शिवपुर वसे, भर्म न राखो अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वसिने नमः अर्घं ॥ १६६ ॥

इन्द्री मन व्यापारमें, जाको नहिं अधिकार । सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अलक्षात्मने नमः अर्घं ॥ १६७ ॥

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार । सो शिवपुरमें वसतहैं, वन्दूं भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलस्थानाय नमः अर्घं ॥ १६८ ॥

परकृत निमत विगाड है, सोई दुविधा जान । सो तुम में नहिं लेश है, निरावाध परमाण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घं ॥ १६६ ॥

जैसे हो तुम आदिमें, सोई हो तुम अन्त । एक भांति निवसो सदा, वंदत हैं नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतर्क्यात्मने नमः अर्घं ॥ १७० ॥

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि माने आन । मिथ्यामत नहिं चलत है, तुम आगे परमाण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रिणे नमः अर्घं ॥ १७१ ॥

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस माहिं । श्रेष्ठ ज्ञान तुम पुञ्ज हो, पर निमित्त कछु नाहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चिदांबराय नमः अर्घं ॥ १७२ ॥

निज अभावसों मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग । भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतात्मने नमः अर्घं ॥ १७३ ॥

सहज सुभाव प्रकाशियो, पर निमित्त कछु सौं नांहि । सो तुम पायो सुलभतें, स्व सुभावके मांहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहजज्योतिषे नमः अर्घं ॥ १७४ ॥

विश्व नाम तिहुं लोकमें, तिसमें करत प्रकाश । विश्वज्योति कहलात हैं, नमत मोह तम नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्योतिषे नमः अर्घं ॥ १७५ ॥

फरश आदि मन इन्द्रियां, द्वार ज्ञान कछु नाहिं । यातें अतिइन्द्रिय कहो, जिन सिद्धांतके मांहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतींद्रियाय नमः अर्घं ॥ १७६ ॥

एक मान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निरअंश । केवल तुमको धर्म है, नमें तुम्हें नित संत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलाय नमः अर्घं ॥ १७७ ॥

लौकिक जन या लोक में, तुम सारू गुण नाहिं । केवल तुमहीमें वसै, मैं वन्दू हूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलावलोकाय नमः अर्घं ॥ १७८ ॥

लोक अनंत कहो सही, तातें नन्तानन्त । है अलोक अवलोकियो, तुम्हैं नमें नित संत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकावलोकाय नमः अर्घं ॥ १७९ ॥

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक । भिन्न भिन्न सब जानियो, नमूं चरण दे धोक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विवृताय नमः अर्घं ॥ १८० ॥

विन सहाय निज शक्ति हो, प्रगटो आपो आप । स्वयं बुद्ध स्वै सिद्ध हो, नमत नसैं सब पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलावलोकाय नमः अर्घं ॥ १८१ ॥

सूक्षम सुभग सुभावतें, मन इन्द्री नहिं ज्ञात। वचन अगोचर गुण धरैं, नमूं चरन दिन रात ॥

ॐ ह्रीं अव्यक्ताय नमः अर्घं ॥ १८२ ॥

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव संसार। तिन सबको तुम ही शरण, देहो सुक्ख अपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशरणाय नमः अर्घं ॥ १८३ ॥

चितवनमें आवे नहीं, पार न पावे कोय। महा विभवके हो धनी, नमूं जोर कर दोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचिन्त्यविभवाय नमः अर्घं ॥ १८४ ॥

छहों कायके वासको, विश्व कहै सब लोक। तिनके थंभनहार हो, राज काजके जोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभृते नमः अर्घं ॥ १८५ ॥

घट घटमें राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर। विश्व रूप जीवात्म हो, तीन लोक सिर मौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वरूपात्मने नमः अर्घं ॥ १८६ ॥

घट घटमें नित व्याप्त हो, ज्यों घर दीपक जोति। विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वात्मने नमः अर्घं ॥ १८७ ॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजैं आन। यातें मुखिया हो सही, मैं पूजूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतोमुखाय नमः अर्घं ॥ १८८ ॥

ज्ञान द्वार सब जगतमें, व्यापि रहे भगवान। विश्वव्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूं नभमें शशि भान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वव्यापिने नमः अर्घं ॥ १८९ ॥

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात। ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं वन्दूं दिन रात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंज्योतिषे नमः अर्घं ॥ १९० ॥

चितवनमें आवे नहीं, धारें सुगुण अपार। मन वच काय नमूं सदा, मिटै सकल संसार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यात्मने नमः अर्घं ॥ १९१ ॥

नय प्रमाणको गमन नहिं, स्वयं ज्योति परकाश। अद्भुत गुण पर्यायमें, सुखद्रं करे विलास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमितप्रभावाय नमः अर्घं ॥ १९२ ॥

मती आदि क्रमवर्ति विन, केवल लक्ष्मीनाथ। महाबोध तुम नाम है, नमूं पांय धरि माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाबोधाय नमः अर्घं ॥ १९३ ॥

कर्मयोगतें जगतमें, जीव शक्तिको नाश। स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं, नमूं चरण सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महावीर्याय नमः अर्घं॥ १९४॥

छायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय। महा लाभ यातें कहैं, वन्दूं तिनके पांय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महालाभाय नमः अर्घं॥ १९५॥

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति। ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घं॥ १९६॥

ज्ञानानन्द स्वै लक्ष्मी, भोगे बाधा हीन। पंचम गतिमें वास है, नमूं जोग पद लीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगसुगतये नमः अर्घं॥ १९७॥

पर निमित्त जामें नहीं, स्वै आनन्द अपार। सोई परमानन्द है, भोगे निज आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घं॥ १९८॥

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय। अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं वन्दूं हूं सोय।

ॐ ह्रीं अर्हं अतुलवीर्याय नमः अर्घं॥ १९९॥

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीडा करत विलास। महादेव कहलात हैं, वंदत रिपु गण नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञार्हाय नमः अर्हं॥ २००॥

महाभाग शिवगति लहो, तासम भाग न और। सोई भगवत है प्रभू, नमूं पदाम्बुज ठौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नमः अर्घं॥ २०१॥

तीन लोकके पूज्य हैं, तीन लोक के स्वामि। कर्म-शत्रुको छय कियो, ताते अरहत नाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हते नमः अर्घं॥ २०२॥

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्थ युत भाव। महाअर्थ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महार्थाय नमः अर्घं॥ २०३॥

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिंद्रनके ध्येय। द्रव्य भाव करि पूज्य हो, पूजत पूज्य अभेय

ॐ ह्रीं अर्हं मघवार्चिताय नमः अर्घं॥ २०४॥

छहों द्रव्य गुणपर्यको, जानत भेद अनन्त। महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घं॥ २०५॥

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोकका भेद। दर्पण तल सम भास है, नमत कर्ममल छेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञाय नमः अर्घं ॥ २०६ ॥

सकल ज्ञेयके ज्ञानतें, हो सबके सिरमोर। पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थक्रतपुरुषाय नमः अर्घं ॥ २०७ ॥

स्वयंबुद्ध शिवमग चरत, स्वयं बुद्ध अविरुद्ध। शिवमग चारी नित जजैं, पावैं आतम शुद्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्याय नमः अर्घं ॥ २०८ ॥

सब देवनके देव हो, तीन लोकके पूज्य। मिथ्या तिमिर निवारते, सूरज और न दूज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भट्टारकाय नमः अर्घं ॥ २०९ ॥

सुरनर मुनिके पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय। तीन लोकके स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रभवते नमः अर्घं ॥ २१० ॥

महापूज्य महामान्य हो, स्वयंबुद्ध अविकार। मन वच तनसे ध्यावते, सुरनर भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्रभवते नमः अर्घं ॥ २११ ॥

महाज्ञान केवल कहो, सो दीखे तुम मांहि। महा नामसों पूजिये, संसारी दुख नाहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महते नमः अर्घं ॥ २१२ ॥

पूज्यपना नहीं औरमें, इक तुमहीमें जान। महा अर्ह तुम गुण प्रभू, पूजत हो कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महार्हाय नमः अर्घं ॥ २१३ ॥

अचल शिवालयके विषैं, अमित काल रहै राज। चिरजीवी कहलात हो, वन्दू शिवसुख काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रायुषे नमः अर्घं ॥ २१४ ॥

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनंतानन्त। दीर्घायु तुम नाम है, वन्दत नितप्रति संत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नमः अर्घं ॥ २१५ ॥

सकल तत्वके अर्थ कहि, निराबाध निरशंस। धर्ममार्ग प्रकटाइयो, नमत मिटै दुख अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घं ॥ २१६ ॥

मुनिजन नितप्रति ध्यावते, पावें निज कल्याण। सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आराध्याय नमः अर्घं ॥ २१७ ॥

शिवसुख जाको ध्यावते, पावे सन्त मुनीन्द्र । परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमाराध्याय नमः अर्घं ॥ २१८ ॥

पंचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण । देवन करि पूजित भये, पायो शिवसुख थान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचकल्याणपूजिताय नमः अर्घं ॥ २१९ ॥

देखो लोकालोकको, हस्त रेखकी सार । इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखैं उदय अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दर्शविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घं ॥ २२० ॥

छायक समकितको धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र । तुम पूजन परभावतें, अन्तिम होंय जिनेंद्र ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुरार्चिताय नमः अर्घं ॥ २२१ ॥

निर्विकल्प शुभ चिह्न है, वीतराग सो होय । सो तुम पायो सहज ही, नमूं जोर कर दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुखदात्मने नमः अर्घं ॥ २२२ ॥

स्वर्ग आदि सुख थानके, हो परकाशनहार । दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिवोजसे नमः अर्घं ॥ २२३ ॥

गर्भ कल्याणकके विषैं, तुम माता सुखकार । षट् कुमारिका सेवतीं, पावें भवदधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शचीसेवितमातृकाय नमः अर्घं ॥ २२४ ॥

गर्भ अति उत्तम तुम धर्म है, भवदुख जन्म निवार । रत्नराशि दिवलोकतें, वर्षै मूसलधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं रत्नगर्भाय नमः अर्घं ॥ २२५ ॥

सुर शोधनतें गर्भमें, दर्पण सम आकार । यों पवित्र तुम गर्भ है, पावै शिवसुख सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूतगर्भाय नमः अर्घं ॥ २२६ ॥

जाके गर्भागमनतें, पहले उत्सव ठान । दिव्य नारि मंगल सहित, पूजत श्री भगवान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भोत्सवसहिताय नमः अर्घं ॥ २२७ ॥

नित नित आनंद उरधरैं, सुर सुरीय हरषात । मंगल साज समाज सब, उपजावै दिन रात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नित्योपचारोपचिताय नमः अर्घं ॥ २२८ ॥

केवलज्ञान सुलच्छमी, धरत महा विस्तार । चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजत हित धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मभुवे नमः अर्घं ॥ २२९ ॥

तिंहुं विध विधि मल धोयकर, उज्जल निर्मल होय। शिव आलयमें बसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलाय नमः अर्घं ॥ २३० ॥

असंख्यात परदेशमें, अन्य प्रदेश न होय। स्वयं स्वभाव स्वजाति हैं, मैं प्रणामामी सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंस्वभावाय नमः अर्घं ॥ २३१ ॥

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कुछ भक्ति प्रमान। तुम ही सबके मूल हो, नमत अमंगल हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वीयजन्मने नमः अर्घं ॥ २३२ ॥

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरुकी ठौर। महा पुण्यकी राश हो, सिद्ध नमूं कर जोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यागाय नमः अर्घं ॥ २३३ ॥

ज्यूं सूरज मध्याह्नमें, दिपै अनंत प्रभाव। त्यों तुम ज्ञानकला दिपै, मिथ्या तिमिर अभाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भास्वते नमः अर्घं ॥ २३४ ॥

चहुंविधि देवनमें सदा, तुम सम देव न आन। निजानंदमें केलिकर पूजत हूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्भुतदेवाय नमः अर्घं ॥ २३५ ॥

विश्वज्ञात युगपत धरैं, ज्यूं दर्पण आकार। स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूं भक्ति उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञातृसम्भृते नमः अर्घं ॥ २३६ ॥

सत स्वरूप सत ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान। पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदेवाय नमः अर्घं ॥ २३७ ॥

सृष्टीको सुख करत हो, हरत दुक्ख भववास। मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म जरा मृत नास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टिनिर्वृताय नमः अर्घं ॥ २३८ ॥

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार। मोक्ष लहे सो नेमतें, मैं पूजूं निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्राक्षदृगुत्सवाय नमः अर्घं ॥ २३९ ॥

संपूरण निज शक्तिके, है परताप अनन्त। सो तुम विस्तीरण करो, नमें चरण नित संत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशक्तये नमः अर्घं ॥ २४० ॥

ऐरावतपर रूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड़। पूजत हैं सो भक्तिसों, मेटि भवार्णव हाँड़ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवैरावतासीनाय नमः अर्घं ॥ २४१ ॥

सुरनर चारण मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश। परिपूरण हर्षित हैं, पूरैं मनकी आश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हर्षाकुलामरखगचारणर्षिमतोत्सवाय नमः अर्घं ॥ २४२ ॥

रक्षक हो षट कायके, शरणागत प्रतिपाल। सर्व व्यापि निज ज्ञानतैं, पूजत होय निहाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घं ॥ २४३ ॥

महा उच्च आसन प्रभू, हैं सुमेर विख्यात। जन्म अभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानपीठयिताद्रिराजे नमः अर्घं ॥ २४४ ॥

जाकरि तरिए तीर्थसो, माने मुनिगण मान्य। तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है, असत्यार्थ हैं अन्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थेशंमन्यदुग्धाब्धये नमः अर्घं ॥ २४५ ॥

लोक स्नान गिलानता, मेटे मैल शरीर। आतम प्रक्षालित कियो, तुमही ज्ञान सु नीर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानाम्बुस्नातवासवाय नमः अर्घं ॥ २४६ ॥

तारण तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात। ज्यूं सुगन्ध चम्पाकली, गन्धमई कहलात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गन्धपवित्रितत्रिलोकाय नमः अर्घं ॥ २४७ ॥

सूक्षम तथा स्थूलमें, ज्ञान करै परवेश। जाको तुम जानों नहीं, खाली रहो न देश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वज्रसूचये नमः अर्घं ॥ २४८ ॥

औरन प्रति आनंद करि, निर्मल शुचि आचार। आप पवित्र भये प्रभू, वन्दूं हूं युग पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घं ॥ २४९ ॥

कर्मों करि कृतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय। करपर कर राजत प्रभू, वन्दूं हूं युग पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थकृतहस्ताय नमः अर्घं ॥ २५० ॥

दर्शन इन्द्र अघात है, इष्ट मान उर माहिं। कर्म नाशि शिवपुर बसे, मैं वन्दूं हूं ताहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नमः अर्घं ॥ २५१ ॥

मघवा जाके नृत्य करि, ताके पितृ महान। सो मैं उनको जजत हूं, होय कर्मकी हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रनृत्यन्तपितृकाय नमः अर्घं ॥ २५२ ॥

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन दासनके दास। निश्चय मनमें नमन कर, नित वन्दत पद जास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शचीविस्मापिताम्बाय नमः अर्घं ॥ २५३ ॥

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय। जन्म सुफल मानैं सदा, हमपर होउ सहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानन्दनृत्याय नमः अर्घं ॥ २५४ ॥
धन सुवर्णतें लोकमें, पूरण इच्छा होय। चक्रवर्ति पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं रैदपूर्णमनोरथाय नमः अर्घं ॥ २५५ ॥
तुम आज्ञामें हैं सदा, आप मनोरथ मान। इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीन्द्रकृतासेवाय नमः अर्घं ॥ २५६ ॥
सब देवनमें श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज। सब देवनके इष्ट हो, वन्दत सुलभ सु काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घं ॥ २५७ ॥
तीन लोकमें उच्च हो, तीन लोक परशंस। सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वंस ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवोद्यमाय नमः अर्घं ॥ २५८ ॥
जगत पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट। हित उपदेशक परम गुरु, मुनिजन माने इष्ट ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्यशिवनाथाय नमः अर्घं ॥ २५९ ॥
मति, श्रुत, अवधि अवर्णको, नाश कियो स्वयमेव। केवलज्ञान स्वतै लियो, आप स्वयंभू देव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घं ॥ २६० ॥
समोशरण अद्भुत महा, और लहै नहिं कोय। धनपति रचो उछाहसों, मैं पूजूं हूं सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कुबेररचितस्थानाय नमः अर्घं ॥ २६१ ॥
जाको अन्त न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ। सोई शिवपुरके धनी, नमूं भाव धरि माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तश्रीजुषे नमः अर्घं ॥ २६२ ॥
गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास। परम ध्येय तुम नाम है, पूरैं मनकी आश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घं ॥ २६३ ॥
परम ब्रह्मका लाभ हो, तुम पद पायो सार। त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय व्यवहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घं ॥ २६४ ॥
सर्व तत्त्वके आदिमें, ब्रह्म तत्व परधान। तिसके ज्ञाता हो प्रभू, मैं वन्दूं धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मतत्वाय नमः अर्घं ॥ २६५ ॥

द्रव्य भाव द्वैविधि कही, यज्ञ यजनकी रीति । सो सब तुमही हेत है, रचत नशैं सब भीति ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञपतये नमः अर्घं ॥ २६६ ॥

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक । मैं पूजूं हूं भाव सों, मेटो मनको शोक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवनाथाय नमः अर्घं ॥ २६७ ॥

कृत्य भए निज भावमें, सिद्ध भये सब काज । पायो निज पुरुषार्थको, वन्दूं सिद्ध समाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृत्याय नमः अर्घं ॥ २६८ ॥

यज्ञविधानके अंग हो, मुख नामी परधान । तुम बिन यज्ञ न हों कभी, पूजत होय कल्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञांगाय नमः अर्घं ॥ २६९ ॥

मरण रोगके हरणसे, अमर भये हो आप । शरणागत को अमर कर अमृत हो निष्पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घं ॥ २७० ॥

पूजन विधि अस्नान हो, पूजत शिवसुख होय । सुरनर नित पूजन करैं, मिथ्या मतिको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाय नमः अर्घं ॥ २७१ ॥

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक । वस्तु सुभाव यही कहो, वन्दूं सिद्ध प्रत्येक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वस्तूत्पादकाय नमः अर्घं ॥ २७२ ॥

इन्द्र सदा तुम थुति करैं, मनमें भक्ति उपाय । सर्व शास्त्रमें तुम थुती, गणधरादि करि गाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतीश्वराय नमः अर्घं ॥ २७३ ॥

मगन रहो निज तत्वमें, द्रव्य भाव विधि नाश । जो है सो है विविध विध, नमूं अचल अविनाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घं ॥ २७४ ॥

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य । धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महामहपतये नमः अर्घं ॥ २७५ ॥

महाभाग सरधानतें, तुम अनुभव करि जीव । सो पुनि सेवत पाप तज, निजसुख लहै सदीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महायज्ञाय नमः अर्घं ॥ २७६ ॥

यज्ञ विधी उपदेशमें, तुम अग्रेश्वर जान । यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अग्रयाजकाय नमः अर्घं ॥ २७७ ॥

तीन लोकके पूज्य हो, भक्ति भाव उर धार। धर्म अर्थ अरु मोक्षके, दाता तुम हो सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्याय नमः अर्घं ॥ २७८ ॥

दया मोह पर पापतें, दूर भये स्वैतंत्र। ब्रह्मज्ञानमें लय सदा, जपूं नाम तुम मंत्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयायागाय नमः अर्घं ॥ २७९ ॥

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य। महासाधु सुख हेतुतें, साधे हैं निज साध्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यार्हाय नमः अर्घं ॥ २८० ॥

निज पुरुषारथ सधनको, तुमको अर्चत जक्त। मनवांछित दातार हो, शिवसुख पावैं भक्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगदर्चिताय नमः अर्घं ॥ २८१ ॥

ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हैं, देव चार परकार। तुम देवनके देव हो, नमूं भक्ति उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेवाय नमः अर्घं ॥ २८२ ॥

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहिं देव। ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रार्चिताय नमः अर्घं ॥ २८३ ॥

तुम देवन के देव हो, सदा पूजने योग्य। जे पूजत हैं भावसों, भोगें शिवसुख भोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवदेवाय नमः अर्घं ॥ २८४ ॥

तीन लोक सिरताज हो, तुमसे बडा न कोय। सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मनकी खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्गुरवे नमः अर्घं ॥ २८५ ॥

जो हो सो हो तुम सही, नहीं समझमें आय। सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणीको पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं संहूतदेवसघार्च्याय नमः अर्घं ॥ २८६ ॥

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार। स्वसुगंध वासित रहो, कमल गधकी सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनन्दाय नमः अर्घं ॥ २८७ ॥

सब कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार। विजय ध्वजा फहरात है, वंदूं भक्ति विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयध्वजाय नमः अर्घं ॥ २८८ ॥

दशोंदिशा परकाश है, तिनकी ज्योति अमंद। भविजन कुमुद विकाश हो, वन्दूं पूरण चन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डलिने नमः अर्घं ॥ २८९ ॥

चमरन करि भक्ती करैं, देव चार परकार। यह विभूति तुम ही विषैं, वन्दूं पाप निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुःषष्ठिचामराय नमः अर्घं ॥ २९० ॥

देव दुन्दुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार। तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवदुंदुभये नमः अर्घं ॥ २९१ ॥

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इक सार। अच्तरार्थ नहिं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वाक्स्पष्टाय नमः अर्घं ॥ २९२ ॥

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान। तथा स्व आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लब्धासनाय नमः अर्घं ॥ २९३ ॥

तीन लोकके नाथ हो, तीन छत्र विख्यात। भव्य जीव तुम छांहमें, सदा स्व आनंद पात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं छत्रत्रयाय नमः अर्घं ॥ २९४ ॥

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मझार। तुम सुगन्ध दश दिश रमी, भविजन भ्रमर निहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पवृष्टये नमः अर्घं ॥ २९५ ॥

देव रचित आशोक है, वृक्ष महा रमणीक। समोशरण शोभा प्रभू, शोक निवारण ठीक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्याशोकाय नमः अर्घं ॥ २९६ ॥

मानस्तम्भ निहारके, कुमतिन मान गलाय। समोशरण प्रभुता कहै, नमूं भक्ति उर लाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मानस्तम्भाय नमः अर्घं ॥ २९७ ॥

सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुण गान। भक्ति भाव उरमें जगे, वन्दत श्री भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं संगीताहर्याय नमः अर्घं ॥ २९८ ॥

मंगल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार। तुम समीप राजत सदा, नमूं अमंगल टार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टमंगलाय नमः अर्घं ॥ २९९ ॥

भविजन तरिये तीर्थ सो, तुम हो श्री भगवान। कोई न भंगे आन जिन, तीर्थंचक्र सो जान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थचक्रवर्तिने नमः अर्घं ॥ ३०० ॥

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमवगाढ। संशय आदिक मेटिके, नासो सकल विगाढ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शनाय नमः अर्घं ॥ ३०१ ॥

कर्त्ता हो शिव काजके, ब्रह्मा जगकी रीति । वर्णाश्रमको थापके, प्रगटायी शुभ नीत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घं ॥ ३०२ ॥

सत्य धर्म प्रतिपालके, पोषत हो संसार । यति श्रावक दो धर्मके, भये नाथ सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थभर्त्रे नमः अर्घं ॥ ३०३ ॥

धर्मतीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हो तुम स्वामि । धर्मनाथ तुम जानके, नितप्रति करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थेशाय नमः अर्घं ॥ ३०४ ॥

लोक तीर्थमें गिनत हैं, धर्मतीर्थ परधान । सो तुम राजत हो सदा, मैं वन्दूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थंकराय नमः अर्घं ॥ ३०५ ॥

तुम विन धर्म न हो कभी, ढूंढो सकल जिहान । दश लक्षण स्वैधर्मके, तीरथ हो परधान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थयुताय नमः अर्घं ॥ ३०६ ॥

धर्म तीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज । दोनों विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्षके काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थंकराय नमः अर्घं ॥ ३०७ ॥

तुमसे धर्म चले सदा, तुम्ही धर्मके मूल । सुरनर मुनि पूजैं सदा, छिदहिं कर्मके शूल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थप्रवर्त्तकाय नमः अर्घं ॥ ३०८ ॥

धर्मनाथ जगमें प्रगट, तारण तरण जिहाज । तीन लोक अधिपति कहो, वन्दूं सुखके काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थवेधसे नमः अर्घं ॥ ३०९ ॥

श्रावक या मुनि धर्मके, हो दिखलावनहार । अन्य लिंग नाहिं धर्मके, बुधजन लखो विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थविधायकाय नमः अर्घं ॥ ३१० ॥

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्हीं मार्ग सुखदान । अन्य कुभेषिनमें नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यतीर्थंकराय नमः अर्घं ॥ ३११ ॥

सेवन योग्य सु जक्तमें, तुमी तीर्थ हो सार । सुरनर मुनि सेवन करैं, मैं वन्दूं दुख टार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसेव्याय नमः अर्घं ॥ ३१२ ॥

भवि समुद्र भवसे तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय । हो तारण तिहुं लोकमें, सेवत हूं तुम पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतारकाय नमः अर्घं ॥ ३१३ ॥

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम वैन । धर्म सुमार्ग प्रवर्तको, तुम राजत हो ऐन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घं ॥ ३१४ ॥

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय । सो उपदेशक आप हो, तिस संकेत कराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यशासनाय नमः अर्घं ॥ ३१५ ॥

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश । नेम रूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासनाय नमः अर्घं ॥ ३१६ ॥

कहै कथंचित धर्मको, स्यात् वचन सुखकार । सो प्रमाणतैं साधियो, नय निश्चय व्यवहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादिने नमः अर्घं॥ ३१७॥

निर अच्चर वाणी खिरै, दिव्य मेघकी गर्ज्ज । अच्चरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज्ज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यध्वनये नमः अर्घ ॥ ३१८ ॥

नय प्रमाण नहिं हतत है, तुम परकाशे अर्थ । शिवसुखके साधन विषैं, नहीं गिनत है व्यर्थ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहतार्थाय नमः अर्घ ॥ ३१९ ॥

करै पवित्र सु आतमा, अशुभ कर्म मल खोय । पहुंचावै ऊंची सुगति, तुम दिखलायो सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यवाचे नमः अर्घं ॥ ३२० ॥

तत्वारथ तुम भाषियो, सम्यक विषैं प्रधान । मिथ्या जहर निवारणं अमृत पान समान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घं ॥ ३२१ ॥

देव अतिशय सों खिरत ही, अच्चरार्थ मय होय । दिव्य ध्वनि निश्चय करै, संशय तमको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धमागधीयोक्तये नमः अर्घं ॥ ३२२ ॥

सब जीवनको इष्ट है, मोच्च निजानन्द वास । सो तुमने दिखलाइयो, संशय मोह विनाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टवाचे नमः अर्घं॥ ३२३ ॥

नय प्रमाण ही कहत है, द्रव्य पर्याय सु भेद । अनेकांत साधै सही, वस्तु भेद निरखेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनेकांतदर्शिने नमः अर्घं ॥ ३२४॥

दुर्नय कहत एकांतको, ताको अन्त कराय । सम्यक्मति प्रगटाइयो, पूजूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नयांतकाय नमः अर्घं ॥ ३२५ ॥

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार । स्याद्वाद सम न्यायतें, भविजन तारे पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकांतध्वांतभिदे नमः अर्घं ॥ ३२६ ॥

जो है सो निज भावमें, रहै सदा निरधार । मोक्ष साध्यमें सार है, सम्यक् विषै अपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्ववाचे नमः अर्घं ॥ ३२७ ॥

निज गुण निज पर्ययमें, सदा रहो निरभेद । शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हो, पूजूं हूं निरखेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पृथक्कृते नमः अर्घं ॥ ३२८ ॥

स्यात्कार उद्योतकर, वस्तु धर्म निरशस । तासु ध्वजा निर्विघ्नको, भाषो विधि विध्वंस ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कारध्वजावाचे नमः अर्घं ॥ ३२९ ॥

परम्परा इह धर्मको, उपदेशो श्रुत द्वार । भवि भवसागर तीर लहि, पायो शिव सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हद्वाचे नमः अर्घं ॥ ३३० ॥

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुषकृत, है अनादि परमान । सो तुम भाष्यौ है सही, यह पर्याय सुजान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेयवाचे नमः अर्घं ॥ ३३१ ॥

नहीं चलाचल होठ हों, जिस वाणी के होत । सो मैं वन्दूं हों किया, मोक्षमार्ग उद्योत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलोष्ठवाचे नमः अर्घं ॥ ३३२ ॥

तुम सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप । तुमको वन्दूं भावसों, पाऊं शिव-सुख कूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घं ॥ ३३३ ॥

हीनाधिक वा और विधि, नहिं विरुद्धता जान । एक रूप सामान्य है, सब ही सुखकी खान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्धाय नमः अर्घं ॥ ३३४ ॥

नय विवक्षते सधत है, सप्त भंग निरबाध । सो तुम भाषो नमत हूं, वस्तु रूपको साध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभंगिवाचे नमः अर्घं ॥ ३३५ ॥

अक्षर विन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त । भविजन निज सरधानतें, पावैं जगतें मुक्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवर्णगिरे नमः अर्घं ॥ ३३६ ॥

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश । तुम मुखतें खिरकै करै, भर्म तिमिरको नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घं ॥ ३३७ ॥

कहने योग्य समर्थ सब, अर्थ करै परकाश। तुम वाणी मुखतें खिरे, करै भरम तम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्तगिरे नमः अर्घं॥ २३८॥

तुम वाणी नहिं व्यर्थ है, भङ्ग कभी नहिं होय। लगातार मुखतें खिरे, संशय तमको खोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमोघवाचे नमः अर्घं॥ ३३९॥

वस्तु अनंत पर्याय है, वचन अगोचर जान। तुम दिखलाये सहज ही, हरे कुमति मतिमान॥
ॐ ह्रीं अर्हं अवाच्यानतवाचे नमः अर्घं॥ ३४०॥

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार। तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारो भवपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अवाचे नमः अर्घं॥ ३४१॥

तुम सम वचन न कहि सकै, असतमती छदमस्थ। धर्म मार्ग प्रगटाइयो, मेटी कुमति समस्त॥
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैतगिरे नमः अर्घं॥ ३४२॥

सत्यप्रिय तुम बैन हैं, हितमित भविजन हेत। सो मुनिजन तुम ध्यावते, पावें शिवपुर खेत॥
ॐ ह्रीं अर्हं सूनृतगिरे नमः अर्घं॥ ३४३॥

नहीं सांच नहिं झूठ है, अनुभव वचन कहात। सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घं॥ ३४४॥

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताकौ नाम। सत्यारथ उद्योत कर, सुगिरा ताकौ नाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरे नमः अर्घं॥ ३४५॥

योजन एक चहूं दिशा, हो वाणी विस्तार। श्रवण सुनत भविजन लहैं, आनंद हिये अपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं योजनव्यापिगिरे नमः अर्घं॥ ३४६॥

निर्मल क्षीर समान है, गौर श्वेत तुम वेन। पाप मलिनता रहित है, सत्य प्रकाशक एन॥
ॐ ह्रीं अर्हं क्षीरगौरगिरे नमः अर्घं॥ ३४७॥

तीर्थ तत्त्व जो नहिं तजैं, तारण भविजन वान। यातें तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतत्वगिरे नमः अर्घं॥ ३४८॥

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्म तत्वको जान। सो तुम सत्यारथ कहो, मुनिजन उत्तम मान॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नमः अर्घं॥ ३४९॥

भव्यनिके श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन । मैं वन्दू हूं भावसों, धर्म बतायो एन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यैकश्रवणगिरे नमः अर्घं ॥ ३५० ॥

संशय विभ्रम मोहको, नाश करे निर्मूल । सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सद्गवे नमः अर्घं ॥ ३५१ ॥

तुम वाणीमें प्रगट है, सब सामान्य विशेष । नानाविध सुन तर्कमें, संशय रहै न शेष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगवे नमः अर्घं ॥ ३५२ ॥

परम कहै उतकृष्टको, अर्थ होय गम्भीर । सो तुम वाणीमें खिरे, वन्दत भवदधि तीर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नमः अर्घं ॥ ३५३ ॥

मोह क्षोभ परशांत हो, तुम वाणी उर धार । भविजनकों सन्तुष्ट कर, भव आताप निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांतगवे नमः अर्घं ॥ ३५४ ॥

बारह सभासु प्रश्न कर, समाधान करतार । मिथ्यामति विध्वंस करि, वन्दूं मनमें धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निकगिरे नमः अर्घं ॥ ३५५ ॥

महापुरुष महादेव हो, सुरनर पूजन योग । वाणी सुन मिथ्यात तज, पावैं शिवसुख भोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्यश्रुतये नमः अर्घं ॥ ३५६ ॥

शिवमग उपदेशक सुश्रुत, मनमें अर्थ विचार । साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुतये नमः अर्घं ॥ ३५७ ॥

तुम समान तिहुं लोकमें, नहीं अर्थ परकाश । भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामतिको नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाश्रुतये नमः अर्घं ॥ ३५८ ॥

जो निज आतम- कल्याणमें, वरतै सो उपदेश । धर्म नाम तिस जानियो, वन्दूं चरण हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मश्रुतये नमः अर्घं ॥ ३५९ ॥

जिन शासनके अधिपती, शिव मारग बतलाय । वा भविजन सन्तुष्ट करि, वन्दूं तिनके पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपत्ये नमः अर्घं ॥ ३६० ॥

धारण हो उपदेशके, केवलज्ञान संयुक्त । शिवमारग दिखलात हो, तुमको वन्दन युक्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुत्युद्धर्त्रे नमः अर्घं ॥ ३६१ ॥

जैसो हो तैसो कहो, परम्पराय सु रीत। सत्यारथ उपदेशतें, धर्म मार्गकी रीत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुवश्रुतये नमः अर्घं ॥ ३६२ ॥
मोक्षमार्गको देखियो, औरनको दिखलाय। तुम सम हितकारक नहीं, वन्दूं हूं तिन पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नमः अर्घं ॥ ३६३ ॥
स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावकको धर्म। तुमको वन्दत सुख महा, लहै ब्रह्मपद पर्म ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नमः अर्घं ॥ ३६४ ॥
तत्व अतत्वसु जानियो, तुम सब ही परतत्त्व। निज आतम सन्तुष्ट हो, देखो लक्ष अलक्ष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वमार्गदृशे नमः अर्घं ॥ ३६५ ॥
सार तत्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश। स्वपर प्रकाशक हो महा, वन्दे तिनको दास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सारस्वतपथाय नमः अर्घं ॥ ३६६ ॥
आप तीर्थ औरन प्रती, सर्व तीर्थ करतार। उत्तम शिवपुर पहुंचना, यही विशेषण सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्तमतीर्थकृते नमः अर्घं ॥ ३६७ ॥
दृष्टा लोकालोकके, रेखा हस्त समान। युगपत सबको देखिये, कियो भर्म तम हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दृष्ट्रे नमः अर्घं ॥ ३६८ ॥
जिनवाणीके रसिक हो, तासों रति दिन रैन। भोगोपभोग करो सदा, वन्दत ह्वै सुखचैन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मीश्वराय नमः अर्घं ॥ ३६९ ॥
जो संसार-समुद्रसे, पार करत सो धर्म। तुम उपदेश्या धर्मकूं, नमत मिटै भव भर्म ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मशासकाय नमः अर्घं ॥ ३७० ॥
धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार। मैं वन्दूं तिनको सदा, करो भवार्णव पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेशकाय नमः अर्घं ॥ ३७१ ॥
सब विद्याके ईश हो, पूरन ज्ञान सु जान। तिनको वन्दूं भावसे, पाऊं ज्ञान महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वागीश्वराय नमः अर्घं ॥ ३७२ ॥
सुमति नार भरतार हो, कुमति कुसौत विडार। मैं पूजूं हूं भावसों, पाऊं सुमती सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रयीनाथाय नमः अर्घं ॥ ३७३ ॥

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान। मैं नित प्रति पाइन परूं, देहु परम कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभङ्गीशाय नमः अर्घं ॥ ३७४ ॥

गिरा कहै जिन वचनको, तिसका अन्त सु धर्म। मोक्ष करै भविजननको, नाशै मिथ्या भर्म ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गिरांपतये नमः अर्घं ॥ ३७५ ॥

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान। शरणागतको सिद्ध है, नमूं सिद्ध धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाज्ञाय नमः अर्घं ॥ ३७६ ॥

नय प्रमाण सों सिद्ध हैं, तुम वाणी रवि सार। मिथ्या तिमिर निवारकैं, करै भव्य जन पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाङ्मयाय नमः अर्घं ॥ ३७७ ॥

निज पुरुषारथ साधके, सिद्ध भये सुखकार। मन वच तन करि मैं नमूं, करो जगतसे पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नमः अर्घं ॥ ३७८ ॥

सिद्ध करै निज अर्थको, तुम शासन हितकार। भविजन माने सरदहै, करै कर्म रज छार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धशासनाय नमः अर्घं ॥ ३७९ ॥

तीन लोकमें सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त। अनेकान्त परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वांत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रसिद्धसिद्धान्ताय नमः अर्घं ॥ ३८० ॥

ॐकार यह मंत्र है, तीन लोक परसिद्ध। तुम साधक कहलात हो, जपत मिलै नवनिद्ध ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंत्राय नमः अर्घं ॥ ३८१ ॥

सिद्ध यज्ञको कहत हैं, संशय विभ्रम नाश। मोक्षमार्गमें ले धरै, निजानन्द परकास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाचे नमः अर्घं ॥ ३८२ ॥

मोहरूप मलसों दुरी, वाणी कही पवित्र। भव्य स्वच्छता धारिके, लहै मोक्षपद तत्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिवाचे नमः अर्घं ॥ ३८३ ॥

कर्ण विषयमें होत ही, करै आत्म कल्याण। तुम वाणी शुचिता धरै, नमें सन्त धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घं ॥ ३८४ ॥

वचन अगोचर पद धरो, कहते पंडित लोग। तुम महिमा तुमही विषैं, सदा वन्दने योग्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुक्तोक्ताय नमः अर्घं ॥ ३८५ ॥

सुरनर मानें आन सब, तुम आज्ञा शिर धार। मानों तंत्र विधान करि, बांधे एक लगार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तंत्रकृते नमः अर्घं ॥ ३८६ ॥

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपारं। सो तुमसे परगट भयो, न्यायशास्त्र रुचि धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं न्यायशास्त्रकृते नमः अर्घं ॥ ३८७ ॥

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त। युगपत जानो श्रेष्ठ युत, धरो महा सुखवन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घं ॥ ३८८ ॥

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय। शिवलक्ष्मीके नाथ हो, पूजूं तिनके पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानंदाय नमः अर्घं ॥ ३८९ ॥

तुम सम कविवर जगतमें, और न दूजो कोय। गणधरसे श्रुतकार भी, अर्थ लहैं नहिं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कवींद्राय नमः अर्घं ॥ ३९० ॥

हित कर्ता षट् कायके, महा इष्ट तुम बैन। तुमको वन्दूं भावसों, मोक्ष महासुख दैन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेष्टाय नमः अर्घं ॥ ३९१ ॥

द्वादशांग श्रुतकों रचैं, गणधरसे कविराज। तुम आज्ञा शिरधारके, नमूं निजातम काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कवीश्वराय नमः अर्घं ॥ ३९२ ॥

देव महाध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव। केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजूं युत चाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुन्दुभीश्वराय नमः अर्घं ॥ ३९३ ॥

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूरि शिर नाय। त्रिभुवन नाथ कहात हो, हम पूजत नित पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवननाथाय नमः अर्घं ॥ ३९४ ॥

गणी मुनीश फणीशपति, कल्पेन्द्रनके नाथ। अहमिन्द्रनके नाथ हो, तुमहि नमूं धरि माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानाथाय नमः अर्घं ॥ ३९५ ॥

भिन्न भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त। तुम सम दृष्टि न औरकी, तुम्हें नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परदृष्टे नमः अर्घं ॥ ३९६ ॥

सब जगके भरतार हो, मुनिगणमें परधान। तुमको पूजें भावसों, होत सदा कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पतये नमः अर्घं ॥ ३९७ ॥

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार। वरते इष पुरुषार्थमें, पूजत हूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वामिने नमः अर्घं ॥ ३९८ ॥

धर्म कार्य कर्ता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ। मालिक हो तिहुं लोकके, पूजनीक सत्यार्थ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घं ॥ ३९९ ॥ ४००

तीन लोकके नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल। चार संघके अधिपती, पूजूं हूं नमि भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विधसंघाधिपतये नमः अर्घं ॥ ४०१ ॥

तुम सम और विभव नहिं, धरो चतुष्ट अनन्त। क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावै सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयविभवधारकाय नमः अर्घं ॥ ४०१ ॥

जामें विघन न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत। पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजत शुभ करतूत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभवे नमः अर्घं ॥ ४०२ ॥

तुम सम शक्ति न और की, शिवलक्ष्मी को पाय। भोगैं सुख स्वाधीन कर, वन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयशक्तिधारकाय नमः अर्घं ॥ ४०३ ॥

तुमसे अधिक न और में पुरुषारथ कहूं पाइ। हो अधीश सब जगतके, वन्दूं तिनके पांइ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घं ॥ ४०४ ॥

अग्रेश्वर चउ संघके, शिवनायक शिव मोर। पूजत हूं नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशाय नमः अर्घं ॥ ४०५ ॥

सहज सुभाव प्रयत्न विन, तीन लोक आधीश। शुद्ध सुभाव विराजते, वन्दूं पद धर शीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाधीशाय नमः अर्घं ॥ ४०६ ॥

छायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान। तुमसैं शिवमारग चलै, मैं वन्दूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशित्रे नमः अर्घं ॥ ४०७ ॥

स्वयं बुद्ध शिवनाथ हो, धर्म तीर्थ करतार। तुम सम सुमति न को धरै, मैं वन्दूं निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकर्त्रे नमः अर्घं ॥ ४०८ ॥

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूरण ब्रह्म प्रकाश। पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णपदप्राप्ताय नमः अर्घं ॥ ४०९ ॥

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय । तीन लोक अत्यन्त सुख, पायो वन्दूं ताय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपतये नमः अर्घं ॥ ४१० ॥
तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान । मैं पूजों हों भावसों, सबसे बड़े महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ईश्वराय नमः अर्घं ॥ ४११ ॥
सूरज सम परकाश कर, मिथ्या तम परिहार । भविजन कमल प्रबोधको, पायो निज हितकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इनाय नमः अर्घं ॥ ४१२ ॥
क्रीडा करि शिवमार्गमें, पाय परम पद आप । आज्ञा भंग न हो कभी, वंदत नाशे पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्राय नमः अर्घं ॥ ४१३ ॥
उत्तम हो तिहुं लोकमें, सबके हो शिरताज । शरणागत प्रतिपाल हो, पूंजूं आतम काज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ४१४ ॥
अधिक भूतिके हो धनी, सर्व सुखी निरधार । सुरनर तुम पदको लहैं, पूजत हूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधिभुवे नमः अर्घं ॥ ४१५ ॥
तीन लोक कल्याण कर, धर्म मार्ग चित लाय । सब देवनके देव हो, महादेव सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वराय नमः अर्घं ॥ ४१६ ॥
महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय । महाजीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेशाय नमः अर्घं ॥ ४१७ ॥
परम कहो उतकृष्टको, धर्म तीर्थ वरताय । परमेश्वर यातें भये, वन्दूं तिनके पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घं ॥ ४१८ ॥
तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ । महा विभव ऐश्वर्यको, धरो नमूं निज माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महेशित्रे नमः अर्घं ॥ ४१९ ॥
चार प्रकार नमें सदा, देव तुम्हैं शिर नाय । सब देवनमें श्रेष्ठ हो, नमूं युगल तुम पांय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेवाय नमः अर्घं ॥ ४२० ॥
तुम समान नहि देव अरु, तुम देवनके देव । यो महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूं एव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महादेवाय नमः अर्घं ॥ ४२१ ॥

शिवमारग तुममें सही, देव पूजने योग । सहचारी हैं तुम सुगुण, और कुदेव अयोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाय नमः अर्घं ॥ ४२२ ॥

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार । त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूं निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घं ॥ ४२३ ॥

विश्वपती तुमको नमें, निज कल्याण विचार । सर्व विश्वके तुम पती, मैं पूजूं उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नमः अर्घं ॥ ४२४ ॥

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द । षट्कायक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घं ॥ ४२५ ॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजत आन । यातें तुम विश्वेश हो, सांच नमूं धर ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेनाय नमः अर्घं ॥ ४२६ ॥

विश्व बन्ध दृढ तोड़के, विश्व शिखर ठहराय । चरण कमल तल जगत है, यूं सब पूजत पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश्वराय नमः अर्घं ॥ ४२७ ॥

शिव मारगकी रीति तुम, वरतायो शुभ योग । तिहूं काल तिहुं लोकमें, और कुनीति अयोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिराजे नमः अर्घं ॥ ४२८ ॥

लोक तिमिर-हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज । लोकशिखर राजत प्रभू, मैं वन्दूं हित काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेश्वराय नमः अर्घं ॥ ४२९ ॥

तीन लोक प्रतिपाल हो, तीन लोक हितकार । तीन लोक तारण तरण, तीन लोक सरदार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपतये नमः अर्घं ॥ ४३० ॥

लोक पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार । मैं पूजों नित भावसों, करो भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकनाथाय नमः अर्घं ॥ ४३१ ॥

पूजनीक जगमें सही, तुम्हें कहैं सब लोग । धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातें पूजन योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगपूज्याय नमः अर्घं ॥ ४३२ ॥

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक । तिनमें तुम उत्कृष्ट हो, तुम्हें देत नित धोक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घं ॥ ४३३ ॥

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोकमें और । स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेशाय नमः अर्घं ॥ ४३४ ॥

जगतनाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पाय । मैं पूजूं नित भाव युत, तारण तरण सहाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नाथाय नमः अर्घं ॥ ४३५ ॥

महाभूत इस जगतमें, धारत हो निरभंग । सब विभूति जग जीतिकै, पायो सुख सरवंग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रभवे नमः अर्घं ॥ ४३६ ॥

मुनि मन करन पवित्र हो, सब विभावको नाश । तुमको अंजुलि जोरकर, नमूं होत अघ नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पवित्राय नमः अर्घं ॥ ४३७ ॥

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्मज्ञान परवीन । बंध रहित शिव-सुख सहित, नमें संत आधीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पराक्रमाय नमः अर्घं ॥ ४३८ ॥

जामें जन्म मरण नहिं, लोकोत्तर कियो वास । अचल सुथिर राजैं सदा, निजानन्द परकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परतराय नमः अर्घं ॥ ४३९ ॥

मोहादिक रिपु जीतिके, विजयवन्त कहलाय । जैत्र नाम परसिद्ध है, वन्दूं तिनके पांय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जेत्रे नमः अर्घं ॥ ४४० ॥

रक्षक हो षट् कायके, कर्म शत्रु क्षयकार । विजय लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णवे नमः अर्घं ॥ ४४१ ॥

करता हो विधि कर्मके, हरता पाप विशेष । पुन्य पाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखो लेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घं ॥ ४४२ ॥

स्वानन्द ज्ञान विनाश बिन, अचल सुथिर रहै राज । अविनाशी अविकार हो, वन्दूं निज हित काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनीश्वराय नमः अर्घं ॥ ४४३ ॥

इन्द्रादिक पूजत चरन, महा भक्ति उर धार । तुम महान ऐश्वर्यको, धारत हो अधिकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभविष्णवे नमः अर्घं ॥ ४४४ ॥

गुण समूह गुरुता धरैं, महा भाग सुख रूप । तीन लोक कल्याण कर, पूजूं हूं शिव भूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भ्राजिष्णवे नमः अर्घं ॥ ४४५ ॥

महा विभवको धरत हैं, हितकारण मितकार। धर्मनाथ परमेश हो, पूजत हूं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभूष्णवे नमः अर्घं ॥ ४४६ ॥

विन कारण असहाय हो, स्वयं प्रभा अविरुद्ध। तुमको वन्दूं भावसों, निज आतम कर शुद्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभाय नमः अर्घं ॥ ४४७ ॥

लोकवासको नाश कर, लोक सम्बन्ध निवार। अचल विराजै शिवपुरी, पूजत हूं उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकजिते नमः अर्घं ॥ ४४८ ॥

विश्व नाम संसार है, जन्म मरण सो होय। सोई व्याधि विनासियो, जजूं जोर कर दोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घं ॥ ४४९ ॥

विषय कषाय निवारके, जग सम्बन्ध विनाश। जनम मरण विनु ध्रुव लसै, नमूं ज्ञान परकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजेत्रे नमः अर्घं ॥ ४५० ॥

विश्व वास तुम जीतियो, विश्व नमावै शीश। पूजत हैं हम भक्तिसों, जयवन्तो जगदीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ~~लोकजिते~~ नमः अर्घं ॥ ४५१ ॥ विश्व विजेते

इन्द्रादिक जिनको नमें, ते तुम शीश नवाय। विश्वजीत तुम नाम है, शरणागत सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजित्वराय नमः अर्घं ॥ ४५२ ॥

तीन लोककी लक्ष्मी, तुम चरणांबुज ठौर। यातैं सब जग जीतिके, राजत हो शिरमौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जैत्राय नमः अर्घं ॥ ४५३ ॥

तीन लोक कल्याण कर, कर्मशत्रुको जीत। भव्यन प्रति आनंद कर, मेटत तिनकी भीति ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जिष्णवे नमः अर्घं ॥ ४५४ ॥

जग जीवनको अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर। धर्ममार्ग प्रगटाय कर, पहुंचायो शिव ठौर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नेत्रे नमः अर्घं ॥ ४५५ ॥

मोहादिक जिन जीतियो, सोई जगमें नाम। सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जयिने नमः अर्घं ॥ ४५६ ॥

जो तुम धर्म प्रगट करि, जिय आनंदित होय। अग्र भये कल्याण कर, तुम पद प्रणमूं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रण्ये नमः अर्घं ॥ ४५७ ॥

रक्षा करि षट कायकी, विषय कषाय न लेश। त्रास हरो जमराजको, जयवन्तो गुण शेष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयामूर्तये नमः अर्घं ॥ ४५८ ॥

सत्य असत्य लखना करै, सोई नेत्र कहाय। पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, सांचे नेत्र सुखाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यनेत्राय नमः अर्घं ॥ ४५९ ॥

सुरनर मुनि तुम ज्ञानतें, जानें निज कल्याण। ईश्वर हो सब जगतके, आनंद संपति खान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घं ॥ ४६० ॥

धर्म्माभास मनोक्तके, मूल नाश कर दीन। सत्य मार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म्मनायकाय नमः अर्घं ॥ ४६१ ॥

ऋद्धिनमें परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान। सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनि मान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धीशाय नमः अर्घं ॥ ४६२ ॥

जो प्राणी संसारमें, तिन सबके हितकार। आनंदसो सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतनाथाय नमः अर्घं ॥ ४६३ ॥

प्राणिनके भरतार हो, दुख टारन सुखकार। तुम आश्रय करि जीव सब, आनद लहैं अपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतभर्त्रे नमः अर्घं ॥ ४६४ ॥

सत्य धर्मके मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशंस। तुम ही आश्रय पायके, रहै न अवको अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पात्रे नमः अर्घं ॥ ४६५ ॥

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार। तुम सम बल नहिं और में, होउ सहाय अबार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतुलबलाय नमः अर्घं ॥ ४६६ ॥

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ वरताय। स्वै सुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषाय नमः अर्घं ॥ ४६७ ॥

हिंसाको वर्जित करैं, जे अपराध महान। परिग्रह अर आरंभके, त्यागी श्री भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रहत्यागिजिनाय नमः अर्घं ॥ ४६८ ॥

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायो स्वयं उपाय। सांचे हौ वश करणको, जगमें मंत्र कराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्रकृते नमः अर्घं ॥ ४६९ ॥

जितने कछु शुभ चिह्न हैं, दीप्त अशेष स्वरूप। शुभ लक्षण सोहत अती, सहजे तुम शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणाय नमः अर्घं ॥ ४७० ॥

लोक विषैं तुम मार्गको, मानत है बुधिवन्त। तर्क हेतु करुणा लिये, यातैं मानै सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाध्यक्षाय नमः अर्घं ॥ ४७१ ॥

काहूके वशमें नहीं, काहू नमत न शीश। कठिन रीति धारैं प्रभू, नमूं सदा जगदीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुराधर्षाय नमः अर्घं ॥ ४७२ ॥

दासनिको प्रतिपाल कर, शरणागत हितकार। भवि दुखियनको पोषकर, दियो अखै पद सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यबन्धवे नमः अर्घं ॥ ४७३ ॥

निराकरण करि कर्मको, सरल सिद्ध गति धार। शिव थल जाय सुवास लहि, धर्म द्रव्य सहकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तकाय नमः अर्घं ॥ ४७४ ॥

मुनि ध्यावैं पावैं सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान। पावैं निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमध्येयजिनाय नमः अर्घं ॥ ४७५ ॥

रक्षक हो जगके सदा, धर्म दान दातार। पोषक हो सब जीवके, वन्दूं भाव लगार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगतापहराय नमः अर्घं ॥ ४७६ ॥

मोह प्रचण्ड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान। शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूं हेत कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोहारिजयाय नमः अर्घं ॥ ४७७ ॥

तीन लोक शिर मौर तुम, सब पूजत हरषाय। परमेश्वर हो जगतके, वंदत हूं नित पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घं ॥ ४७८ ॥

लोकशिखरपर अचल नित, राजत हैं तिहुं काल। सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वासिने नमः अर्घं ॥ ४७९ ॥

विश्वभूति प्राणीनके, ईश्वर हैं भगवान। सबके शिरपर पग धरैं, सर्व आन तिन मान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घं ॥ ४८० ॥

मोक्षसंपदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य। कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोतम धन वर्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभवाय नमः अर्घं ॥ ४८१ ॥

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक। तुम तज चाहै औरको, ऐसो को बुध बंक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घं॥ ४८२ ॥

उत्तरोत्तर तिहुं लोकमें, दुर्लभ लब्धि कराय। तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भागसों पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगदुर्लभाय नमः अर्घं ॥ ४८३ ॥

बढ़वारी परिणामसे, पूर्ण अभ्युदय पाय। भई अनन्त विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदयाय नमः अर्घं॥ ४८४ ॥

तीन लोक मंगल करन, दुखहारण सुखकार। हमको मंगल द्यो महा, पूजों वारम्वार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगन्मङ्गलोदयाय नमः अर्घं॥ ४८५ ॥

आप धर्मके सामने, और धर्म लुप जांय। धर्म चक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तब पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घं ॥ ४८६ ॥

सत्य शक्त तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर। है प्रसिद्ध इस जगतमें, कर्म शत्रु शिरमोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजाताय नमः अर्घं॥ ४८७ ॥

मंगलमय मंगल करण, तीन लोक विख्यात। सुमरण ध्यान सुकरत ही, सकल पाप नशि जात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमंगलाय नमः अर्घं॥ ४८८ ॥

द्रव्य भाव दऊ वेद विन, स्वातम रति सुख मान। पर आलिंगन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवेदाय नमः अर्घं॥ ४८६ ॥

घात रहित स्वैपर दया, निजानन्द रसलीन। सुखसों अवगाहन करैं, सन्त चरण आधीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रनिघाताय नमः अर्घं॥ ४६० ॥

निजानन्द स्वैदेशमें, खंड खंड नहिं होय। पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूं भ्रम खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अछेद्याय नमः अर्घं ॥ ४६१ ॥

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात। कभू न जगमें जन्म फिर, सोई दृढ कहलात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्रढीयसे नमः अर्घं॥ ४६२ ॥

जन्म मरणके कष्टसे, सर्व लोक भयवन्त। ताको नाश अभय करण, तुम्हैं नमें जिय सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभयंकराय नमः अर्घं॥ ४६३ ॥

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद । महा भोग यातें भये, हैं स्वाधीन अवेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घं ॥ ४९४ ॥

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उतकृष्ट । परसों भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरौपम्याय नमः अर्घं ॥ ४९५ ॥

दश लक्षण शुभ धर्मके, राज सम्पदा भोग । नायक हो जिन धर्मके, पूज नमैं तिहुं योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घं ॥ ४९६ ॥

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, पर कृत भाव विडार । तिहूं वेद रति मान विन, संपूरण सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेदप्रवृत्ताय नमः अर्घं ॥ ४९७ ॥

यथायोग पद पाइयो, यथायोग्य संपूर्ण । नमूं त्रियोग संभारिके, करूं पाप मल चूर्ण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं संपूर्णयोगिने नमः अर्घं ॥ ४९८ ॥

सब इन्द्रिय मन रोककै, आरोहण तिस भाव । श्रेणि उच्च चढावमें, तत्पर अन्त सु पाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामारोहणतत्पराय नमः अर्घं ॥ ४९९ ॥

एकाश्रय निज धर्ममें, परसों भिन्न सदीव । सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामायिकाय नमः अर्घं ॥ ५०० ॥

राग द्वेष विन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव । मन विकल्प नहिं भावमें, पूजत हों धरि चाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामायिकिने नमः अर्घं ॥ ५०१ ॥

निजानन्द स्वै लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय । अतुल वीर्य परभावतें, परमादी नहिं होय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमादाय नमः अर्घं ॥ ५०२ ॥

है अनादि संतान करि, कभी भयो नहिं आदि । नित्य शिवालय पूर्णता, बसै जगत अघ वादि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृताय नमः अर्घं ॥ ५०३ ॥

पर पदार्थ नहिं इष्ट हैं, स्वैपदमें लवलीन । विघ्न हरण मंगल करण, तुम पद मस्तक दीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमभावाय नमः अर्घं ॥ ५०४ ॥

नित्य शौच संतोप मय, पर पदार्थसों रोक । निश्चय सम्यक् भाव मय, है प्रधान दूं धोक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानाय नमः अर्घ ॥ ५०५ ॥

ज्ञान ज्योति स्वै धरत हो, निश्चल परम सु ठाम । लोकालोक प्रकाश कर, मैं वन्दूं सुख धाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वभासपरभासनाय नमः अर्घं ॥ ५०६ ॥

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारित भूप । शुध उपयोग प्रभावतें, कर्म खिपावन रूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायामचरणाय नमः अर्घं ॥ ५०७ ॥

विषय स्वादसो हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय । निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावै सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रत्याहाराय नमः अर्घं ॥ ५०८ ॥

इन्द्रीविषय न वश रहै, स्वै आतम लवलाय । सो जितेन्द्र स्वाधीन हैं, वन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रियाय नमः अर्घं ॥ ५०९ ॥

ध्यान विषैं सो धारणा, निज आतम थिर धार । ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धारणाधीश्वराय नमः अर्घं ॥ ५१० ॥

रागादिक मल नाशिके, ध्यान सु धर्म लहाय । अचल रूप राजैं सदा, वन्दू मन वच काय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घं ॥ ५११ ॥

निजानन्द में मगन हैं, पर पद राग निवार । समदृष्टी राजत सदा, हमें करो भव पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराजे नमः अर्घं ॥ ५१२ ॥

वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरशंस । समरस भाव परम सुखी, नमत मिटै दुख अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरितसमरसीभावाय नमः अर्घं ॥ ५१३ ॥

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर । वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घं ॥ ५१४ ॥

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ । ध्यावै पावै परम पद, नमूं जोर जुग हाथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रन्थनाथाय नमः अर्घं ॥ ५१५ ॥

योग साधि योगी भये, तिनको इन्द्र महान । ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगींद्राय नमः अर्घं ॥ ५१६ ॥

शिव मारग सिद्धांतके, पार भये मुनि ईश । तारण तरण जिहाज हो, तुम्हैं नमूं नित शीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नमः अर्घं ॥ ५१७ ॥

निज स्वरूप को साधिकर, साधु भये जग माहिं । निजपर हितकर गुण धर, ...

ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नमः अर्घं ॥ ५१८ ॥

रागादिक रिपु जीतिके, भये यती शुभ नाम । धर्म धुरंधर परम गुरु, जुगपद करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतये नमः अर्घं ॥ ५१९ ॥

पर संपतिसों विमुख हो, स्वै पद रुचि करि नेम । मुनि मन रंजन पद महा, तुम धारत हो एम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नमः अर्घं ॥ ५२० ॥

महाश्रेष्ठ मुनिराज हो, स्वै पद पायो सार । महा परम निरग्रन्थ हो, पूजत हूं मन धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षये नम अर्घं ॥ ५२१ ॥

साधु भार दुर गमन है, ताहि उठावन हार । शिव-मन्दिर पहुँचात हो, महाबली सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुधौरेयाय नमः अर्घं ॥ ५२२ ॥

इन्द्री मन-जित जे जती, तिनके हो तुम नाथ । परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतिनाथाय नमः अर्घं ॥ ५२३ ॥

चार संघ मुनिराजके, ईश्वर हो परधान । पर हितकर सामर्थ्य हो, निज सम करि भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वराय नमः अर्घं ॥ ५२४ ॥

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिर धार । समकित ज्ञान सु लक्ष्मी, पावत हैं निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामुनये नमः अर्घं ॥ ५२५ ॥

महामुनी सर्वस्व हो, धर्म मूर्ति सरवंग । तिनको वन्दूं भाव युत, पाऊं मैं धर्मांग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामौनिने नमः अर्घं ॥ ५२६ ॥

इष्टानिष्ट विभाव विन, समदृष्टी स्वैध्यान । मगन रहैं निज पद विषैं, ध्यान रूप भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाध्यानिने नमः अर्घं ॥ ५२७ ॥

स्वै सुभाव नहिं त्याग है, नहीं ग्रहण पर माहिं । पाप कलाप न आपमें, परम शुद्ध नमुं ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाव्रतिने नमः अर्घं ॥ ५२८ ॥

क्रोध प्रकृति विनाशके, धरै क्षमा निज भाव । समरस स्वादसु लहत हैं, वन्दूं शुद्ध स्वभाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घं ॥ ५२९ ॥

मोह रूप सन्ताप विन, शीतल महा स्वभाव । पूरण सुख आकुल नहीं, वन्दूं मन धर चाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशीतलाय नमः अर्घं ॥ ५३० ॥

मन इन्द्रियके क्षोभ विन, महा शांति सुखरूप । स्वैपद रमण स्वभाव नित, मैं वन्दूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घं ॥ ५३१ ॥

मन इन्द्रियको दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र । स्वाभाविक स्वैशक्ति कर, वन्दूं भये जितेन्द्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महादमाय नमः अर्घं ॥ ५३२ ॥

पर पदार्थको क्लेश तजि, व्यापे निज पद माहिं । स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूं नित ताहि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेपाय नमः अर्घं ॥ ५३३ ॥

संशयादि दृष्टी नहीं, सम्यक ज्ञान मझार । सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रांताय नमः अर्घं ॥ ५३४ ॥

शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमहीमें पाय । निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूं युग पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांताय नमः अर्घं ॥ ५३५ ॥

मुनि श्रावक द्वै धर्मके, तुम अधिपति शिवनाथ । भविजनको आनंद करि, तुम्हैं नवाऊं माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घं ॥ ५३६ ॥

दया नीति वरताइयो, सुखी किये जगजीव । कल्पित राग ग्रसत नहिं, जानत मार्ग सदीव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयाध्वजाय नमः अर्घं ॥ ५३७ ॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर बाह्य अदेह । ज्ञान जोति-घन नमत हूं, मन वच तन धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मयोनये नमः अर्घं ॥ ५३८ ॥

स्वयं बुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश । स्वै परभाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घं ॥ ५३९ ॥

रागादिक मल नाशियो, महापवित्र सुखाय । शुद्ध स्वभाव धरै करै, सुरनर थुति न अघाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घं ॥ ५४० ॥

वीतराग श्रद्धानता, संपूरण वैराग । द्वेष-रहित शुभ गुण सहित, रहूं सदा पग लाग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घं ॥ ५४१ ॥

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान । निर्मल भाव थकी जजूं, होत पापकी हान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमदभावाय नमः अर्घं ॥ ५४२ ॥
अतुल वीर्य जा ज्ञानमें, सूर्य समान प्रकाश । मोक्षनाथ निज धर्म जुत, स्वै ऐश्वर्य विलास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमैश्वर्याय नमः अर्घं ॥ ५४३ ॥
मत्सर क्रोध जु ईर्षा, परम द्वेष परभाव । सो तुम नाशो सहज ही, निंदित दुखित विभाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घं ॥ ५४४ ॥
धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज । तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण तरण जिहाज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मवृषाय नमः अर्घं ॥ ५४५ ॥
क्रोध कर्म जडसे नसो, भयो क्षोभ सब दूर । महा शांति सुखरूप हो, पूजत अघ सब चूर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभ्याय नमः अर्घं ॥ ५४६ ॥
इष्टमिष्ट वादर भरी, विद्युत विध कर खण्ड । जिष्णु महा कल्याण कर, शिवमग भाग प्रचण्ड ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाविधिखण्डाय नमः अर्घं ॥ ५४७ ॥
अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार । जन्मकल्याणक इन्द्र कर, क्षीर नीर कर धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमृतोद्भवाय नमः अर्घं ॥ ५४८ ॥
इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार । मूर्तीक शुभ मंत्र हो, देव जजैं हित धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्रमूर्तये नमः अर्घं ॥ ५४९ ॥
सौम्य दिशा प्रगटी घनी, जाति विरोधी जीव । वैर छांड समभाव धर, सेवत चरण सदीव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वैरसौम्यभावाय नमः अर्घं ॥ ५५० ॥
पराधीन इन्द्री विना, राग विरोध निवार । हो स्वाधीन न कर्णपर, स्वयं सिद्ध सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वतंत्राय नमः अर्घं ॥ ५५१ ॥
ब्रह्मरूप नहिं बाह्य तन, संभव ज्ञान स्वरूप । स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घं ॥ ५५२ ॥
आनंदधार सु मगन है, सब विकल्प दुख टार । पर आश्रित नहिं भाव है, पूजूं आनंद धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नमः अर्घं ॥ ५५३ ॥

परिपूरण गुण सीम हैं, सर्व शक्ति भण्डार। तुमसे सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गुणांबुधये नमः अर्घं ॥ ५५४ ॥

ग्रहण त्यागको भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद। व्याधिकार है वस्तुमें, तुम्हें नमूं निरखेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपापनिरोधकाय नमः अर्घं ॥ ५५५ ॥

सूक्षम रूप अलक्ष है, गणधर आदि अगम्य। आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अरम्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाअगम्यसूक्ष्मरूपाय नमः अर्घं ॥ ५५६ ॥

अन्तरगुप्त स्व आत्मरस, ताको पान करात। पर प्रवेश नहिं रंच है, केवल मग्न सु जात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घं ॥ ५५७ ॥

स्वैकारक स्वै कर्णकर, स्वैपद स्वै आधार। सिद्ध कियो स्वै रस लियो, पूजत हूं हित धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नमः अर्घं ॥ ५५८ ॥

नित्य उदै विन अस्त हो, पूरण दुति घन आप। ग्रहै न राहू जास शशि, सो हो हर सन्ताप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरुपप्लवाय नमः अर्घं ॥ ५५९ ॥

लियो अपूरव लाभको, अचल भये सुखधाम। पूज रचैं जे भावसों, पूर्ण होइ सब काम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोदर्काय नमः अर्घं ॥ ५६० ॥

है प्रशस तिहुं लोकमें, तुम पुरुषार्थ उपाय। पायो धर्म सु भामको, पूजों तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोपायाय नमः अर्घं ॥ ५६१ ॥

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरीश। तुमको पूजत भक्तिकरि, चरण धरैं निज शीश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगदेकपितामहाय नमः अर्घं ॥ ५६२ ॥

तुमहीसों भवि सुख लहैं, तुम विन दुख ही पाय। नमरूप पहिहै तुम्हैं, महानाम हम गाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाकारुणिकाय नमः अर्घं ॥ ५६३ ॥

महा सुगुणकी रास हो, राजत हो गुण रूप। लौकिक गुण औगुण सही, सब ही द्वेष सरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धगुणाय नमः अर्घं ॥ ५६४ ॥

जन्म मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार। परम सुखी तुमको नमूं, पाऊं भवदधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्लेशनिवारणाय नमः अर्घं ॥ ५६५ ॥

रागादिक नहिं भाव है, द्रव्य देह नहिं धार । दोउ मलिनता छांडके, स्वच्छ भये निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाशुचये नमः अर्घं ॥ ५६६ ॥
आधि व्याधि नहिं रोग है, नित प्रसन्न निज भाव । आकुलता विन शांति सुख, धारत सहज सु भाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अरुजे नमः अर्घं ॥ ५६७ ॥
यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन । अविनाशी अविकार हैं, नमैं सन्त चित दीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदायोगाय नमः अर्घं ॥ ५६८ ॥
स्वामृत रसको पान करि, भोगत हैं निज स्वाद । पर निमित्त चाहैं नहीं, करैं न तिनको याद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाभोगाय नमः अर्घं ॥ ५६९ ॥
निर उपाधि निज धर्ममें, सदा रहैं सुखकार । रत्नत्रयकी मूरती, अनागार आगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाधृतये नमः अर्घं ॥ ५७० ॥
रागद्वेष नहिं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव । ज्ञाता दृष्टा जगतके, परसों नहीं लगाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमौदासित्रे नमः अर्घं ॥ ५७१ ॥
आदि अन्त विन वहत है, परम धाम निरधार । अन्तर परतन एक छिन, निज सुख परमाधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शास्वताय नमः अर्घं ॥ ५७२ ॥
मूल देह आकृति रहै, हो नहिं अन्य प्रकार । सत्यासन इम नाम है, पूजूं भक्ति लगार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यासनाय नमः अर्घं ॥ ५७३ ॥
परम शांति सुखमय सदा, चोभ रहित तिस स्वामि । तीन लोक प्रति शांति कर, तुम पद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शान्तिनायकाय नमः अर्घं ॥ ५७४ ॥
काल अनंतानंत करि, रुल्यो जीव जग माहिं । आत्मज्ञान नहिं पाइयो, तुम पायौ है ताहि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वविद्याय नमः अर्घं ॥ ५७५ ॥
यथाख्यात चारित्रको, जानो मानो भेद । आत्मज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं योगज्ञाय नमः अर्घं ॥ ५७६ ॥
धर्मरूप सर्वस्व हो, राजत शुद्ध स्वभाव । धर्ममूर्ति तुमको नमूं, पाऊं मोक्ष उपाव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममूर्तये नमः अर्घं ॥ ५७७ ॥

स्वै आतम परदेश में, अन्य मिलाप न होय। आकृति है निज धर्मकी, निज विभावको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेहाय नमः अर्घं ॥ ५७८ ॥

स्वामी हो निज आतमके, अन्य सहाय न पाय। स्वयं सिद्ध परमातमा, हमपर होउ सहाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मेशाय नमः अर्घं ॥ ५७९ ॥

निज पुरुपारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार। करना था सो करि चुके, तिष्ठें सुख आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृतये नमः अर्घं ॥ ५८० ॥

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहिं पाय। लोकोत्तम बहु मान्य हो, वन्दूं हूं युग पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणात्मकाय नमः अर्घं ॥ ५८१ ॥

तुम गुण परम प्रकाश कर, तीन लोक विख्यात। सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणगुणप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ ५८२ ॥

समय मात्र नहिं आदि हैं, वहैं अनादि अनन्त। तुम प्रवाह इस जगतमें, तुम्हे नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेषाय नमः अर्घं ॥ ५८३ ॥

योग द्वार विन करम रज, चढै न निज परदेश। ज्यों विन छिद्र न जल ग्रहै, नवका शुद्ध हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घं ॥ ५८४ ॥

परम ब्रह्मपद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश। तीन लोकके जीव सब, पूजें चरण निवास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाब्रह्मपतये नमः अर्घं ॥ ५८५ ॥

द्रव्य पर्यायिक दोऊ, साधत वस्तु स्वरूप। गुण अनन्त अवरोध कर, कहत सरूप अनूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुनयतत्त्वज्ञाय नमः अर्घं ॥ ५८६ ॥

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हन सूर। शरण गही तुम चरण की, करो ज्ञान दुति पूरि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरये नमः अर्घं ॥ ५८७ ॥

तुम सम और न जगत में, सत्यारथ तत्वज्ञ। सम्यग्ज्ञान प्रभावतें, हो अदोप सर्वज्ञ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्वज्ञाय नमः अर्घं ॥ ५८८ ॥

तीन लोक हितकार हो, शरणागत प्रतिपाल। भव्यनि मन आनन्द करि, वन्दूं दीनदयाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामित्राय नमः अर्घं ॥ ५८९ ॥

समता सुखमें मगन हैं, राग द्वेष संक्लेश । ताको नाश सुखी भए, युग युग जयो जिनेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घं ॥ ५९० ॥

निरावरण निज ज्ञानमें, संशय विभ्रम नाहिं । सम्यग्ज्ञान प्रकाशते, वस्तु प्रमाण दिखाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीणबन्धाय नमः अर्घं ॥ ५९१ ॥

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय । पर निमित्त लवलेश नहिं, वन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घं ॥ ५९२ ॥

मुनि विशेष स्नातक कहे, परमातम परमेश । तुम ध्यावत निर्वाण पद, पावै भविक हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकपरमर्षये नमः अर्घं ॥ ५९३ ॥

पंच प्रकार शरीर बिन, दीप्त रूप निजरूप । सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंगाय नमः अर्घं ॥ ५९४ ॥

द्वय प्रकार बन्धन रहित, वन्दूं मोक्ष सरूप । भविजन बन्ध विनाशकर, देहो मोक्ष अनूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घं ॥ ५९५ ॥

सुगुण रत्न की राशके, आप महा भण्डार । अगम अथाह विराजते, वन्दूं भाव विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सागराय नमः अर्घं ॥ ५९६ ॥

मुनिजन ध्यावैं भाव युत, महा मोक्षपद साध । सिद्ध भये मैं नमत हूं, चहूं संघ आराध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासाधवे नमः अर्घं ॥ ५९७ ॥

ज्ञान जोति प्रतिभास में रागादिक मल नाहिं । विशद अनूपम लसत हो, दीप्त ज्योति शिवराह ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभाय नमः अर्घं ॥ ५९८ ॥

द्रव्यभाव मल नाशकर, शुद्ध निरञ्जन देव । निज आतम में रमत हो, आश्रय विन स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मने नमः अर्घं ॥ ५९९ ॥

शुद्ध अनंत चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ । श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधराय नमः अर्घं ॥ ६०० ॥

मरणादिक भयसे सदा, रक्षित हैं भगवान । स्वयं प्रकाश विलासमें, राजत सुखकी खान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मरणभयनिवारणाय (दत्तनाथाय) नमः अर्घं ॥ ६०१ ॥

राग द्वेष नहिं भावमें, शुद्ध निरञ्जन आप। ज्योंके त्यों तुम थिर रहो, तनक न व्यापे पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमलाभावाय नमः अर्घं ॥ ६०२ ॥

भवसागरसे पार हो, पहुंचे शिवपद तीर। भाव सहित तिन नमत हूं, लहूं न फुनि भव पीर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उद्धराय नमः अर्घं ॥ ६०३ ॥

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष। ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अग्निदेवाय नमः अर्घं ॥ ६०४ ॥

विषय कषाय न रंच है, निरावरण निरमोह। इन्द्री मनको दमन कर, वन्दूं सुन्दर सोह ॥
ॐ ह्रीं अर्हं संयमाय नमः अर्घं ॥ ६०५ ॥

मोक्षरूप कल्याण कर, सुख-सागर के पार। महादेव स्वै शक्ति धर, विद्या तिय भरतार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवाय नमः अर्घं ॥ ६०६ ॥

पुष्प भेट धर जजत सुर, निजकर अंजुलि जोड़। कमलापति कर कमलमें, धरैं लक्ष्मी होड़ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पांजलये नमः अर्घं ॥ ६०७ ॥

पूरण ज्ञानानंद मय, अजर अमर अमलान। अविनाशी ध्रुव अखिल पद, अविकारी सब मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवगुणाय नमः अर्घं ॥ ६०८ ॥

रोग शोक भय आदि विन, राजत नित आनंद। खेद रहित रति अरति विन, विकसत पूरणचन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उत्साहजिनाय नमः अर्घं ॥ ६०९ ॥

जो गुण शक्ति अनंत हैं, ते सब ज्ञान मझार। एक मिष्ट आकृति विविध, सोहत हैं अविकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाय नमः अर्घं ॥ ६१० ॥

परम पूज्य परधान हैं, परम शक्ति आधार। परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घं ॥ ६११ ॥

दोष अकोप अरोप हो, सम सन्तोष अलोप। पंच परम पद धारियत, भविजन को परिपोष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घं ॥ ६१२ ॥

पंच कल्याणक युक्त हैं, समोशरण ले आदि। इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुण गण अनुवाद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नमः अर्घं ॥ ६१३ ॥

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय । सुमति गोपियन संग रमत, निज लीला दर्शाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नमः अर्घं ॥ ६१४ ॥

सम्यग्ज्ञान समाधि धर, मिथ्या मोह निवार । पर हितकर उपदेश है, निश्चय नय व्यवहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानमतये नमः अर्घं ॥ ६१५ ॥

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार । सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमतये नमः अर्घं ॥ ६१६ ॥

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम । ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भद्राय नमः अर्घं ॥ ६१७ ॥

शील स्वभाव सु जन्म लैं, अन्त समय निरवाण । भविजन आनन्दकार हैं, सर्व कलुषता हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिजिनाय नमः अर्घं ॥ ६१८ ॥

धरम रूप अवतार हो, लोक पाप को भार । मृतक स्थल पहुंचाइयो, सुलभ किये सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभाय नमः अर्घं ॥ ६१९ ॥

अन्तर बाहिर शत्रुको, निमिष परै नहिं जोर । विजय लक्ष्मी नाथ हो, पूजूं द्वै कर जोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजिताय नमः अर्घं ॥ ६२० ॥

तीन लोक आनंद हो, श्रेष्ठ जन्म तुम होत । स्वर्ग मोक्ष दातार हो, पावत नहीं कुमोत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं संभवाय नमः अर्घं ॥ ६२१ ॥

परम सुखी तुम आप हो, पर आनंद कराय । तुमको पूजत भावसों, मोक्ष लक्ष्मी पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभिनन्दनाय नमः अर्घं ॥ ६२२ ॥

सब कुवादि एकांत को, नाश कियो छिनं माहिं । भविजन मन संशय हरण, और लोक में नाहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुमतये नमः अर्घं ॥ ६२३ ॥

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार । तीन लोक में विस्तरी, सुयश नामको धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभाय नमः अर्घं ॥ ६२४ ॥

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बंध निवार । मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्वाय नमः अर्घं ॥ ६२५ ॥

तीन लोक आताप हर, मुनि मन मोदन चन्द । लोक प्रिय अवतार हो, पाऊं सुख तुम बन्द ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घं ॥ ६२६ ॥

मन मोहन सोहन महा, धारै रूप अनूप । दरशत मन आनंद हो, पायो स्वैरस कूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदंताय नमः अर्घं ॥ ६२७ ॥

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश । मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शीतलनाथाय नमः अर्घं ॥ ६२८ ॥

तीर्थंकर श्रेयांस हम, देहो श्री शुभ भाग । श्री सु अनंत चतुष्ट हो, और सकल दुरभाग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयसे नमः अर्घं ॥ ६२९ ॥

त्रस नाड़ी या लोक में, तुम ही पूज्य प्रधान । तुमको पूजत भावसों, पाऊं सुख निरवाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्याय नमः अर्घं ॥ ६३० ॥

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महा मुनिन के नाथ । इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूं पदांबुज माथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३१ ॥

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश । थकित रहे असमर्थ करि, प्रणमें सन्त हमेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३२ ॥

अनागार आगारके, उद्धारक जिनराज । धर्मनाथ प्रणमूं सदा, पाऊं शिवसुख साज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३३ ॥

शांति रूप पर शांति कर, कर्म दाह विनिवार । शांति हेत वन्दूं सदा, पाऊं भवदधि पार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शांतिनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३४ ॥

क्षुद्र वीर्य भव जीवके, रक्षक हैं तीर्थेश । शरणागत प्रतिपाल कर, ध्यावै सदा सुरेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थुनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३५ ॥

पूजनीक सब जगतके, मंगल कारक देव । पूजत हैं हम भावसों, विनशै अघ स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अरनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३६ ॥

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक । लोकोत्तम जिनराजके, नमूं चरण दे धोक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मल्लिनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३७ ॥

पंच पापको त्यागकरि, भव्य जीव आनन्द । भये जासु उपदेशतें, पूजत हूं पद वृन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनिसुव्रताय नमः अर्घं ॥ ६३८ ॥

सुरनर मुनि नित नमन करि, जान धरम अवतार । तिनको पूजूं भाव युत, लहूं भवार्णव पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नमिनाथाय नमः अर्घं ॥ ६३९ ॥

नेम धर्ममें नित रमें, धर्मधुरा भगवान । धर्मचक्र जगमें फिरे, पहुंचावें शिव थान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नेमिनाथाय नमः अर्घं ॥ ६४० ॥

शरणागत निज पाम दो, पापफांस दुख नाश । तिसको छेदो मूलसों, देहु मुकति गति दास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पार्श्वनाथाय नमः अर्घं ॥ ६४१ ॥

वृद्ध भावतें उच्चपद, लोक शिखर आरूढ । केवल लक्ष्मी बर्धता, भई सु अन्तर गूढ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वर्द्धमानाय नमः अर्घं ॥ ६४२ ॥

अतुल वीर्य तन धरत हैं, अतुल वीर्य मन बीच । कामिन वश नहिं रंच भी, जैसे जल बिच मीच ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महावीराय नमः अर्घं ॥ ६४३ ॥

मोह सुभटकूं पटकियो, तीन लोक परशंस । श्रेष्ठ पुरुष तुम जगतमें, कियो कर्म विध्वंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुवीराय नमः अर्घं ॥ ६४४ ॥

मिथ्या मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार । शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सन्मतये नमः अर्घं ॥ ६४५ ॥

निज आश्रय निर्विघ्न नित, स्वै लक्ष्मी भण्डार । चरणाम्बुज नित नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महापद्माय नमः अर्घं ॥ ६४६ ॥

हो देवाधीदेव तुम, नमत देव चउ भेद । धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरदेवाय नमः अर्घं ॥ ६४७ ॥

निरावर्ण आभास है, ज्यों विन पटल दिनेश । लोकालोक प्रकाश करि, सुन्दर प्रभा जिनेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नमः अर्घं ॥ ६४८ ॥

आतमीक निज गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप । स्वयं जोति परकाशमय, वंदत हूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयप्रभाय नमः अर्घं ॥ ६४९ ॥

स्वै शक्ती स्वै करण हैं, साधन बाह्य अनेक । मोह सुभट क्षय करनको, आयुध रास विवेक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुधाय नमः अर्घं ॥ ६५० ॥

जय जय सुर धुनि करत हैं, तथा विजय निधि देव । तुम पद जे नर नमत हैं, पावें सुख स्वयमेव ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जयदेवाय नमः अर्घं ॥ ६५१ ॥

तुम सम प्रभा न औरमें, धरो ज्ञान परकाश । नाथ प्रभा जगमें भ्रमत, नमत मोहतम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभादेवाय नमः अर्घं ॥ ६५२ ॥

रचक हो षट् कायके, दयासिंधु भगवान । शशि सम जिय आल्हाद करि, पूजनीक धरि ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उदङ्काय नमः अर्घं ॥ ६५३ ॥

समाधान सबके करैं, द्वादश सभा मझार । सर्व अर्थ परकाश कर, दिव्य-ध्वनि सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्नकीर्तये नमः अर्घं ॥ ६५४ ॥

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूं नहीं व्यय होय । उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जयाय नमः अर्घं ॥ ६५५ ॥

केवलज्ञान स्वभाव में, लोक त्रय इक भाग । पूरणताको पाइयो, छांडि सकल अनुराग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णबुद्धाय नमः अर्घं ॥ ६५६ ॥

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार । निज सन्तोष सुखी सदा, पर सम्बन्ध निवार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कषायाय नमः अर्घं ॥ ६५७ ॥

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान । विमल जिनेश्वर मैं नमूं, तीन लोक परधान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विमलप्रभाय नमः अर्घं ॥ ६५८ ॥

स्वैपदमें नित रमत हैं, कभी न आरति होय । अतुल वीर्य विधि जीतियो, नमूं जोर कर दोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाबलाय नमः अर्घं ॥ ६५९ ॥

द्रव्य भाव मल कर्म हैं, ताको नाश करान । शुद्ध निरंजन हो रहे, ज्यों बादल विन भान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नमः अर्घं ॥ ६६० ॥

तुम चित्राम अरूप है, सुरनर साधु अगम्य । निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगुप्ताय नमः अर्घं ॥ ६६१ ॥

मग्न भये निज आत्ममें, पर पदमें नहिं वास । लख अलख विराजते, पूरो मनकी आश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिगुप्तये नमः अर्घं ॥ ६६२ ॥

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहिं चाह । स्वयं भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घं ॥ ६६३ ॥

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द । महातेज परताप हैं पूरण ज्योति अमन्द ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कंदर्पाय नमः अर्घं ॥ ६६४ ॥

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान । तिनको पूजै सर्व जग, मैं पूजों धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयनाथाय नमः अर्घं ॥ ६६५ ॥

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार । तिनके स्वामी हो प्रभू, राग द्वेष मल जार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घं ॥ ६६६ ॥

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरै, सर्व अर्थ गुणधार । भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यवादाय नमः अर्घं ॥ ६६७ ॥

नहीं पार जा वीर्यको, स्वाभाविक निरधार । सो सहजै गुण धरत हो, नमूं लहूं भवपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घं ॥ ६६८ ॥

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानन्द धाम । चक्रपती हरिबल नमें, मैं पूजूं निष्काम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुदेवाय नमः अर्घं ॥ ६६९ ॥

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार । श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूं करो भवपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुविधये नमः अर्घं ॥ ६७० ॥

हैं प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण । सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तमको भान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञापारमिताय नमः अर्घं ॥ ६७१ ॥

समय प्रमाण निमित तनी, कभी अन्त नहिं होय । अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूं हूं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्ययाय नमः अर्घं ॥ ६७२ ॥

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्व मान परमान । अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुराणपुरुषाय नमः अर्घं ॥ ६७३ ॥

धर्मसहायक हो प्रभू, धर्म मार्गकी लीक। शुभ मर्यादा बन्ध प्रति, करण चलावन ठीक ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसारथये नमः अर्घं ॥ ६७४ ॥
शिव मारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार। धर्म सुयश विस्तार करि, बतलायो शुभ सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शिवकीर्तिजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७५ ॥
मोह अन्ध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ। मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूं जोर जुग हाथ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोहांधकारविनाशकजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७६ ॥
मन इन्द्री व्यापार विन, भाव रूप विध्वंश। ज्ञान अतींद्रिय धरत हो, नमत नशे अघवंश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७७ ॥
पर उपदेश परोक्ष विन, साक्षात परतक्ष। जानत लोकालोक सब, धारैं ज्ञान अलक्ष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७८ ॥
व्यापक हो तिहुं लोकमें, ज्ञान ज्योति सब ठौर। तुमको पूजत भावसों, पाऊं भवदधि ओर
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभुवे नमः अर्घं ॥ ६७९ ॥
इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय। तीन लोक नायक प्रभू, हमपर होउ सहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वनायकाय नमः अर्घं ॥ ६८० ॥
तुम देवन के देव हो, महादेव है नाम। विन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बराय नमः अर्घं ॥ ६८१ ॥
सर्व-व्यापि कुमती कहैं, करो भिन्न विश्राम। जगसों तजी समीपता, राजत हो शिवधाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरंतरजिनाय नमः अर्घं ॥ ६८२ ॥
हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर। प्रिय वाणी कर पोषते, द्वादश सभा सु तीर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय नमः अर्घं ॥ ६८३ ॥
भवसागरके पार हो, सुखसागर गलतान। भव्यजीव पूजत चरन, पावै पद निरवाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भवांतकाय नमः अर्घं ॥ ६८४ ॥
नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश। दृढ़ परणति स्वै आतमरति, पूजूं श्री मुक्तेश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दृढव्रताय नमः अर्घं ॥ ६८५ ॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार। तिन सबको जानो सुविध, महा निपुण मति धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नयोत्तुङ्गाय नमः अर्घं ॥ ६८६ ॥

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आत्म विभाव कराय। तिनको त्यागि विशुद्ध पद, पायो पूजूं पाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलङ्काय नमः अर्घं ॥ ६८७ ॥

ज्यों शशि किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश। कलाधार सोहैं सु इम, पूजत अघ तम नाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णकलाधराय नमः अर्घं ॥ ६८८ ॥

जन्म मरण को आदि ले, जगमें क्लेश महान। तिसके हंता हो प्रभू, भोगत सुख निर्वाण ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वक्लेशापहाय नमः अर्घं ॥ ६८९ ॥

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहिं होय। अव्याबाध विराजते, पर सहायको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ध्रौव्यरूपजिनाय नमः अर्घं ॥ ६९० ॥

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय। अचल अनन्त स्वभाव में, तीन लोक सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अच्चयअनतस्वभावात्मकजिनाय नमः अर्घं ॥ ६९१ ॥

स्वज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदे मांहि विकसाय। सोहत हैं शुभ चिह्न करि, भवि आनन्द कराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घं ॥ ६९२ ॥

धर्म रीति परगट कियो, युग की आदि मझार। भविजन पोपे सुख सहित, आदि धर्म अवतार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं आदिब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ ६९३ ॥

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुं ओर। चउ अनुयोग वखानते, सब दुख नाशौ मोर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखाय नमः अर्घं ॥ ६९४ ॥

जगत जीव कल्याण कर, वृष मर्याद वखान। ब्रह्म ब्रह्म भगवान हो, महामुनी सब मान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ ६९५ ॥

प्रजापती प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार। मन्मथ इन्द्री वश करन, वन्दूं सुख आधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विधात्रे नमः अर्घं ॥ ६९६ ॥

तीन लोककी लछमी, तुम चरणांबुज वास। श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नमः अर्घं ॥ ६९७ ॥

बहुरि न जगमें भ्रमण है, पंचम गति में वास। नित्य अमरता पाइयो, जरा मृत्यु को नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मने नमः अर्घं ॥ ६९८ ॥

पांच काय पुद्गलमई, तामें एक न होय। केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुख खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मभुवे नमः अर्घं ॥ ६९९ ॥

लोक शिखर सुखसों रहैं, ये ही प्रभुता जान। धारत हैं तिहुं लोकमें, अधिक प्रभा परधान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रवासिने नमः अर्घं ॥ ७०० ॥

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिर को नाश। शिवमग दिखलावत सही, सूरज सम प्रतिभास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरज्येष्ठाय नमः अर्घं ॥ ७०१ ॥

प्रजापाल हितधार उर, शुभ मारग बतलाय। सत्यारथ ब्रह्मा कहे, तुमरे वन्दूं पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापतये नमः अर्घं ॥ ७०२ ॥

गर्भ समय षट् मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय। रत्न वृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घं ॥ ७०३ ॥

तुम हि चार अनुयोगके, अंग कहे मुनिराय। तुमसों पूरण श्रुत सही, नांतर मंगल काय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वेदांगाय नमः अर्घं ॥ ७०४ ॥

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज। पूरण ज्ञाता तुम्हीं हो, प्रणमूं मैं शिवकाज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णवेदज्ञाय नमः अर्घं ॥ ७०५ ॥

पार भये भव सिंधुके, तथा सुवर्ण समान। उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भवसिंधुपारगाय नमः अर्घं ॥ ७०६ ॥

सुखाभास पर निमिततें, पर उपाधितें होत। स्वतः सुभाव धरो सही, सत्यानंद उद्योत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानंदाय नमः अर्घं ॥ ७०७ ॥

मोहादिक परबल महा, सो इमको तुम जीत। औरनकी गिनती कहां, तिष्ठो सदा अभीत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजयाय नमः अर्घं ॥ ७०८ ॥

दिव्य रत्नमय ज्योति हो, अमित अकंप अडोल। मनवांछित फलदाय हो, राजत अखय अमोल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मनवांछितफलदाय नमः अर्घं ॥ ७०९ ॥

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान । सूर्य समान सुदीप्त धर, महा ऋषीश्वर जान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जीवन्मुक्तजिनाय नमः अर्घं ॥ ७१० ॥

स्वय भय आदिकसे परे, पर भय आदि निवार । पर उपाधि विन नित सुखी, वन्दूं भाव संभार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शतानन्दाय नमः अर्घं ॥ ७११ ॥

ईश्वर हो तिहुं लोकके, परम पुरुष परधान । ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घं ॥ ७१२ ॥

रत्नत्रय पुरुषार्थ करि, हो प्रसिद्ध जयवंत । कर्मशत्रुको क्षय कियो, शीश नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिविक्रमाय नमः अर्घं ॥ ७१३ ॥

सूरज हो शिवराहके, कर्म दलन बल सूर । संशय केतु न ग्रहण ग्रस, महा सहज सुख पूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षमार्गप्रकाशकआदित्यरूपजिनाय नमः अर्घं ॥ ७१४ ॥

सुभग अनंत चतुष्टपद, सोई लक्ष्मी भोग । स्वामी हो शिवनारिके, नमूं जोरि तिहुं योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपतये नमः अर्घं ॥ ७१५ ॥

इन्द्रादिक पूजत जिन्हैं, पंचकल्याणक थाप । अद्भुत पराक्रमको धरैं, नमत नसैं भव पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घं ॥ ७१६ ॥

निज प्रदेशमें वसत हैं, परमातमको वास । आप मोक्षके नाथ हो, आप हि मोक्ष निवास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घं ॥ ७१७ ॥

सर्व लोक कल्याण कर, विष्णु नाम भगवान । श्री अर्हंत स्व लक्ष्मी, ताके भरता जान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वलोकश्रेयस्करजिनाय नमः अर्घं ॥ ७१८ ॥

मुनिमन कुमुदनि-मोदकर, भव संताप विनाश । पूरण चन्द्र त्रिलोकमें, पूरण प्रभा प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हृषीकेशाय नमः अर्घं ॥ ७१९ ॥

दिनकर सम परकाश कर, हो देवनके देव । ब्रह्मा विष्णु कहात हो, शशि सम दुति स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हरये नमः अर्घं ॥ ७२०॥

स्वय विभवके हो धनी, स्वयं ज्योति परकाश । स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घं ॥ ७२१ ॥

धर्म भार धर धारिणी, हो जिनेन्द्र भगवान। तुमको पूजों भावसों, पाऊं पद निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वंभराय नमः अर्घं ॥ ७२२ ॥

असुर काम अरु हास्य इन, आदि कियो विध्वंश। महा श्रेष्ठ तुमको नमूं, रहै न अघको अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं असुरध्वंसिने नमः अर्घं ॥ ७२३ ॥

सुधाधार द्यो अमरपद, धर्म फूलकी वेल। शुभ मति गोपिन संगमें, हमें राख निज गेल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं माधवाय नमः अर्घं ॥ ७२४ ॥

विषय कषाय स्व वश करी, बलि वश कियो जु काम। महाबली परसिद्ध हो, तुम पद करूँ प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं बलिबन्धनाय नमः अर्घं ॥ ७२५ ॥

तीन लोक भगवान हो, स्वै परके हितकार। सुरनर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधोक्षजाय नमः अर्घं ॥ ७२६ ॥

हितमित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय। धर्म मोक्ष परगट करन, वन्दूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हितमितप्रियवचनजिनाय नमः अर्घं ॥ ७२७ ॥

निज लीलामें मगन हैं, सांचा कृष्ण सु नाम। तीन खण्ड तिहुं लोकके, नाथ करूं परणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नमः अर्घं ॥ ७२८ ॥

लखे तृण सम जगतकी, विभव जान करवास। धरै सरलता जोगमें, करै पापको नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नमः अर्घं ॥ ७२९ ॥

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक। सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जन चित रमणीक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीलांछनाय नमः अर्घं ॥ ७३० ॥

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति श्रुति योग। धर्म मोक्ष मारग कहैं, पूजत सज्जन लोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमते नमः अर्घं ॥ ७३१ ॥

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगे निज भाव। स्वयं सुआश्रय रहत हैं, मैं पूजूं धर चाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नमः अर्घं ॥ ७३२ ॥

नाशी लौकिक कामना, निर इच्छुक योगीश। नारि शृङ्गार न मन वसै, वंदत हूं लोकीश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नरकांतकाय नमः अर्घं ॥ ...

व्यापक लोकालोकमें, विष्णुरूप भगवान। धर्मरूप तरु लहलहै, पूजत हूं धर ध्यान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वक्सेनाय नमः अर्घं ॥ ७३४ ॥

धर्मचक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामत रिपुधात। तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूं दिनरात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चक्रपाणये नमः अर्घं ॥ ७३५ ॥

सुभग सुरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार। तीन लोककी लक्ष्मी, है एकत्र उदार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनाभाय नमः अर्घं ॥ ७३६ ॥

मुनिजन आदर योग हो, लोक सराहन योग। सुरनर पशु आनंद कर, सुभग निजातम भोग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जनार्दनाय नमः अर्घं ॥ ७३७ ॥

सब देवनके देव हो, महादेव विख्यात। ज्ञानामृत मुखसों खिरै, पीवत भवि सुख पात ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकण्ठाय नमः अर्घं ॥ ७३८ ॥

पाप पुञ्जका नाश करि, धर्म रीति प्रगटाय। तीन लोकके अधिपती, हमपर दया कराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपशङ्कराय नमः अर्घं ॥ ७३९ ॥

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप। स्वयं भाव परमातमा, वन्दूं स्वयं सरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयप्रभवे नमः अर्घं ॥ ७४० ॥

सब देवनके देव हो, महादेव है नाम। स्वपर सुगंधित रूप हो, तुम पद करूं प्रणाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घं ॥ ७४१ ॥

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग माने आन। सब जग शीश नमें चरण, सब जगको सुखदान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं वृषकेतवे नमः अर्घं ॥ ७४२ ॥

जन्म जरा मृत जीतिकैं, निश्चल अव्यय रूप। सुखसों राजत नित्य हो, वन्दूं हूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युञ्जयाय नमः अर्घं ॥ ७४३ ॥

सब इन्द्री मन जीतिके, करि दीनो तुम व्यर्थ। स्वयं ज्ञान निन्द्री जग्यौ, नमूं सदा शिव अर्थ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नमः अर्घं ॥ ७४४ ॥

सुन्दर रूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार। असाधार्ण शुभ अणु लगै, केवलज्ञान मझार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कामदेवाय नमः अर्घं ॥ ७४५ ॥

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप । धर्म मार्ग दरशात है, लोकत रूप अरूप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोचनाय नमः अर्घं ॥ ७४६ ॥
निजानन्द स्व लक्ष्मी, ताके हो भरतार । शिव कामिन नित भोगते, परम रूप सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घं ॥ ७४७ ॥
जे अज्ञानी जीव हैं, तिन प्रति बोध करान । रक्षक हो षट् कायके, तुम सम कौन महान ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पशुपतये नमः अर्घं ॥ ७४८ ॥
रमण भाव निज शक्तिसों, धरै तथा दुति काम । कामदेव तुम नाम है, महाशक्ति बल धाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शम्बरारये नमः अर्घं ॥ ७४९ ॥
कामदाहको दम कियो, ज्यों अगनी जलधार । स्वै आतम आचरण नित, महाशील श्रिय सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुरांतकाय नमः अर्घं ॥ ७५० ॥
स्वै सन्मति शुभ नारसों, मिले रले अरधांग । ईश्वर हो परमातमा, तुम्हैं नमूं सर्वांग ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्ध नारीश्वराय नमः अर्घं ॥ ७५१ ॥
नहीं चिगे उपयोगसे, महा कठिन परिणाम । महावीर्य धारक नमूं तुमको आठो जाम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं रुद्राय नमः अर्घं ॥ ७५२ ॥
गुण पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश । स्वयं काल स्व क्षेत्र हो, स्वयं सुभाव विशेष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भवाय नमः अर्घं ॥ ७५३ ॥
सूक्षम गुप्त स्वगुण धरें, महा शुद्धता धार । चार ज्ञान धर नहिं लखें, मैं पूजूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भकल्याणकजिनाय नमः अर्घं ॥ ७५४ ॥
शिव तिय संग सदा रमें, काल अनन्त न और । अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमौर ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाशिवाय नमः अर्घं ॥ ७५५ ॥
जगत कार्य तुमसों सरैं, सब तुमरे आधीन । सबके तुम सरदार हो, आप धनी जग दीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्कर्त्रे नमः अर्घं ॥ ७५६ ॥
महा घोर अंधियार है, मिथ्या मोह कहाय । जगमें शिव मग लुप्त था, ताको तुम दरशाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारांतकाय नमः अर्घं ॥ ७५७ ॥

सन्तति पत्त जुदी नहीं, नहीं आदि नहिं अन्त । सदा काल विन काल तुम, राजत हो जयवन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनाय नमः अर्घं ॥ ७५८॥

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञको ठाम । तुमको पूजत पाइये, महा मोत्तसुख धाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं हराय नमः अर्घं ॥ ७५९ ॥

महा सुभट गुणरास हो, सेवत हैं तिहुं लोक । शरणागत प्रतिपालकर, चरणाम्बुज दूं धोक ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासेनाय नमः अर्घं ॥ ७६० ॥

गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम । पार करो भवसिंधुतें, मंगलकर सुख धाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महागणपतिजिनाय नमः अर्घं ॥ ७६१ ॥

चार संघके नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार । धर्म मार्ग प्रवर्त कर, वन्दूं पाप निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गणनाथाय नमः अर्घं ॥ ७६२ ॥

मोह सर्पके दमन को, गरुड समान कहाय । सवके आदरकार हो, तुम गणपति सुखदाय

ॐ ह्रीं अर्हं महाविनायकाय नमः अर्घं ॥ ७६३ ॥

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसों हो प्रतिकूल । धर्माधर्म विरोध कर, धरूं शीश पग धूल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरोधविनाशकजिनाय नमः अर्घं ॥ ७६४ ॥

जितने दुख ससारमें, तिनको वार न पार । इक तुम ही जानो सही, ताहि तजो दुख भार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विपद्विनाशकजिनाय नमः अर्घं ॥ ७६५ ॥

सब विद्याके बीज हो, तुम वाणी परकाश । सकल अविद्या मूलतें, इक छिनमें हो नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशात्मने नमः अर्घं ॥ ७६६ ॥

पर निमित्तसे जीवको, रागादिक परिणाम । तिनको त्याग सुभावमें, राजत हैं सुखधाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभावरहिताय नमः अर्घं ॥ ७६७ ॥

अन्तर बाहिर प्रवल रिपु, जीत सके नहिं कोय । निर्भय अचल सुथिर रहै, कोटि शिवालय सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जयाय नमः अर्घं ॥ ७६८ ॥

घन सम गर्जत वचन हैं, भागे कुनय कुवादि । प्रबल प्रचण्ड सुवीर्य है, धरै सुगुण इत्यादि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्भावाय नमः अर्घं ॥ ७६९ ॥

पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम । अतुल प्रभा धारो महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रभानवे नमः अर्घं ॥ ७७० ॥

तुम अजन्म विन-मृत्यु हो, सदा रहो अविकार । ज्योंके त्यों मणि दीप सम, पूजत हूं मन धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजरअमरजिनाय नमः अर्घं ॥ ७७१ ॥

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य । तुमको वन्दों भावसों, मिटे सकल दुख व्याध्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याय नमः अर्घं ॥ ७७२ ॥

निज आतम स्वै ज्ञान है, तामें रुचि परतीत । पर पद सोहै अरुचिता, पाई अक्षय जीत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुधांशोचिषे नमः अर्घं ॥ ७७३ ॥

जन्म मरणको आदि लै, सकल रोगको नाश । दिव्य औषधी तुम धरो, अमर करन सुखरास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नमः अर्घं ॥ ७७४ ॥

पूरण गुण परकाश कर, ज्यों शशि किरण उद्योत । मिथ्या तप निरवारते, दर्शत आनन्द होत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कलानिधये नमः अर्घं ॥ ७७५ ॥

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय । चार संघ नायक प्रभू, वन्दूं तिन के पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्रनाथाय नमः अर्घं ॥ ७७६ ॥

भव तप-हर हो चन्द्रमा, शीतलकार कपूर । तुमको जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्रांशवे नमः अर्घं ॥ ७७७ ॥

स्वर्गादिकको लक्ष्मी, तासों भी जु ग्लान । स्वैपदमें आनन्द है, तीन लोक भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सौम्यभावरताय नमः अर्घं ॥ ७७८ ॥

पर पदार्थको इष्ट लखि, होत नहीं अभिमान । हो अबन्ध इस कर्मतें स्वयआनन्द निधान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुमुदबांधवाय नमः अर्घं ॥ ७७९ ॥

सब विभावको त्याग करि, हैं स्वधर्ममें लीन । तातें प्रभुता पाइयो, हैं नहिं बन्धाधीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरतये नमः अर्घं ॥ ७८० ॥

आकुलता नहिं लेश है, नहीं रहै चित भंग । सदा सुखी तिहुं लोकमें, चरन नमूं सब अंग

ॐ ह्रीं अर्हं आकुलतारहितजिनाय नमः अर्घं ॥ ७८१ ॥

शुभ परिणति प्रगटायके, दियो स्वर्गको दान । धर्मध्यान तुमसे चले, सुमिरत हो शुभ ध्यान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजनाय नमः अर्घं ॥ ७८२ ॥

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल । ईश्वर हो परमातमा, नमूं चरण निज भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनेश्वराय नमः अर्घं ॥ ७८३ ॥

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आपसे होय । धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मार्गनको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मराजाय नमः अर्घं ॥ ७८४ ॥

स्वयं स्व आतम रस लहो, ताही का है भोग । अन्य कुपरिणति त्यागियो, नमूं पदांबुज योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भोगिराजाय नमः अर्घं ॥ ७८५ ॥

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताहीके हो स्वामि । सब मलीनता त्यागियो, भये शुद्ध परिणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनज्ञानचारित्रात्मजिनाय नमः अर्घं ॥ ७८६ ॥

सत्य उचित शुभ न्यायमें, है आनन्द विशेख । सब कुनीतिको नाशकर, सर्व जीव सुख देख ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतानन्दाय नमः अर्घं ॥ ७८७ ॥

पर पदार्थके संगसे, दुखित होत सब जीव । ताके भयसों भय रहित, भोगें मोक्ष सदीव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिकांतजिनाय नमः अर्घं ॥ ७८८ ॥

जाको कभी न नाश हो, सो पायो आनन्द । अचल रूप निज आतममय, भाव अभावी द्वंद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानंदाय नमः अर्घं ॥ ७८९ ॥

शिव मारग परगट कियो, दोष रहित वरताय । दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहत्संपतये नमः अर्घं ॥ ७९० ॥

चौपाई छन्द ।

हितकारक अपूर्व उपदेश, तुमसम और नहीं देवेश । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वदेवोपदेष्ट्रे नमः अर्घं ॥ ७९१ ॥

कर्म विषैं संस्कार विधान, तीन लोकमें विस्तर जान । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसमूहेभ्यो नमः अर्घं ॥ ७९२ ॥

धर्मोपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धाय नमः अर्घं ॥ ७९३ ॥

तीन लोकमें हो शशि सूर, निजकिरणावलि करि तम चूर। सिद्धसमूह जजूं मनलाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तमोभेदिने नमः अर्घं ॥ ७९४॥

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवादकी करिहो हान। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममार्गदर्शकजिनाय नमः अर्घं ॥ ७९५ ॥

सर्व शास्त्र मिथ्या वा सांच, तुम निजदृष्टि लियो है जांच। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रनिर्णायकजिनाय नमः अर्घं ७९६ ॥

पंचमगति विन श्रेष्ठ न और, सो तुम पाय त्रिजग शिरमौर। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचमगतिजिनाय नमः अर्घं ॥ ७९७॥

श्रेष्ठ सुमति तुमही हो एक, शिवमारगकी जानो टेक। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठसुमतिदातृजिनाय नमः अर्घं ॥ ७९८ ॥

वृष मर्जाद भली विधि थाप, भविजन मेटो सब संताप। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुगताय नमः अर्घं ॥ ७९९ ॥

श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, संपूरण संकल्प निशान। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठकल्याणकारकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८०० ॥

निज ऐश्वर्य धरो संपूर्ण, पर विभूति विन हो अघ चूर्ण। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमैश्वर्यसंपन्नाय नमः अर्घं ॥ ८०१ ॥

श्रेष्ठ शुद्ध परब्रह्म रमाय, मंगलमय पर मंगलदाय। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं परब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ ८०२ ॥

श्री जिनराज कर्मरिपु जीति, पूजनीक हैं सबके मीत। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मारिजिते नमः अर्घं ॥ ८०३ ॥

षट् पदार्थ नव तत्व कहाय, धर्म अधर्म भलीविधि गाय। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नमः अर्घं ॥ ८०४ ॥

है शुभ लक्षण मय परिणाम, पर उपाधिको नहिं कछु काम। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणजिनाय नमः अर्घं ॥ ८०५ ॥

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वबोधसत्वाय नमः अर्घं ॥ ८०६ ॥

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्पाय नमः अर्घं ॥ ८०७ ॥

दूजो तुम सम नहिं भगवान, धर्माधर्म रीति बतलान । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयबोधजिनाय नमः अर्घं ॥ ८०८ ॥

महादुखी संसारी जान, तिनके पालक हो भगवान । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घं ॥ ८०९ ॥

जग विभूति निरिच्छुक होय, मान रहित आतम रत सोय । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरसरतजिनाय नमः अर्घं ॥ ८१० ॥

ज्यों शशि ताप हरै अनिवार, अतिशय सहित शांति करतार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिदात्रे नमः अर्घं ॥ ८११ ॥

हो निर्भेद अछेद अशेष, सब इकसार स्वयं परदेश । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभेद्याच्छेद्यजिनाय नमः अर्घं ॥ ८१२ ॥

मायाकृत सम पांचों काय, निजसों भिन्न लखो मत भाय । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचस्कंधमयात्मदृशे नमः अर्घं ॥ ८१३ ॥

बीती बात देख संसार, भवतन भोग विरक्त उदार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थभावनासिद्धाय नमः अर्घं ॥ ८१४ ॥

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुराननजिनाय नमः अर्घं ॥ ८१५ ॥

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवक्त्रे नमः अर्घं ॥ ८१६ ॥

मन वच काय जोग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिवाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घं ॥ ८१७ ॥

चउ अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्भूमिकशासनाय नमः अर्घं ॥ ८१८ ॥
काहू पदसों मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अन्वयाय नमः अर्घं ॥ ८१९ ॥
हो समाधिमें नित लवलीन, विन आश्रय नित ही स्वाधीन । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समाधिनिमग्नजिनाय नमः अर्घं ॥ ८२० ॥
लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेष स्वरूप । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकभालतिलकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८२१ ॥
अच्छाधीन हीन है शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छभावभिदे नमः अर्घं ॥ ८२२ ॥
जीवादिक षट् द्रव्यसु जान, तिनको भलीभांति है ज्ञान । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं षट्द्रव्यदृशे नमः अर्घं । ८२३ ॥
विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सकलवस्तुज्ञात्रे नमः अर्घं ॥ ८२४ ॥
सब पदार्थ दर्शत तुम वैन, संशय हरण करण सुख चैन । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं षोडशपदार्थवादिने नमः अर्घं ॥ ८२५ ॥
वर्णन करि पंचास्तिजुकाय, भव्य जीव संशय विनशाय । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचास्तिकायबोधकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८२६ ॥
प्रतिबिंबित हो आरसि माहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहि । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाध्यक्षजिनाय नमः अर्घं ॥ ८२७ ॥
जामें ज्ञान जीवको एक, सो परकाशो शुद्ध विवेक । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समवायसार्थकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८२८ ॥
भक्तनिके हो साध्य सु कर्म, अंतिम पौरुष साध्य सु शर्म । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं भक्तैकसाधकधर्माय नमः अर्घं ॥ ८२९ ॥

वाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वाद न हो प्रत्येक । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरवशेषगुणामृताय नमः अर्घं ॥ ८३० ॥

नय सु पक्ष करि सांख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्षकर वाद । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सांख्यादिपक्षविध्वंसकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८३१ ॥

सम्यग्दर्शन है तुम वैन, वस्तु परीक्षा भाषो ऐन । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक्दर्शनरूपजिनाय नमः अर्घं ॥ ८३२ ॥

धर्मशास्त्रके हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आदिपुरुषजिनाय नमः अर्घं ॥ ८३३ ॥

नय साधत नैयायिक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचविंशतितत्त्ववेत्रे नमः अर्घं ॥ ८३४ ॥

स्वपर चतुष्क वस्तुको भेव, व्यक्ताव्यक्त करो निरखेद । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्ताव्यक्तज्ञानविदे नमः अर्घं ॥ ८३५ ॥

दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनता मय है शुभ योग । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानचैतन्यभेददृशे नमः अर्घं ॥ ८३६ ॥

स्वैसंवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वसंवेदनज्ञानवादिने नमः अर्घं ॥ ८३७ ॥

द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग वैन सुखकार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं समवशरणद्वादशसभापतये नमः अर्घं ॥ ८३८ ॥

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहिचान । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिप्रमाणाय नमः अर्घं ॥ ८३९ ॥

विशद शुद्ध मति हो साकार, तुमको जानत है सु विचार । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अध्यक्षप्रमाणाय नमः अर्घं ॥ ८४० ॥

नयसापेक्षक हैं शुभ वैन, हैं अशंस सत्यारथ ऐन । सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादवादिने नमः अर्घं ॥ ८४१ ॥

लोकालोक क्षेत्रके मांहि, आप ज्ञानहै सब दरशाहिं। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घं॥ ८४२ ॥

अन्तर वाह्य लेश नहिं और, केवल आतममई अघोर। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मजिनाय नमः अर्घं॥ ८४३ ॥

अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषात्मजिनाय नमः अर्घं॥ ८४४ ॥

चहुंगतिमें नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नराधिपाय नमः अर्घं॥ ८४५ ॥

दर्श ज्ञान चेतनकी लार, निरावर्ण तुम हो अविकार। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणचेतनाय नमः अर्घं॥ ८४६ ॥

भावन वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहिं सन्देह। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षरूपजिनाय नमः अर्घं॥ ८४७ ॥

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक। सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमजिनाय नमः अर्घं॥ ८४८ ॥

दोहा।

जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम अलक्ष। निर्गुण यातें कहत हैं, भव-भयतें हम रक्ष ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुणाय नमः अर्घं॥ ८४९ ॥

चेतनमय हैं अष्टगुण, सो तुममें इक नाम। शुद्ध अमूरत देव हो, स्वै प्रदेश चिदराम ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्ताय नमः अर्घं॥ ८५० ॥

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार। निजानन्दको आदि ले, महातुष्ट निरधार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घं॥ ८५१ ॥

व्यापक लोकालोकमें, ज्ञान ज्योतिके द्वार। लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भक्त उद्धार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वगताय नमः अर्घं॥ ८५२ ॥

योग प्रबन्ध निवारियो, राग द्वेष निरवार। देह रहित निष्कंप हो, भये अक्रिया सार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्रियाय नमः अर्घं॥ ८५३ ॥

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहां रहो स्वयमेव । देव वास है मोक्ष थल, हो देवनके देव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवेष्टजिनाय नमः अर्घं ॥ ८५४ ॥

भवसागरके तीर हो, अचलरूप स्थान । फिर नहिं जगमें जन्म है, राजत हो सुखथान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थाय नमः अर्घं ॥ ८५५ ॥

ज्योंके त्यों नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश । स्वैपदमय साजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थाय नमः अर्घं ॥ ८५६ ॥

तत्व अतत्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास । ज्ञान मूर्ति हो ज्ञान घन, ज्ञान ज्योति अविनाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात्रे नमः अर्घं ॥ ८५७ ॥

पर निमित्तके योगतें, व्यापै नहीं विकार । स्वै स्वरूपमें थिर सदा, हो अबाध निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घं ॥ ८५८ ॥

चारवाक वा सांख्यमत, झूठी पक्ष धरात । अल्प मोक्ष नहिं होत है, राजत हो विख्यात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराभावाय नमः अर्घं ॥ ८५९ ॥

तारण तरण जहाज हो, अतुल शक्तिके नाथ । भव वारिधिसे पारकर, राखो अपने साथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भववारिधिपारकराय नमः अर्घं ॥ ८६० ॥

बन्ध मोक्षकी कहन है, सो भी है व्यवहार । तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वंधमोक्षरहिताय नमः अर्घं ॥ ८६१ ॥

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार । तुम साधो परधान हो, सबमें सुख आधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षसाधनप्रधानजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६२ ॥

कर्ममैल प्रक्षालकें, निज आतम लवलाय । हो प्रसन्न शिवथल विषैं, अन्तर मल विनशाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मण्याधिविनाशकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६३ ॥

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभावमें लीन । वन्दूं शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजस्वभावस्थितजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६४ ॥

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर । तुमको पूजत भावसों, मोह कर्मको चूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६५ ॥

निज भावनतें मोक्ष हो, ते ही भाव रहात। स्वैगुण स्वै परजायमें, थिरता भाव धरात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूपारूढजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६६ ॥

सब कुभावको जीतियो, शुद्ध भये निरमूल। शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ शूल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृतिप्रियाय नमः अर्घं ॥ ८६७ ॥

निज सन्मतिके सन्मती, निज बुधके बुधवान। शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्धसन्मतिजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६८ ॥

कर्म प्रकृतिके अंश विन, उत्तर हो या मूल। शुद्ध रूप अति तेजघन, ज्यों रवि विंब अधूल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धरूपजिनाय नमः अर्घं ॥ ८६९ ॥

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार। आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आद्यवेधसे नमः अर्घं ॥ ८७० ॥

नहिं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप। रोग शोक व्यापै नहीं, निवसै सदा अनूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकृतये नमः अर्घं ॥ ८७१ ॥

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरो तिमिर मिथ्यात। तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यातिमिरविनाशकाय नमः अर्घं ॥ ८७२ ॥

वस्तु परीक्षा तुम विना, और झूठकर खेद। अन्धकूपमें आप सर, डारत हैं निरभेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मीमांसकाय नमः अर्घं ॥ ८७३ ॥

होनहार या हो लई, या पइये इस काल। अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घं ॥ ८७४ ॥

जिनवाणी जिन सरस्वती, तुम गुणसों परिपूर। पूज्य योग तुमको कहैं, करे मोहमद चूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपूज्याय नमः अर्घं ॥ ८७५ ॥

स्वयं स्वरूपानन्द, हो, निज पद रमण सुभाव। सदा विकाशित ही रहैं, वन्दूं सहज सुभाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदोत्सवाय नमः अर्घं ॥ ८७६ ॥

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप। वचनातीत स्वगुण सहित, अमल अकाय अरूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोक्षज्ञानागम्याय नमः अर्घं ॥ ८७७ ॥

जो श्रुतज्ञान कला धरैं, तिनको हो तुम इष्ट । तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट ॥

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टपाठकाय नमः अर्घं ॥ ८७८ ॥

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार । सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धकर्मक्षयाय नमः अर्घं ॥ ८७९ ॥

पृथ्वी जल अग्नी पवन, जानत इनके भेद । गुण अनंत पर्याय सब, सो विभाग परिछेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चार्वाकादिमिथ्यामतनिवारकाय नमः अर्घं ॥ ८८० ॥

स्वैसंवेदन ज्ञानमें, देखत हौ प्रत्यक्ष । रक्षक हौ तिहुं लोकके, हम शरणागत पक्ष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घं ॥ ८८१ ॥

विद्यमान शिवलोकमें, स्वैगुण पर्य समेत । कहैं अभाव कुमत मती, निजपर धोका देत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिमुक्ताय नमः अर्घं ॥ ८८२ ॥

तुम आगमके मूल हो, अपर गुरू है नाम । तुम वाणी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुरुश्रुतये नमः अर्घं ॥ ८८३ ॥

तीन लोकके नाथ हो, ज्यों सुरगणमें इन्द्र । स्वैपद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हें देवेन्द्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घं ॥ ८८४ ॥

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, स्वैपर घातक नाहिं । सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्वभावाविरुद्धजिनाय नमः अर्घं ॥ ८८५ ॥

ब्रह्म ज्ञानको वेदकर, भये शुद्ध अविकार । पूरण ज्ञानी हो नमूं, लहो वेदको सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घं ॥ ८८६ ॥

शब्द ब्रह्मके ज्ञानतें, आतम- तत्व विचार । शुक्लध्यानमें लय भए, हो अतर्क अविचार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शब्दाद्वैतब्रह्मणे नमः अर्घं ॥ ८८७ ॥

सूक्ष्म तत्व प्रकाश कर, सूक्ष्म कर्म उच्छेद । मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मतत्वप्रकाशकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८८८ ॥

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब मानै पाखण्ड । धर्म यथारथ तुम कहो, तिन सबको करि खण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पाषण्डघ्नाय नमः अर्घं ॥ ८८९ ॥

कर्णरूप करतार हो, कोइक नयके द्वार। सुरनर मुनि पूजत भए, माननीक सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नयौघयुजे नमः अर्घं ॥ ८९० ॥

केवलज्ञान उपाइकें, तदनन्तर हो मोच। साक्षात बड़भागसैं, पूजूं इहां परोच्छ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तकृते नमः अर्घं ॥ ८९१ ॥

शरणागतको पार कर, देत सोक्ष अभिराम। तारण तरण सु नाम है, तुम पद करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पारकृते नमः अर्घं ॥ ८९२ ॥

भव समुद्र गम्भीर है, कठिन जासको पार। निज पुरुषारथ करि तिरे, गहो किनारो सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीरप्राप्ताय नमः अर्घं ॥ ८९३ ॥

एकबार जो शरण गहि, ताके हो हितकार। यातें सब जग जीवके, हो आनंद दातार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परहितस्थिताय नमः अर्घं ॥ ८९४ ॥

रत्नत्रय निज नेत्रसों, मोक्षपुरी पहुंचात। महादेव हो जगत पितु, तीन लोक विख्यात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रयनेत्रजिनाय नमः अर्घं ॥ ८९५ ॥

तीन लोकके नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार। सरल भाव विन-कपट हो, शुद्ध बुद्ध अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धजिनाय नमः अर्घं ॥ ८९६ ॥

निश्चय वा व्यवहारके, हो तुम जाननहार। वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूं निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानकर्मसमुच्चयिने नमः अर्घं ॥ ८९७ ॥

सुरनर पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान। तुमको नित ही ध्यावते, पावें सुख निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्यतृप्तजिनाय नमः अर्घं ॥ ८९८ ॥

कर्म मैल प्रक्षाल करि, तीनों योग संभार। पाप शैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पापमलनिवारकजिनाय नमः अर्घं ॥ ८९९ ॥

सूरज हो स्वै ज्ञान घन, ग्रहण उपद्रव नाहिं। बेखटके शिवपथ सब, दीखत है जिस माहिं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्तिवारणज्ञानघनजिनाय नमः अर्घं ॥ ९०० ॥ विरावर॥

जोग योग संकल्प सब, हरो देहके साथ। रहो अकंपित थिर सदा, मैं नाऊं निज माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्नयोगाय नमः अर्घं ॥ ९०१ ॥

जोग सुथिरताको हरै, करै आगमन कर्म । तुम तासों निर्लेप हो, नशौ मोहमद शर्म ॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगकिट्टिनिर्लेपाय नमः अर्घं ॥ ६०२ ॥

निज आतममें स्वस्थ हैं, स्वैपद योग रमाय । निर्भय तुम निरइच्छु हो, नमूं जोर कर पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्थलयोगरतजिनाय नमः अर्घं ॥ ६०३ ॥

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिम सूर । योग किरण विकसात हो, शोकतिमिर कर दूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं गिरिसयोगजिनाय नमः अर्घं ॥ ६०४ ॥

सूक्ष्म निज परदेश तन, सूक्ष्म क्रिया परिणाम । चितवत मन नहिं वच चलै, राजत हो शिवधाम ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृतवपुःक्रियाय नमः अर्घं ॥ ६०५ ॥

सूक्ष्म तत्त्व प्रकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार । भविजनको आनंद करि, तीन जगत गुरु सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मवाङ्मितयोगाय नमः अर्घं ॥ ६०६ ॥

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात । स्वैप्रदेश मय थिर सदा, कृत्य कृत्य सुख पात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कर्मशुद्धात्मजिनाय नमः अर्घं ॥ ६०७ ॥

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतनराय प्रकाश । कर्म कालिमासों रहित, पूजत हो अघ नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूताभिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घं ॥ ६०८ ॥

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धर्मरूप रसरास । एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरासजिनाय नमः अर्घं ॥ ६०९ ॥

सूर्य प्रकाश न मोहतम, हरता हो शुभ पंथ । पाप क्रिया विन राजते, महायती निरग्रन्थ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घं ॥ ६१० ॥

बंध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप । शुद्ध सुवर्ण दिपे सदा, नहीं मोह मल लेप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमसंवराय नमः अर्घं ॥ ६११ ॥

मेघ पटल विन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप । निरावर्ण तुम शुद्ध हो, पूजत मिटहैं पाप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घं ॥ ६१२ ॥

कर्म अंश सब झर गिरे, रहो न एक लगार । परम शुद्धता धारकै, तिष्ठत हो अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्जराय नमः अर्घं ॥ ६१३ ॥

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप। अन्य कुदेव कुआगिया, जुग जुग धरत कलाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलत्प्रभाय नमः अर्घं॥ ९१४ ॥

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन। तिनकों जीते छिनकमें, भये सुखी स्वाधीन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं समस्तकर्मक्षयजिनाय नमः अर्घं ॥ ९१५ ॥

कर्म प्रकृतिको रोग सम, जानो हो क्षयकार। निज स्वरूप आनन्दमें, कहो विगार निहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविस्फोटकाय नमः अर्घं ॥ ९१६ ॥

हीन शक्ति परमादको, आप किया है अन्त। निज पुरुषार्थ सुवीर्यसों, सुखी भए सु अनंत ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यजिनाय नमः अर्घं ॥ ९१७ ॥

एक रूप रस स्वादमें, निर आकुलित रहाय। विविध रूप रस परनिमित, ताको त्याग कराय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं एकाकाररसास्वादाय नमः अर्घं ॥ ९१८ ॥

इन्द्री मनके सब विषय, त्याग दिये इक लार। निजानन्दमें मगन हैं, छांडो जग व्यापार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वाकाररसाकुलाय नमः अर्घं ॥ ९१९ ॥

पर सम्बन्धी प्राण विन, निज प्राणनि आधार। सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्युको टार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदाजीवते नमः अर्घं॥ ९२० ॥

निज रसके सागर धनी, महा प्रिये स्वादिष्ट। अमर रूप राजै सदा, सुर मुनिके हो इष्ट ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घं ॥ ९२१ ॥

पूरण निज आनन्दमें, सदा जागते आप। नहिं प्रमादमें लिप्त हैं, पूजत विनशे पाप ॥
ॐ ह्रीं अर्हं जाग्रते नमः अर्घं ॥ ९२२ ॥

क्षीण ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीवको नित्य। सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं असुप्ताय नमः अर्घं ॥ ९२३ ॥

स्व प्रमाणमें थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य। निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वप्रमाणस्थिताय नमः अर्घं ॥ ९२४ ॥

श्रम करि नहिं आकुलित हों, सदा रहो निरखेद। स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद ॥
ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलितजिनाय नमः अर्घं॥ ९२५ ॥

मन वच तन व्यापार था, तावत रहो शरीर। ताको नाश अकंप हो, वन्दूं मन घर धीर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अयोगिने नमः अर्घं ॥ ९२६ ॥

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र। तुमको वन्दूं भावसों, हरौ पाप सर्वत्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरशीतिलक्षणाय नमः अर्घं ॥ ९२७ ॥

तुम लक्षण सूक्ष्म महा, इन्द्रिय विषय अतीत। वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहें सुनीत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगुणाय नमः अर्घं ॥ ९२८ ॥

अगुरुलघू पर्यायके, भेद अनन्तानन्त। गुण अनन्त परिणाम करि, नित्य नमें तुम संत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानन्तपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ९२९ ॥

रागद्वेषके नाशतें, नहीं पूर्व-संस्कार। निज सुभावमें थिर रहैं, अन्य वासना टार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वसस्कारनाशकाय नमः अर्घं ॥ ९३० ॥

गुण चतुष्टमें वृद्धता, भई अनन्तानन्त। तुम सम और न जगतमें, सदा रहो जयवंत ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंन्तचतुष्टयवृद्धाय नमः अर्घं ॥ ९३१ ॥

आर्ष कथित उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त। सो सब नाम कहो तुम्हीं, शिवमारगके सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रियवचनाय नमः अर्घं ॥ ९३२ ॥

महाबुद्धिके धाम हो, सूक्ष्म शुद्ध अवाच्य। चार ज्ञान नहिं गम्य हो, वस्तुरूप सों साच्य ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वचनीयाय नमः अर्घं ॥ ९३३ ॥

सूक्ष्मतें सूक्ष्म विषै, तुमको है परवेश। आपै सूक्ष्म रूप हो, राजत निज परदेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अणीयसे नमः अर्घं ॥ ९३४ ॥

कर्म प्रबन्ध सु घन-पटल, ताकी छांय निवार। रविघन ज्योति प्रगट भई, पूरणता विधि धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनणुपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ९३५ ॥

निज प्रदेशमें थिर सदा, योग निमित्त निवार। अचल शिवालयके विषैं, तिष्ठैं सिद्ध अपार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्थेयसे नमः अर्घं ॥ ९३६ ॥

सन्तन मन प्रिय हो अती, सज्जन वल्लभ जान। मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठाय नमः अर्घं ॥ ९३७ ॥

काल अनन्तानन्त लों, करें शिवालय वास । अव्यय अविनाशी सुथिर, स्वयं जोति परकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्थिरजिनाय नमः अर्घं ॥ ६३८ ॥

स्वै आतममें वास है, रुलत नहीं संसार । ज्योंके त्यों निश्चल सदा, वंदत भवदधि पार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मतत्वनिष्ठाय नमः अर्घं ॥ ६३९ ॥

सुभग सरावन योग्य हैं, उतम भाव धराय । तीन लोकमें सार है, मुनिजन वंदित पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठभावधारकजिनाय नमः अर्घं ॥ ६४० ॥

सबके अग्रेसर भये, सबके हो सिरताज । तुमसे बड़ा न और है, सबके कर हो काज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठाय नमः अर्घं ॥ ६४१ ॥

स्व प्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य भाव विधि नाश । इष्टानिष्ट निमित धरैं, निज आनन्द विलास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कम्पप्रदेशजिनाय नमः अर्घं ॥ ६४२ ॥

उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सुन्याय सुलब्ध । तिन सबके स्वामी नमूं पूरण सुखी सु अब्ध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमक्षमादिगुणाब्धिजिनाय नमः अर्घं ॥ ६४३ ॥

महा कठिन दुःशक्य है, यह संसार निकास । तुम पायो पुरुषार्थ करि, लहो स्वलब्धि अवास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यपादजिनाय नमः अर्घं ॥ ६४४ ॥

परमारथ निज गुण कहैं, मोक्ष प्राप्तमें होय । स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगुणनिधानाय नमः अर्घं ॥ ६४५ ॥

पर निमित्त या भेद करि, या उपचरित कराय । सो तुममें सब लय भए, मानों सुप्त कहाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहारसुपुप्ताय नमः अर्घं ॥ ६४६ ॥

स्वै पदमें नित रमन है, अप्रमाद अधिकाय । निज गुण सदा प्रकाश है, अतुल बली नमूं पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिजागरूकाय नमः अर्घं ॥ ६४७ ॥

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे परकी साथ । निर्भय सदा सुखी भये, वन्दूं नमि निज माथ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिसुस्थिताय नमः अर्घं ॥ ६४८ ॥

कहे हुवे हो नेमसैं, परमाराध्य अनादि । तुम महातमा जगतके, और कुदेव कुवादि ॥

ॐ ह्रीं अर्हं उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घं ॥ ६४९ ॥

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार । तिसके तुम अध्याय हो, अर्थ प्रकाशनहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्वज्ञानानुकूलजिनाय नमः अर्घं ॥ ६५० ॥

ना काहूंसो जन्म हो, ना काहूसों नाश । स्वयंसिद्ध विन-पर-निमित, स्वयंस्वरूप परकाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमाय नमः अर्घं ॥ ६५१ ॥

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश । तेजरूप उत्सव मई, पाप-तिमिरको नाश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमेयमहिम्ने नमः अर्घं ॥ ६५२ ॥

रागादिक मल को हरैं, तनक नहीं अनवास । महा विशुद्ध अत्यन्त हैं, हरो पाप-अहि-डांस ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशुद्धाय नमः अर्घं ॥ ६५३ ॥

स्वयंसिद्ध भरतार हो, शिव कामिनि के संग । रमण भाव स्वै योग में, मानो अति आनंद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिस्वयंवराय नमः अर्घं ॥ ६५४ ॥

विविध प्रकार न धरत हैं, हैं अजन्म अव्यक्त । सूक्ष्म सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सुव्यक्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नमः अर्घं ॥ ६५५ ॥

मोक्षरूप शुभ वासके, आप मार्ग निरखेद । भविजन सुलभ गमन करैं, जगत वासको छेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवपुरीपांथाय नमः अर्घं ॥ ६५६ ॥

गुणसमूह अत्यन्त है, कोइ न पावै पार । थकित रहे श्रुत केवली, निजबल कथन अगार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनतगुणसमूहजिनाय नमः अर्घं ॥ ६५७ ॥

इक अवगाह प्रदेशमें, हो अवगाह अनन्त । पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान अनन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परउपाधिनिग्रहकारकजिनाय नमः अर्घं ॥ ६५८ ॥

स्वयसिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान । कर्त्तादिक लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंसिद्धजिनाय नमः अर्घं ॥ ६५९ ॥

हो प्रछन्न इन्द्रिय अगम, प्रगट न जाने कोय । सकल अगुण को लय कियो, निज आतमसे खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रियागम्यजिनाय नमः अर्घं ॥ ६६० ॥

निज गुण करि निज पोषियो, सकल क्षुद्रता त्याग । पूरण निजपद पाय करि, तिष्ठत हो बड़भाग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्टाय नमः अर्घं ॥ ६६१ ॥

ब्रह्मचर्य पूरण धरैं, निजपद रमता धार। सहस अठारह भेद करि, शील सुभाव सु सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशसहस्रशीलेश्वराय नमः अर्घं ॥ ६६२ ॥

महा पुण्य शिवपदकमल, ताके दल विकसान। मुनि मन भ्रमर रमण सुथल, गन्धानन्द महान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यसंकुलाय नमः अर्घं ॥ ६६३ ॥

मति श्रुत अवधि त्रिज्ञान युत, स्वयंबुद्ध भगवान। कृत युगमें मुनिव्रत धरो, शिव साधक परधान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्रताग्रयुग्याय नमः अर्घं ॥ ६६४ ॥

परम शुक्ल शुभ ध्यान में, तुम सेवन हितकार। संत उपासक आपके, कर्मबन्ध छुटकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमशुक्लध्यानिने नमः अर्घं ॥ ६६५ ॥

खारवारि इस जलधिको, शीघ्र कियो तुम अन्त। गोखुरकार उलंघियो, धरो स्व भुज बलवन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं संसारसमुद्रतारकजिनाय नमः अर्घं ॥ ६६६ ॥

एक समय में गमन कर, कियो शिवालय वास। काल अनन्त अचल रहो, मेटो जग भ्रम त्रास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रेपिष्ठाय नमः अर्घं ॥ ६६७ ॥

पंचाक्षर लघु जापमें, जितना लागे काल। अन्तिम पाया शुक्ल का, ध्याय वसे जग भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पचलघ्वक्षरस्थितये नमः अर्घं ॥ ६६८ ॥

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, जबतक मोक्ष न होय। सर्व प्रकृति तिथि मेटकें, पहुंचे शिवपुर सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशप्रकृतिस्थितिविनाशकजिनाय नमः अर्घं ॥ ६६९ ॥

तेरह विधि चारित्रके, तुम हो पूरण शूर। निज पुरुषारथ करि लियो, शिवपुर आनन्द पूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशचारित्रपूरणाय नमः अर्घं ॥ ६७० ॥

निज सुखमें अन्तर नहीं, परमों हानि न होय। स्वस्थ रूप परदेश जिन, तिन पूजत हूं सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्याभेद्यजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७१ ॥

निज पूजनतैं देत हो, शिव संपति अधिकाय। यातैं पूजन योग्य हो, पूजूं मन वच काय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवदातृजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७२ ॥

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत। नमूं तुम्हैं जयवंत हो, धार सु उरमें प्रीति ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजयजिनाय नमः अर्घं ॥ ६७३ ॥

यग विधान में जजत ही, आप मिले निधि रूप। तुम समान नहिं और धन, हरत दरिद दुख रूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नमः अर्घं ॥ ६७४॥

लोकोत्तर संपद विभव, है सर्वस्व अथाय। तुमसे अधिक न और हैं, सुख विभूति शिवराय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घपरिग्रहाय नमः अर्घं ॥ ६७५ ॥

तुमरो आह्वानन यजन, प्रासुक विधिसे योग। त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत पर्म सुख भोग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घहेतवे नमः अर्घं॥ ६७६ ॥

एक देश जिनराज हैं, सर्व देश जिनराज। भव तन भोग विरक्तता, निर्ममत्व सुख साज ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिष्पृहाय नमः अर्घं ॥ ६७७ ॥

परदुखमें दुख हो जहां, मोह प्रकृतिके द्वार। दया कहै तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्मोहाय नमः अर्घं ॥ ६७८ ॥

स्वयंबुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग। विन शिक्षा शिवमार्गको, साधो हो धरि योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नमः अर्घं ॥ ६७९ ॥

तुम एकत्वान्यत्व हो, परसों नहिं सम्बन्ध। स्वयंसिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रबंध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परसम्बन्धरहिताय नमः अर्घं ॥ ६८० ॥

काहूको नहिं यजन करि, गुरुका नहिं उपदेश। स्वयंबुद्ध स्वैशक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्ष्याय नमः अर्घं ॥ ६८१ ॥

तुम त्रिभुवनके पूज्य हो, यजो न काहू और। निज हित में रत हो सदा, पर निमित्तको छोर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनपूज्याय नमः अर्घं ॥ ६८२ ॥

अरहन्तादि उपासना, मोह उदय सों होय। स्वयं ज्ञानमें लय भए, मोह कर्मको खोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नमः अर्घं ॥ ६८३ ॥

गौण रूप परिणाम हैं, मुख ध्रुवता गुण धार। अक्षय अविनश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयाय नमः अर्घं ॥ ६८४॥

सूक्षम शुद्ध स्वभाव है, लहै न गणधर पार। इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उर धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नमः अर्घं॥ ६८५॥

अचल शिवालयके विषैं, टंकोत्कीर्ण समान। सदा विराजो सुख सहित, जगत भ्रमणको हान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगमकाय नमः अर्घं ॥ ९८६ ॥

रमण योग छद्मस्थ के, नाहिं अलिंग सरूप। पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरम्याय नमः अर्घं ॥ ९८७ ॥

पर पदार्थ इच्छुक नहीं, इष्टानिष्ट निवार। सुथिर रहो निज आत्ममें, वन्दत हूं हित धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरमकाय नमः अर्घं ॥ ९८८ ॥

जाको पार न पाइयो, अवधि रहित अत्यन्त। सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घं ॥ ९८९ ॥

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावैं निज पद सार। महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत हैं सुखकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महायोगीश्वराय नमः अर्घं ॥ ९९० ॥

भाव शुद्ध परमात्मा, द्रव्य शुद्ध विन देह। कर्म वर्गणा नहिं लिपैं, पूजत हूं धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घं ॥ ९९१ ॥

पंच प्रकार शरीरको, मूल कियो विध्वंश। स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहि अंश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदेहाय नमः अर्घं ॥ ९९२ ॥

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार। सो पंचमगति शिवमई, पायो तुम निरधार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भवाय नमः अर्घं ॥ ९९३ ॥

सकल इन्द्रियां व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय। सब द्रव्यनिको ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैकविदे नमः अर्घं ॥ ९९४ ॥

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान। अन्य विभाव विभव नहिं, महा शुद्धता जान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जीवधनाय नमः अर्घं ॥ ९९५ ॥

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध। महाशुद्ध निज आत्ममय, सदा रहो निरबाध ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धपरमात्मने नमः अर्घं ॥ ९९६ ॥

लोक शिखरपर थिर भए, ज्यों मन्दिर मणि कुम्भ। निज शरीर अवगाहमें, अचल स्थान अलम्भ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घं ॥ ९९७ ॥

सहज निरामय भेद विन, निराबाध निस्संग । एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अंग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वंदाय नमः अर्घं ॥ ९९८ ॥

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुणके सु अनन्त । तुममें पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तगुणाय नमः अर्घं ॥ ९९९ ॥

पर मिलाप नहिं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप । चयोपशम ज्ञानी तुम्हें, जानत नाहिं स्वरूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरूपाय नमः अर्घं ॥ १००० ॥

चमा आत्मको भाव है, क्रोध कर्मसों घात । सो तुम कर्म खिपाइयो, चमा सु भाव धरात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घं ॥ १००१ ॥

शील सुभाव सु आतम को, चोभ रहित सुखदाय । निर–आकुलता धार है, वंदूं तिनके पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशीलाय नमः अर्घं ॥ १००२ ॥

शशि स्वभाव ज्यों शांति धर, औरन शांति धराय । आप शांति पर शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घं ॥ १००३ ॥

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचण्ड । धरो अनन्त स्ववीर्यको, निजपद सुथिर अखण्ड ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यात्मकाय नमः अर्घं ॥ १००४ ॥

लोकालोक विलोकियो, संशय विन इकवार । खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकज्ञाय नमः अर्घं ॥ १००५ ॥

निरावर्ण स्वे गुण सहित, निजानन्द रस भोग । अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घं ॥ १००६ ॥

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निजपद सार । ज्यों रविविंब प्रकाश कर, घटपट सहज निहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्येयगुणाय नमः अर्घं ॥ १००७ ॥

कवलाहारी कहत हैं, महामूढ मतिमंद । असत असाता पीरविन, आप भये सुखकंद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशनदग्धाय नमः अर्घं ॥ १००८ ॥

लोक शीश छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप । बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमणये नमः अर्घं ॥ १००९ ॥

महागुणनकी रास हो, लोकालोक प्रजन्त। सुर मुनि पार न पावते, तुम्हें नमें नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणप्राप्ताय नमः अर्घं ॥ १०१० ॥

परम सु गुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहिं लेश। जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घं ॥ १०११ ॥

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार। सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वंदनहार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षये नमः अर्घं ॥ १०१२ ॥

भूत भविष्यत् कालको, कभी न होवे अंत। नित प्रति शिवपद पायकर, होत अनन्तानन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥ १०१३ ॥

निर्भय निरआकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद। काहू विधि घबराट नहिं, निज आनन्द अभेद ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घं ॥ १०१४ ॥

जो गुण गुणी सुभेद करि, सो जडमती अजान। निज गुण गुणी सु एकता, स्वयंबुद्ध भगवान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घं ॥ १०१५ ॥

निरावरण निज ज्ञानमें, सर्व स्पष्ट दिखाय। संशय विन नहिं भरम है, सुथिर रहो सुखपाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानाय नमः अर्घं ॥ १०१६ ॥

राग द्वेषके अंशमें, मत्सर भाव कहात। सो तुम नासो मूल ही, रहै कहां सो पात ॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घं ॥ १०१७ ॥

अणुवत लोकालोक है, जाके ज्ञान मझार। सो तुम ज्ञान अथाह है, वन्दूं मैं चित धार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तज्ञानाय नमः अर्घं ॥ १०१८ ॥

हस्त रेख सम देख हो, लोकालोक सरूप। सो अनन्त दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तदर्शनाय नमः अर्घं ॥ १०१९ ॥

तीन लोकका पूज्यपन, प्रगट कहै दिखलाय। तीन लोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरवासिनेनमः अर्घं ॥ १०२० ॥

निजपद में लवलीन हैं, निजरस स्वाद अघाय। परसों यह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहिं पाय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घं ॥ १०२१ ॥

कर्म प्रकृतिको मूल नहिं, द्रव्य रूप यह भाव। महा स्वच्छ निर्मल दिपै, ज्यों रवि मेघ अभाव ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घं ॥ १०२२ ॥

हीन अभाव न शक्ति है, कर्मबन्ध को नाश। उदय भए तुम गुण सकल, महा विभव की राश ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घं ॥ १०२३ ॥

पाप रूप दुख नाशियो, मोक्ष रूप सुख रास। दासन प्रति मंगल करण, स्वयं 'सन्त' है दास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामंगलात्मकजिनाय नमः अर्घं ॥ १०२४ ॥ सपूर्णम्।

दोहा।

कहैं कहांलो तुम सुगुण, प्रशमात्र नहिं अन्त। मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजैं नित सन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णस्वगुणजिनाय नमः पूर्णार्घम्।

(यहां पर 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' इस मंत्रको १०८ वार जपना चाहिये)

अथ जयमाला।

दोहा।

होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहिं होय। काष्ठ पांवसैं अनल थल, नाप सकै नहि कोय ॥ १ ॥

सूक्षम शुद्ध स्वरूप का, कहना है व्यवहार। सो व्यवहारातीत है, यातैं हम लाचार ॥ २ ॥

यह जो हम कछु कहत हैं, शांति हेत भगवंत। वार वार थुति करन में, नहिं पुनरुक्त भनन्त ॥ ३ ॥

पद्धड़ी छन्द मात्रा-१६।

जय स्वयशक्ति आधार योग, जय स्वयंस्वस्थ आनंद भोग।
जय स्वयंप्रकाश आभास भास, जय स्वयंसिद्ध निजपद निवास ॥ ४ ॥
जय स्वयंबुद्ध संकल्प टार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आचार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार ॥ ५ ॥
जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।

जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग ॥ ६ ॥
जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्वज्ञ मान ॥ ७ ॥
जय सन्तन मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार।
जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवि यश कथनन करि अघाय ॥ ८ ॥
तुम महा तीर्थ भवि तरण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत।
तुम महामन्त्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहो सार ॥ ९ ॥
तुम महाशास्त्रके मूल जेय, तुम महा तत्त्व हैं उपादेय।
तिहुं लोक महामंगल सुरूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप ॥ १० ॥
तिहुं लोक शरण अघ-हर महान, भवि देत परम पद सुख निधान।
संसार महासागर अथाह, नित जन्म मरण धारा प्रवाह ॥ ११ ॥
सो काल अनन्त दियो विताय, तामें झकोर दुख रूप खाय ॥
मो दुखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान ॥ १२ ॥
तुम ही हो इस पुरुषार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग।
सुर नर पशु दास कहैं अनन्त, इनमेंसे भी इक जान 'सन्त' ॥ १३ ॥

घत्ता—कवित्त।

जय विघन जलधि जल, हनन पवन बल, सकल पाप मल जारन हो।
जय मोह उपल हन वज्र, असल दुख, अनिल ताप जल कारन हो ॥
ज्यूं पंगु चढ़ै गिर, गुंग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरै।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अन्त सन्त परिणाम करै ॥
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा इति पूर्णार्घम्।

दोहा।

तीन लोक चूडामणी, सदा रहो जयवन्त। विघ्न हरण मङ्गल करन, तुम्हे नमें नित सन्त ॥ इत्याशीर्वादः ॥

अथ पूर्ण आशीर्वादः।

अडिल्ल छन्द।

पूरण मङ्गल रूप महा यह पाठ है, सरस सुरुचि सुखकार भक्तिका ठाठ है। शब्द अर्थ में चूक होय तो हो कहीं थुति वाचक सब शब्द अर्थ यामें सही ॥ १ ॥ जिन गुण करण आरम्भ हास्य को धाम है, वायस का नहि सिंधु तीरण काम है। यें भक्तनिकी रीति सनातन है यही, क्षमा करो भगवन्त शांति पूरण मही ॥ २ ॥

इति कविवर सन्तलालजी कृत श्री सिद्धचक्रविधान समाप्त।

इसके पीछे चौवीस तीर्थंकरपूजा अथवा सरस्वती पूजा करनी चाहिये फिर शान्तिपाठ, विसर्जन करके पाठ समाप्त करें।

❀ हवन विधि ❀

हवन के लिये किसी काफी लंबे चौड़े स्थान मे तीन कुण्ड बनावे वे कुंड इस प्रकार हों–प्रथम तीर्थंकरकुड एक अरत्नि (मुष्टि बंधे हाथ को अरत्नि कहते हैं) लंबा इतना ही चौड़ा चौकोर हो और इतना ही गहरा हो इसकी तीन कटनी हों पहली ५ अंगुल की ऊंची, चौड़ी, दूसरी ४ अंगुल की, तीसरी ३ अंगुल की हो। इस कुंड के दक्षिण की ओर त्रिकोण कुंड उसी प्रमाण से लंबा चौड़ा गहरा हो तथा उत्तर की ओर गोल कुंड उतनी ही लंबाई चौड़ाई गहराई वाला हो प्रत्येक कुंड का एक दूसरे से अन्तर चार चार अंगुल का होना चाहिये। इन कुण्डों के चारों ओर कटनियों पर ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं लिखना चाहिये।

ये कुंड कच्ची ईंटों से एकदिन पहले तयार करा लेने चाहिये और इन्हें अच्छे सुन्दर रंगों से रङ्ग देना चाहिये भीतर का भाग पीली या सफेद मिट्टी मे पोत देना चाहिये–कुंडों की तीनों कटनियों पर चार २पतली खूंटी गाड़े या छोटे छोटे गिलास रक्खे जिनमें कलावा लपेटा जा सके। कलावा लपेटते समय यह मन्त्र बोलना चाहिये।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचवर्णसूत्रेण त्रीन् वारान् वेष्टयामि।

इस प्रकार एक खूंटी से दूसरी खूंटी और दूसरी से तीसरी चौथी खूंटी तक कलावा लपेटे।

कुण्डों के पास दक्षिण या पश्चिम में एक वेदी लगावे जैसे पाठ के मांडले के पास लगाई थी उसमें सिद्धयंत्र विराजमान करे। वेदी के पास एक चौकी रक्खे जिस पर मङ्गल कलश रक्खा जाय। तथा एक बडी संदली पर एक बडा और कुछ छोटे कलश (गिलास) जल से भरे रखकर मंत्र द्वारा जल शुद्ध करे

जल शुद्धि मंत्र

हाथ में चंदन लेकर कलशों पर छिड़के।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमो ऽर्हते भगवते पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिपुण्डरीकमहापुण्डरीकगंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदापयोधिशुद्धजलसुवर्णघटप्रक्षालितनवरत्नगंधाक्षतपुष्पार्चितमामोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झ्रौं झ्रौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा।

इस मंत्र से जल शुद्धि करे।

वेदी के पास जो चौकी है उस पर अक्षत बिछाकर बड़ा मङ्गल कलश स्थापन करे तब यह श्लोक और मंत्र पढ़े।

वेद्या मूले पंचरत्नोपशोभं, कंठे लंबान् माल्यमादर्शयुक्तं।
माणिक्याभं कांचनं पूगदर्भस्रक्वासोभं सद्घटं स्थापयेद् वै ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मङ्गलकलशस्थापनं करोमि स्वाहा।

अब चार छोटे कलश कुंडों पर स्थापन करे तब यह मंत्र पढ़े।

ॐ ह्रीं स्वस्तये चतुःकलशान् संस्थापयामि स्वाहा।

फिर कुंडों पर चार चार दीपक जलाकर धरे तब यह मन्त्र पढ़े

ॐ ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं संस्थापयामि

फिर पूजा की सामग्री तथा हवन सामग्री शुद्ध करे तब यह मंत्र पढ़े

ॐ ह्रीं पवित्रतरजलेन शुद्धिं करोमि स्वाहा

फिर डाभ के पूले से हवन की भूमि को झाड़े तब यह मन्त्र पढ़े

ॐ ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्नविनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा

फिर डाभ का पूला जल में भिगोकर पृथ्वी पर छिड़के तब यह मंत्र पढ़े

ॐ ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं तं पं स्वं भं भं यं क्षः फट् स्वाहा

फिर यन्त्र का प्रक्षाल करे तब यह मंत्र पढ़े

ॐ भूर्भुवः स्वरिह एतद्विघ्नौघवारकं यन्त्रमहं परिषिंचयामि

फिर यन्त्र की पूजा करे। इसके बाद अग्निकुंड में सांथिये बनावे या ॐ लिखे। पीछे कुण्ड में कपूर और डाभ के पूले से अग्नि स्थापित करे तब यह मन्त्र पढ़े।

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं अग्निं संस्थापयामि स्वाहा।

फिर कुण्डों में एक एक अर्घ दे। प्रथम चतुष्कोण की पूजा

श्रीतीर्थनाथपरिनिर्वृतिपूज्यकाले, आगत्य वह्निसुरपा मुकुटोल्लसद्भिः।

वह्निव्रजैर्जिनपदेऽहमुदारभक्त्या, देहुस्तदग्निमहमर्चयितुं दधामि ॥

ॐ ह्रीं प्रथमे चतुरस्र तीर्थंकरकुण्डे गार्हपत्याग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

गणाधिपानां शिवयातिकालेऽ, ग्नीन्द्रोत्तमाङ्गस्फुरदग्निरेषः ।
संस्थाप्य पूज्यः स मयाह्वनीयो, विधानशान्तौ विधिना हुताशः ॥

ॐ ह्रीं द्वितीयेवृत्ते गणधरकुण्डे आह्वनीयाग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीदक्षिणाग्निः परकेवलिस्व–, शरीरनिर्वाणनुताग्निदेव– ।
किरीटसंस्फुर्यदसौ मयापि, संस्थाप्य पूज्यो हि विधानशान्त्यै ॥

ॐ ह्रीं त्रिकोणे सामान्यकेवलिकुण्डे दक्षिणाग्नयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

इसके पश्चात् निम्नलिखित मंत्रों की आहुति देनी चाहिये ।

पीठिका मन्त्र

ॐ सत्यजाताय नमः ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥ २ ॥ ॐ परमजाताय नमः ॥ ३ ॥ ॐ अनुपमजाताय–नमः ॥ ४ ॥ ॐ स्वप्रधानाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अचलाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ अक्षयाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ अव्याबाधाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ अनन्तज्ञानाय नमः ॥ ९ ॥ ॐ अनन्तदर्शनाय नमः ॥ १० ॥ ॐ अनन्तवीर्याय नमः ११ ॐ अनन्तसुखाय नमः ॥ १२ ॥ ॐ नीरजसे नमः ॥ १३ ॥ ॐ निर्मलाय नमः ॥ १४ ॥ ॐ अछेद्याय नमः १५ ॐ अभेद्याय नमः ॥ १६ ॥ ॐ अजराय नमः ॥ १७ ॥ ॐ अमराय नमः ॥ १८ ॥ ॐ अप्रमेयाय नमः ॥ १९ ॥ ॐ अगर्भवासाय नमः ॥ २० ॥ ॐ अक्षोभाय नमः ॥ २१ ॥ ॐ अविलीनाय नमः ॥ २२ ॥ ॐ परमधनाय–नमः ॥ २३ ॥ ॐ परमकाष्ठायोगरूपाय नमः ॥ २४ ॥ ॐ लोकाग्रवासिने नमो नमः ॥ २५ ॥ ॐ परमसिद्धेभ्यो-नमोनमः ॥ २६ ॥ ॐ अर्हत्सिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ २७ ॥ ॐ केवलिसिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ २८ ॥ ॐ अंतकृत्सिद्धेभ्यो-नमोनमः ॥ २९ ॥ ॐ परम्परासिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ ३० ॥ ॐ अनादिपरम्परासिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ ३१ ॥ ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमोनमः ॥ ३२ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्य निर्वाणपूजार्ह अग्नींद्राय स्वाहा ॥ ३३ ॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

जातिमन्त्र

ॐ सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥ २ ॥ ॐ अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये ॥ ३ ॐ अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये ॥ ४ ॥ ॐ अनादिगमनस्यशरणं प्रपद्ये ॥ ५ ॥ ॐ अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥६ ॐ रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्य ॥ ७ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते सरस्वति सरस्वति स्वाहा ॥ ८ ॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु स्वाहा ॥

निस्तारकमन्त्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ षट्कर्मणे स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ ग्रामपतये स्वाहा ॐ अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ स्नातकाय स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥ ७ ॥ ॐ देवब्राह्मणाय स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥ ९ ॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥ १० ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा ॥ ११ ॥ सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा

ऋषिमन्त्र

ॐ सत्यजाताय नमः ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥ २ ॥ ॐ निर्ग्रन्थाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ वीतरागाय नमः ॐ महाव्रताय नमः ॥ ५ ॥ ॐ त्रिगुप्ताय नमः ॥ ६ ॥ ॐ महायोगाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ विविधयोगाय नमः ॥ ८ ॐ विविधर्द्धये नमः ॥ ९ ॥ ॐ अङ्गधराय नमः ॥ १० ॥ ॐ पूर्वधराय नमः ॥ ११ ॥ ॐ गणधराय नमः ॥ १२ ॐ परमर्षिभ्यो नमो नमः ॥ १३ ॥ ॐ अनुपमजाताय नमो नमः ॥ १४ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे भूपते भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ॥ १५ ॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

सुरेन्द्र मंत्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ दिव्यार्चि-जाताय स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ सौधर्माय स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ कल्पाधिपतये स्वाहा ॥ ७ ॥

ॐ अनुचराय स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ परंपरेन्द्राय स्वाहा ॥ ९ ॥ ॐ अर्हमिन्द्राय स्वाहा ॥ १० ॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥ १२ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे कल्पपते कल्पपते दिव्यमूर्ते दिव्यमूर्ते वज्रनामन् वज्रनामन् स्वाहा ॥ १३ ॥ सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु, स्वाहा ।

परमराजादि मंत्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ विजयार्च्य-जाताय स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ परमजाताय स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा ॥ ७ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेजः उग्रतेजः दिशांजन दिशांजन नेमिविजय नेमिविजय स्वाहा ॥ ९ ॥ सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु, स्वाहा ।

परमेष्ठि मन्त्र

ॐ सत्यजाताय नमः ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥ २ ॥ ॐ परमजाताय नमः ॥ ३ ॥ ॐ परमार्हताय नमः ॥ ४ ॥ ॐ परमरूपाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ परमतेजसे नमः ॥ ६ ॥ ॐ परमगुणाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ परमस्थानाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ परमयोगिने नमः ॥ ९ ॥ ॐ परमभाग्याय नमः ॥ १० ॥ ॐ परमर्द्धये नमः ॥ ११ ॥ ॐ परम प्रसादाय नमः ॥ १२ ॥ ॐ परमकांक्षिताय नमः ॥ १३ ॥ ॐ परमविजयाय नमः ॥ १४ ॥ ॐ परमविज्ञानाय नमः ॐ परमदर्शनाय नमः ॥ १६ ॥ ॐ परमवीर्याय नमः ॥ १७ ॥ ॐ परमसुखाय नमः ॥ १८ ॥ ॐ परमसर्वज्ञाय नमः ॥ १९ ॥ ॐ अर्हते नमः ॥ २० ॥ ॐ परमेष्ठिने नमः ॥ २१ ॥ ॐ परमनेत्रे नमो नमः ॥ २२ ॥ ॐ सम्यग्-दृष्टे सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्यविजय त्रैलोक्यविजय धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते धर्मनेमे धर्मनेमे स्वाहा ॥ २३ ॥

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु, स्वाहा ।

धूपैः सन्धूपितानेक-कर्मभिर्धूपदायिनः । अर्चयामि जिनाधीश-सदागमगुरून् गुरून् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमज्जिनश्रुतगुरुभ्यो नमः धूपम् ।

सुरभीकृतदिग्व्रातैः धूपधूमैर्जगत्प्रियैः । यजामि जिनसिद्धेश-सूर्युपाध्यायसद्गुरून् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः धूपम् ।

मृद्वग्निसंगमसमुज्ज्वलितोरुधूमैः, कृष्णागुरुप्रभृतिसुन्दरवस्तुधूपैः ।

प्रीत्या नटद्भिरिव ताण्डवनृत्यमुच्चैः, कर्मारिदारुदहनं जिनमर्चयामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिने नम धूपम् ।

गोत्रत्रयसंभवसततसंभव–सद्गुरुल्लघुतारूपपरम् । सर्गमसर्गमपीतमनुत्तण–मुज्झितसर्गासर्गभरम् ॥

कृष्णागुरुधूपैः सुरभितभूपैर्धूमैः स्पष्टहरिद्रूपै–र्यायज्मः सिद्धं सर्वविशुद्धं बुद्धमरुद्धं गुणरुद्धम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने नमः धूपम् ।

हुत्वास्वमप्यगुरुभिः सुरभीकृताशै–रग्नौ समुच्छलितसंभृतवृन्दधूपैः ।

सधूपयामि चरणं शरणं शरण्यं, पुण्यं भवभ्रमहरं गणिनां मुनीनाम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं आचार्यपरमेष्ठिने नमः धूपम् ।

सधूपिताखिलदिशो घनशङ्कयेह, बर्हिव्रजं स्वनटनादिव नर्तयद्भिः ।

मृद्वग्निसंगतिततागुरुधूपधूमैः, श्रीपाठकं क्रमयुगं वयमाह्वयामः ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं उपाध्यायपरमेष्ठिने नमः धूपम् ।

स्वमग्नौ विनिक्षिप्य दौर्गंध्यबंधम्, दशाशास्यमुच्चैः करोति त्रिसंध्यम् ।

तदुद्दामकृष्णागुरुद्रव्यधूपैः, यजे साधुसंघं नटद्व्यक्तरूपैः ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमेष्ठिने नमः धूपम् ।

धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनः । वृषभादिजिनाधीशान्, वर्द्धमानान्तकान्यजे ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नमः धूपम् ।

इसके पश्चात् जिस मन्त्र की जितनी जाप की है उसके दशमांश उस मन्त्र की आहुति देनी चाहिये ।

शान्तिधारा

आचार्य हाथ में कलश लेकर जल की धारा देता हुआ नीचे लिखा पुण्याहवाचन पढ़े ।

ॐ पुण्याहं पुण्याहं । लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाणसागरमहासाधुविमलप्रभशुद्धाभश्रीधरसुदत्तामलप्रभोद्धराग्निसन्मतिशिवकुसुमांजलिशिवगणोत्साहज्ञानेश्वरपरमेश्वरविमलेश्वरयशोधरकृष्णमतिज्ञानमतिशुद्धमतिश्रीभद्रकांताश्चेति चतुर्विंशतिभूतपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ १ ॥

ॐ संप्रतिकालश्रेयस्करस्वर्गावतरणजन्माभिषेकपरिनिष्क्रमणकेवलज्ञाननिर्वाणकल्याणविभूषितमहाभ्युदयाः श्रीवृषभाजितशंभवाभिनंदनसुमतिपद्मप्रभसुपार्श्वचंद्रप्रभपुष्पदंतशीतलश्रेयोवासुपूज्यविमलानंतधर्मशांतिकुंथ्वरमल्लिमुनिसुव्रतनमिनेमिपार्श्ववर्द्धमानाश्चेति वर्तमानचतुर्विंशतिपरदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ २ ॥

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवाः महापद्मसुरदेवसुप्रभस्वयंप्रभसर्वायुधजयदेवोदयदेवप्रभादेवोदङ्कदेवप्रश्नकीर्तिजयकीर्तिपूर्णबुद्धनिःकषायविमलप्रभवहलनिर्मलचित्रगुप्तसमाधिगुप्तस्वयंभूकंदर्पजयनाथविमलनाथदिव्यवागनंतवीर्याश्चेतिचतुर्विंशतिभविष्यत्परमदेवाश्च वः प्रीयंतां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ३ ॥

ॐ त्रिकालवर्तिपरमधर्माभ्युदयाः सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातकस्वयंप्रभऋषभेश्वरानंतवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्राननचंद्रबाहुभुजंगेश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रजयदेवाजितवीर्याश्चेति पंचविदेहक्षेत्रविहरमाणा विंशतिपरमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयंताम् ॥ धारा ॥ ४ ॥

ॐ वृषभसेनादिगणधरदेवाः वः प्रीयंतां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ५ ॥

ॐ कोष्ठबीजपादानुसारिबुद्धिसंभिन्नश्रोतृप्रज्ञाश्रवणाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ६ ॥

ॐ आमर्षक्ष्वेडजल्लविड्उत्सर्गसर्वौषधिऋद्धयश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ७ ॥

ॐ जलफलजंघातन्तुपुष्पश्रेणिपत्राग्निशिखाकाशचारणाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ८ ॥

ॐ आहाररसवदक्षीणमहानसालयाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ९ ॥

ॐ उग्रदीप्ततप्तमहाघोरानुपमतपसश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ १० ॥

ॐ मनोवाक्कायबलिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ ११ ॥

ॐ क्रियाविक्रियाधारिणश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ १२ ॥

ॐ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ १३ ॥

ॐ अंगांगवाह्यज्ञानदिवाकराः कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगंबरदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥ १४ ॥

इह वाऽन्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ताः जिनधर्मपरायणा भवंतु ॥ धारा ॥ १५ ॥

दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु ॥ धारा ॥ १६ ॥

मातृपितृभ्रातृपुत्रपौत्रकलत्रसुहृत्स्वजनसंबंधिसहितस्य अमुकस्य...ते धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियशःप्रमोदोत्सवाः...... प्रवर्द्धंताम् ॥ धारा ॥ १७ ॥

तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । वृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । अविघ्नमस्तु । आयुष्यमस्तु । आरोग्यमस्तु । कर्मसिद्धिरस्तु । इष्टसंपत्तिरस्तु । काममांगल्योत्सवाःसन्तु । पापानि शाम्यंतु । घोराणि शाम्यंतु । पुण्यं वर्द्धतां । धर्मो वर्द्धतां । श्रीवर्द्धतां । कुलंगोत्रं चाभिवर्धेतां । स्वस्ति भद्रं चास्तु भ्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा । श्रीमज्जिनेन्द्रचरणारविंदेष्वानन्द-भक्तिः सदास्तु ।

॥ इति हवनविधान समाप्त ॥

❁ श्री मङ्गलाष्टक ❁

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभाः । भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधींदवः स्थायिनः ॥
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः । स्तुत्या योगिजनैश्च पंचगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ १ ॥

सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं । मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः ॥
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं । प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ २ ॥

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पंच ये । ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येष्टाविधाश्चारणाः ॥
पंचज्ञानधरास्त्रयोपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः । सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ ३ ॥

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे । चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हतां ।

शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो । निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवा कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ ४ ॥
ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः । जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु ।

इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे । शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ ५ ॥
यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो । यो जातः परनिष्क्रमेण विभवो य केवलज्ञानभाक् ॥

यः कैवल्यपुरःप्रवेशमहिमा संभावितःस्वर्गिभिः । कल्याणानि च तानि पंच सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ ६ ॥
जायन्ते जिनचक्रवर्त्तिबलभृद्भोगीन्द्रकृष्णादयो । धर्मादेव दिगंगनांगविलसच्छश्वद्यशश्चन्दनाः ॥

तद्धीना नरकादियोनिषु नरा दुःखं सहन्ते ध्रुवम् । स स्वर्गात्सुखरामणीयकपदं कुर्वन्तु ते मङ्गलं ॥ ७ ॥
सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते । संपद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः ॥

देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे । धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥ ८ ॥
इत्थं श्रीजिनमङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्प्रदं । कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः ॥

ये श्रृण्वन्ति पठंति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता । लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥ ९ ॥

❀ इति मङ्गलाष्टकं समाप्तम् ❀

❀ श्री सिद्धचक्र की आरती ❀

जय सिद्धचक्र देवा जय सिद्धचक्र देवा, करत तुम्हारी निश दिन मन से सुर नर मुनि सेवा ॥ जय सिद्धचक्र देवा ॥
ज्ञानावर्ण दर्शनावरणी मोह अंतराया, नाम गोत्र वेदनी आयु को नाशि मोक्ष पाया ॥ जय सिद्धचक्र देवा० ॥ १ ॥
ज्ञान अनंत अनंत दर्श सुख बल अनंतधारी, अव्याबाध अमूर्ति अगुरुलघु अवगाहन धारी ॥ जय सिद्धचक्र० ॥ २ ॥
तुम अशरीर शुद्ध चिन्मूरति स्वातम रसभोगी, तुम्हें जपे आचार्योपाध्याय सर्वसाधु योगी ॥ जय सिद्धचक्र० ॥ ३ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश सुरेश गणेश तुम्हें ध्यावें, भवि अलि तुम चरणाम्बुज सेवत निर्भयपद पावें ॥ जय सिद्ध० ॥ ४ ॥

संकट टारन अधम उधारन भव सागर तरणा, अष्ट दुष्ट रिपु कर्म नष्ट करि जन्म मरण हरणा ॥ जय सिद्ध० ॥ ५ ॥
दीन दुखी असमर्थ दरिद्री निर्धन तन रोगी, सिद्धचक्र को ध्याय भये ते सुर नर सुख भोगी ॥ जय सिद्ध० ॥ ६ ॥
डाकिनि शाकिनि भूत पिशाचिनि व्यंतर उपसर्गा, नाम लेत भगिजांय छिनकमें सब देवी दुर्गा ॥ जय सिद्ध० ॥ ७ ॥
वन रन शत्रु अग्निजल पर्वत विषधर पंचानन, मिटे सकल भय कष्ट करै जे सिद्धचक्र सुमिरन ॥ जय सिद्ध० ॥ ८ ॥
मैना सुन्दरि कियो पाठ यह पर्व अठाइनिमें, पति युत सात शतक कोढिन का गया कुष्ठ छिनमें ॥ जय सिद्ध० ॥ ९ ॥
कातिक फागुन साढ आठ दिन सिद्धचक्र पूजा, करै शुद्ध भावों से मक्खन लहैं न भव दूजा ॥ जय सिद्ध० ॥ १० ॥

॥ इति ॥

❀ भजन ❀

श्री सिद्धचक्र का पाठ करौ दिन आठ, ठाठ से प्रानी, फल पायो मैना रानी ॥ टेक ॥

मैना सुन्दरि इक नारी थी, कोढ़ी पति लखि दुखियारी थी, नहिं पड़े चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी ॥ फलपायो० ॥
जो पति का कष्ट मिटाऊंगी, तो उभय लोक सुख पाऊंगी, नहि अजागलस्तनवत निष्फल जिंदगानी ॥ फल पायो० ॥
इक दिवस गई जिन मन्दिर मे, दर्शन करि अति हर्षी उर में, फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी ॥ फल पायो०॥
बैठी मुनिको करि नमस्कार, निज निन्दा करती बार बार, भरि अश्रु नयन कही मुनि सो दुखद कहानी ॥ फलपायो०॥
बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो, नहिं रहे कुष्ठ की तन में नाम निशानी ॥ फल पायो० ॥
सुनि साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होंय झूठ मुनि के बैना, करि के श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी ॥ फलपायो० ॥
जब पर्व अठाई आया है, उत्सवयुत पाठ कराया है, सब के तन छिड़का यंत्र न्हवन का पानी ॥ फल पायो० ॥
गंधोदक छिड़कत वसु दिन में, नहिं रहा कुष्ठ किंचित तन में, भई सात शतक की काया स्वर्ण समानी ॥ फलपायो०॥
भव भोग भोगि योगेश भये, श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये, दूजे भव मैना पावे शिव रजधानी ॥ फल पायो० ॥
जो पाठ करैं मन वच तन से, वे छूटि जांय भव बंधन से, मक्खन मत करो विकल्प कहा जिन वानी ॥ फल पायो०॥

❀ संकीर्तन सिद्धचक्र विधान ❀

[चाल—रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम]

शिव रमणी वर सिद्ध महान, जय श्री सिद्धचक्र भगवान ।

जगसे मोह ममत्व निवारि, राग द्वेष तजि परिग्रह टारि । दुद्धर तप करि स्वातम ध्यान, जय श्रीसिद्धचक्र भगवान ॥ १ ॥

ज्ञान दर्शनावरणी नाशि, अंतराय मोहनी विनाशि । त्रेशठि हनि लहि केवल ज्ञान, जय श्री सिद्धचक्र भगवान ॥ २ ॥

दर्श ज्ञान बल सुक्ख अनंत, पाय चतुष्टय श्री अर्हंत । दे उपदेश जगत कल्यान, जय श्री सिद्धचक्र भगवान ॥ ३ ॥

चौदम गुण थानक मैं जाय, प्रकृति पचासी दई खिपाय । पायो अविचल मोक्ष स्थान, जय श्रीसिद्धचक्र भगवान ॥ ४ ॥

बीतें काल अनंतानंत, शिव-सुखकौ आवै नहिं अंत । अविगत अज अनंत अमलान, जय श्रीसिद्धचक्र भगवान ॥ ५ ॥

सब ज्ञाता सब द्रष्टा ईश, धनीनाथ स्वामी जगदीश । परमब्रह्म पूरन पर धान, जय श्री सिद्धचक्र भगवान ॥ ६ ॥

ध्यावै ब्रह्मा विष्णु महेश, नरपति सुरपति चन्द्र दिनेश । 'मक्खन' ते पावै निर्वान, जय श्री सिद्धचक्र भगवान ॥ ७ ॥

❀ भजन ❀

भाइयो मिलि करि कहौ जय सिद्धचक्रविधानकी, दुख मिटै संकट कटैं चिंता हटैं दुर्ध्यान की ।

जन्म मरणादिक चतुर्गति के दुखोंसे छूटि करि, कर्म सृष्टि विनष्ट हो, हो प्राप्ति मुक्तिस्थानकी ॥ १ ॥

चक्रधर–हलधर–गदाधर–वज्रधर–सुख भोगिके, सिद्धचक्र प्रसादसे पदवी मिले भगवानकी ॥ २ ॥

धनैश्वर्य प्रताप वैभव राज्य में हो मान्यता, दीर्घ आयु निरोग काया वृद्धि हो संतानकी ॥ ३ ॥

सिंधु रणमें शैल वनमें क्षिति गगन में डर न हो, तोप तेग कृपाणकी नहिं पीर तीर कमानकी ॥ ४ ॥

डाकिनी शाकिनि पिशाचनि व्यंतरीका भय नशै । भूत प्रेत चुडैलकी बाधा न होय मशानकी ॥ ५ ॥

हाथ हथकड़ियां पगोंकी बेड़ियां सब झड़ि पड़ैं । जेलखानेकी फटैं सब भित्तियां पापानकी ॥ ६ ॥

ईति–भीति–मरी–मृगी दुर्भिक्ष–भागै देशसे । आपदा मिटि जांय उल्कापात भूकम्पानकी ॥ ७ ॥

कुष्ट रोगी गलित तन अति घृणित मूरख बावला । हो निरोग शरीर सुन्दर प्राप्ति उत्तम ज्ञानकी ॥ ८ ॥

पाय नर भव सुकुल जिनवृष भक्तिसे पूजा करो । हो इसीसे प्राप्ति 'मक्खन' शिव सदन सोपान की ॥ ९ ॥

शुद्धि विधान, हवन विधान के संग्रहकर्ता तथा भजनों के रचयिता श्रीमान पं० मक्खनलाल जी देहलवी हैं ।